RNI No.: MPHIN/2018/77137

ISSN 2582-483X

पाठशाला भीतर और बाहर

Azim Premji University

अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय का प्रकाशन

वर्ष–4 अंक–13 सितम्बर 2022
तिमाही, भोपाल



पाठशाला भीतर और बाहर

सितम्बर, 2022 (वर्ष 4, अंक 13)

प्रकाशक

Azim Premji University

- **अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय**
  सर्वे नम्बर 66, बुरुगुंटे विलेज, बिक्कनाहल्ली मेन रोड,
  सरजापुरा, बेंगलूरु 562125 कर्नाटक
  Web: www.azimpremjiuniversity.edu.in

सम्पादकीय कार्यालय

- **सम्पादक**
  पाठशाला भीतर और बाहर
  अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन
  प्लाट नं. 163-164, त्रिलंगा कोऑपरेटिव
  सोसायटी, ई-8 एक्सटेंशन, त्रिलंगा,
  भोपाल, म.प्र. 462039 फोन-0755-4074060
  pathshala@apu.edu.in
  gurbachan.singh@azimpremjifoundation.org
  मो. 8226005057

डिज़ाइन एवं प्रिंट

- **गणेश ग्राफिक्स,**
  26-बी, देशबंधु परिसर,
  प्रेस काम्प्लेक्स,
  एम.पी.नगर, जोन-1
  भोपाल, म.प्र. 462011
  ganeshgroupbpl@gmail.com
  मो. 9981984888

पाठशाला भीतर और बाहर पत्रिका, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन का हिन्दी प्रकाशन है। यह शिक्षकों, शिक्षक प्रशिक्षकों, अन्य ज़मीनी कार्यकर्ताओं व शिक्षा से सरोकार रखने वाले सभी व्यक्तियों और संस्थाओं के लिए विचार-विमर्श का एक मंच है। पत्रिका का उद्देश्य शिक्षा के क्षेत्र में कार्यरत व्यक्तियों के अनुभवों व आवाज़ को जगह देकर शिक्षा के विमर्श को गहन व यथार्थपरक बनाना है।

अनुक्रम

सम्पादकीय

पाठशाला भीतर और बाहर के कुछ अंक किसी एक विषय विशेष पर केन्द्रित होते हैं, जिससे उस विषय विशेष के अलग-अलग पहलुओं पर सामग्री एक साथ मिल सके। इसी कड़ी में अंक 12 गणित विषय पर केन्द्रित था, हालाँकि इसमें अन्य विषयों पर लेख भी थे। वर्तमान अंक में भी कुछ लेख गणित से सम्बन्धित हैं क्योंकि यह दी गई समय सीमा के बाद प्राप्त हुए थे। *पाठशाला* का अगला अंक हम 'सामाजिक अध्ययन' विषय पर फ़ोकस करना चाहते हैं। अतः आप सभी से इस विषय पर अपने ज़मीनी अनुभव, उनका विश्लेषण व निहितार्थ इसके लिए लिखकर भेजने का आग्रह है। उम्मीद है कि आप अपने अनुभवों व उनपर मन्थन के आधार पर अपने विचारों को लिखेंगे और हमारे साथ साझा करेंगे।

पाठशाला के इस अंक में कुल 14 आलेख हैं। **परिप्रेक्ष्य** स्तम्भ के अन्तर्गत इस बार तीन आलेख हैं। पहला आलेख *'महुआ के बहाने एक शैक्षिक पड़ताल'* महेश झरबड़े का है। यह आलेख, किसी भी समुदाय के जीवन सन्दर्भ किस तरह शिक्षा के दायरे में लाए जा सकते हैं, इसका एक वास्तविक और जीवन्त उदाहरण है। लेखक ने बच्चों और समुदाय द्वारा रोज़ किए जाने वाले काम और इस काम में उनके द्वारा उपयोग किए जाने वाले ज्ञान को आधार बनाते हुए सीखने-सिखाने का काम बच्चों के साथ किया। अपने इस अनुभव में उन्होंने पाया कि बच्चे गणित और पर्यावरण की कई अवधारणाओं की अच्छी समझ रखते हैं। वह उनकी मौजूदा समझ और कक्षा प्रक्रिया में जुड़ाव क़ायम कर पाए और इससे सीखने-सिखाने को बच्चों के लिए अर्थपूर्ण बना पाए। दूसरा आलेख माया मौर्य का लिखा हुआ है जिसका शीर्षक है *'जातिगत असमानता का दर्पण है कहानी दिलेर बड़य्या'*। दिलेर बड़य्या कहानी पर चर्चा करते हुए यह आलेख बच्चों के साहित्य में सामाजिक यथार्थ की जगह और उसके निहितार्थ पर टिप्पणी करता है। इस स्तम्भ का तीसरा आलेख *'विज्ञान, वैज्ञानिक सोच और विज्ञान शिक्षण'* प्रोफ़ेसर गौहर रज़ा द्वारा दिए गए वक्तव्य पर आधारित है। लेख बताता है कि विज्ञान, इंसान और समाज का गहरा रिश्ता है। आज इंसान और समाज जिस मोड़ पर हैं उसमें विज्ञान की बड़ी भूमिका है। विभिन्न उदाहरणों द्वारा लेख दर्शाता है कि समाज व हर इंसान को विज्ञान और वैज्ञानिक सोच की अहमियत का अनुभव जीवन में होता ही रहता है लेकिन हम अपने इन अनुभवों को साफ़तौर पर पहचानने और उनको समझने की कोशिश भी नहीं करते। लेख दरकार करता है कि इंसान और इंसानियत को समझने के लिए विज्ञान को समझने और लोगों में वैज्ञानिक मानसिकता विकसित करने की ज़रूरत है।

शिक्षणशास्त्र स्तम्भ के अन्तर्गत पहला आलेख *'शुरुआती कक्षाओं में कहानी शिक्षण'* संध्या पाण्डेय का है। लेखिका बताती हैं कि शुरुआती कक्षाओं में कहानियों का सही चयन और कक्षा में मातृभाषा के लिए जगह बनाना बच्चों में सीखने की दिलचस्पी पैदा करता है। इसी स्तम्भ में दूसरा आलेख कमलेश चंद्र जोशी का है। *'शिक्षकों के साथ पढ़ने-लिखने का सफ़र'* में उन्होंने ऑनलाइन माध्यम के ज़रिए शिक्षकों के एक समूह के साथ अकादमिक आलेखों एवं साहित्यिक रचनाओं पर नियमित चर्चाओं के अपने अनुभव साझा किए हैं। आलेख कई महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं पर शिक्षकों के मत के आधार पर बात करता है। इन बिन्दुओं के कुछ उदाहरण हैं— किस-किस तरह की सामग्री उपलब्ध है, शिक्षकों को किस तरह की सामग्री अच्छी लगी और क्यों, साथ ही उनका समूह में पढ़ने का अनुभव कैसा था, आदि।

कक्षा अनुभव स्तम्भ में इस बार पाँच आलेख हैं। पहला आलेख *'बच्चों के नामों से पढ़ना-लिखना सिखाना'* मीनू पालीवाल का है। वे बताती हैं कि भाषा सीखने-सिखाने में कक्षा के बच्चों के नाम भी

एक अच्छी सहायक शिक्षण सामग्री हो सकते हैं। लेखिका ने अपनी कक्षा में बच्चों के नामों के साथ जो भी गतिविधियाँ कीं, उनका विवरण और विश्लेषण इस लेख में है। दूसरा आलेख अर्चना द्विवेदी का *'अख़बार के रास्ते भाषा शिक्षण'* है। इसमें उन्होंने अपनी भाषा की कक्षा में अख़बार को शिक्षण सामग्री बनाया है। उनका आलेख यह भी दर्शाता है कि बच्चे अख़बार तो जानते ही हैं, लेकिन वे उसके ढाँचे, उसमें आए समाचार, समाचारों का प्रस्तुतिकरण आदि से भी काफ़ी अच्छे से परिचित होते हैं। लेख में बच्चों के समाचारों को पढ़कर आप इसे महसूस भी कर पाएँगे। तीसरे आलेख, *'भाषा की कक्षा में रचनात्मकता : सहज प्रक्रियाओं की ओर'*, में अनिकेत कुमार कहानियों की किताबों को लेकर उसके विभिन्न पहलुओं के माध्यम से भाषा और रचनात्मकता पर काम करने का अपना अनुभव बताते हैं। चौथा आलेख संदीप त्रिपाठी का है। *'गणित शिक्षण में संख्या रेखा की अवधारणा : कभी चटपटी, कभी अटपटी'* शीर्षक से इस आलेख में उन्होंने संख्या रेखा की अवधारणा पर शुरुआती कक्षाओं में काम की ज़रूरत के बारे में तो बात की ही है, साथ ही यह भी बताया है कि बच्चों के साथ संख्या रेखा पर काम करने की दिशा में क्या-क्या किया जा सकता है। पाँचवाँ आलेख *'ए री सखी चलो भाषा सीखें'* मुकेश मालवीय ने लिखा है। इसमें उन्होंने पाठ्यपुस्तक में दी गई अमीर खुसरो की पहेलियों पर बच्चों के साथ किए काम का ब्योरा दिया है। उन्होंने बच्चों को ख़ुद ऐसी पहेलियाँ बनाने के मौक़े भी दिए और महसूस किया कि बच्चे शब्दों से खेलें तो उससे वे भाषा के बारे में भी समझते हैं।

विमर्श स्तम्भ के अन्तर्गत हृदय कान्त दीवान का लिखा लेख है। आलेख का शीर्षक *'गणित सीखने की बागडोर सीखने वाले के हाथ में हो'* है। इसमें उन्होंने गणित के शिक्षण-प्रशिक्षण में नज़रिएगत बदलाव की पैरवी की है। आलेख गणित शिक्षण को सहभागी बनाने एवं सीखने वाले के छोर पर सीखने की परिघटना होने की ज़रूरत को अहम बताता है।

पुस्तक चर्चा स्तम्भ में इस बार किताब *सामाजिक अध्ययन नवाचार : बच्चों के साथ मैंने भी सीखा* के बारे में अंजना त्रिवेदी ने बात की है। इस किताब के लेखक हैं प्रकाश कान्त और इसका प्रकाशन एकलव्य फ़ाउण्डेशन, भोपाल ने किया है। प्रकाश कान्त ख़ुद शिक्षक रहे हैं, और इस किताब में उन्होंने माध्यमिक कक्षाओं में हुए अपने सामाजिक अध्ययन शिक्षण के अनुभवों को पिरोया है। हर अध्याय इस विषय की एक ख़ास अवधारणा पर केन्द्रित है, और इसमें उस अवधारणा का कक्षा में प्रस्तुतिकरण, उसपर बच्चों के साथ हुई बात, उनके प्रश्न, और प्रश्नों पर किए गए काम का विस्तृत ब्योरा है।

साक्षात्कार स्तम्भ के अन्तर्गत इस बार शिक्षिका इंदु पंवार से मीमांशा की बातचीत सम्मिलित है। इंदु कई महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं पर अपने विचार साझा करती हैं। जैसे वो बताती हैं कि उनके अनुसार एक शिक्षक के लिए पढ़ना क्यों ज़रूरी है, बच्चों में पढ़ने का शौक़ कैसे पैदा हो व क़ायम भी रहे, प्रधानाध्यापिका के रूप में एक शिक्षक की भूमिका क्या हो और शिक्षक व बच्चों के बीच मानवीय रिश्ता कैसा हो?

संवाद स्तम्भ में इस बार का विषय है : *'इस वर्ष स्कूल में सीखने के विभिन्न स्तरों पर चुनौतियाँ व सम्भव उपाय'*। एक लम्बी तालाबन्दी के बाद अब स्कूल खुले हैं तो बच्चों के साथ सीखने-सिखाने के काम की शुरुआत कैसे हो, जो वे भूल चुके हैं उसपर उनके साथ कैसे काम किया जाए, क्या दो वर्षों के दौरान जो लॉस हुआ है उसकी भरपाई हो भी सकती है, और यदि हाँ, तो किस हद तक और कैसे? इस तरह के सवाल इस संवाद में सामने आए हैं।

अन्त में, **पाठक चश्मा** स्तम्भ के तहत पाठकों की विभिन्न लेखों पर प्रतिक्रियाएँ हैं। आप सभी पाठकों से गुज़ारिश है कि आप भी *पाठशाला* के अंकों में प्रकाशित लेखों पर अपनी प्रतिक्रियाएँ हमारे साथ साझा करें।

जैसा की शुरुआत में ज़िक्र किया गया है, *पाठशाला भीतर और बाहर* का अगला अंक सामाजिक अध्ययन से सम्बन्धित होगा, आपसे इस विषय पर लिखने की पुनः गुज़ारिश है। *पाठशाला भीतर और बाहर* के आगे आने वाले अंकों के लिए आपके लेखों का इन्तज़ार रहता है।

सम्पादक मण्डल

महुआ के बहाने एक शैक्षिक पड़ताल

महेश झरबड़े



मार्च का महीना यानी स्कूली बच्चों की परीक्षा का समय। तपती दोपहर और पसीने से सराबोर करती गर्मी।

प्राथमिक शाला कोयलबुड्डी के शिक्षक सगनसिंह अखंडे स्कूल पहुँचते हैं। दो दिन बाद स्कूल में 5वीं कक्षा के बच्चों की परीक्षा है। करिश्मा आज स्कूल नहीं आई है। सर उसके घर फ़ोन करते हैं। उसकी माँ बताती है कि वो महुआ बीनने गई है। सर उसे ढूँढ़ते हुए उसके खेत पहुँचते हैं। करिश्मा खेत में महुआ बीनती मिलती है। परीक्षा के दो दिन शेष हैं और करिश्मा सुबह 6 बजे से शाम तक महुआ बीन रही है। क्या महुआ की अहमियत परीक्षा से ज़्यादा है?

चमेली 9वीं कक्षा में पढ़ती है। आज उसका पेपर है। उसे परीक्षा देने 8 किलोमीटर दूर साइकिल चलाकर जाना है। उसके परिवार में 6 लोग हैं पर कोई भी घर पर नहीं है। उसे सबके लिए खाना पकाना है, अपनी तैयारी करनी है और 10 बजे तक परीक्षा केन्द्र पहुँचना है। वो कहती है, "घर के सब लोग दोपहर तक लौटकर आएँगे, भूखे होंगे तो खाना बनाना ही पड़ेगा। सब जंगल में हैं और महुआ बीन रहे हैं। मैं परीक्षा देकर आऊँगी फिर पेड़ के नीचे जाऊँगी। महुआ तो लाना पड़ेगा न!"



हांड़ीपानी गाँव में 4-5 बच्चे गलियों में घूम रहे थे। उनसे पूछा, "किसे ढूँढ़ रहे हो?" उन्होंने बताया, "सर और मैडम स्कूल में बैठे हैं। बच्चों को बुलाने आए हैं पर सबके घर बन्द हैं, सब महुआ बीनने गए हैं कोई मिल ही नहीं रहा है।"

आरती, रानी, प्रमिला, अर्चना, कविता और माधुरी का कक्षा आठवीं का पेपर था। लौटते समय मैंने उन्हें रोक कर पूछा, "क्या आज शाम को हम लोग मिल सकते हैं?" इसपर कविता बोली, "सर, टाइम ही नहीं है।"



"कहाँ गया टाइम", पूछने पर बोली, "पूरा टाइम महुआ बीनने में जा रहा है।"

मार्च के दूसरे सप्ताह से अप्रैल के दूसरे सप्ताह तक मध्य प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों में ये रोज़ का आलम होता है। इन महीनों में ये समय थोड़ा कम-ज़्यादा या आगे-पीछे हो सकता है, पर अमूमन इन्हीं महीनों के 15-20 दिन पूरा ग्रामीण जीवन जंगलों में पारिवारिक आय के लिए संघर्ष कर रहा होता है।

ज़्यादातर पेड़ अपने फलों के कारण पहचाने जाते हैं। दरअसल ये गुल्ली का पेड़ होता है और महुआ इसका फूल है फिर भी इस पेड़ को महुआ के नाम से ही ज़्यादा जाना जाता है। महुआ मध्य भारत के उष्णकटिबन्धीय पर्णपाती वन का एक प्रमुख पेड़ है जिसका वैज्ञानिक नाम मधुका लोंगफोलिया (Madhuca longifolia) है।

सम्भवतः हम में से काफ़ी लोग महुआ के बारे जानते हैं और यह भी कि महुआ ग्रामीण जीवन को किस हद तक प्रभावित करता है। फिर भी इस लेख के बहाने महुआ से जुड़े कुछ पहलुओं पर अपने अनुभव साझा कर रहा हूँ। यूँ तो महुआ कई आयामों से समुदाय का अभिन्न अंग है पर मैं शिक्षा के इर्द-गिर्द महुआ के प्रभाव को यहाँ रखने का प्रयास कर रहा हूँ।

स्कूली बच्चे और महुआ

ईशाना दूसरी कक्षा में पढ़ती है। उसने अपने पापा से कहा है कि उसे साइकिल ख़रीदनी है, लेकिन महुआ शुरू होने के बाद अब वो कह रही है, "मैं अपने पैसे से अपनी साइकिल ख़रीदूँगी।" इसलिए वो रोज़ सुबह एक बड़ी डलिया और एक चुरकू (महुआ बीनने में इस्तेमाल होने वाली छोटी डलिया) लेकर जंगल जाती है, महुआ बीनकर वापिस आती है और फिर तैयार होकर स्कूल पहुँचती है। ईशाना की तरह ही कई बच्चे हैं जो इस समय डबल शिफ्ट में काम करते हैं। कई बार ये थोड़ा कष्टदायक होता है पर बच्चों के सन्दर्भ में ज़्यादातर इसका रिश्ता ख़ुशी और उत्सुकता से ही जुड़ता है। बच्चे इस वक़्त का बेसब्री से इन्तज़ार करते हैं।

स्कूल की तरह ही महुए का मौसम भी बच्चों को काफ़ी कुछ सिखाता है। सुबह जल्दी जागना, जंगल जाना, अपनी क्षमतानुसार महुआ बीनना, अपने हिस्से का महुआ सुखाना, बोरी में भरकर रखना, परिवार की मौजूदगी में अपना महुआ बेचना और फिर उसी रुपए से अपनी



पसन्दीदा चीज़ें व सामग्री ख़रीदना। बहुत कम समय में कितना कुछ दे देता है यह मौसम बच्चों को! एक ही परिवार में रहने वाले सभी लोग मिलकर जंगल जाते हैं लेकिन अपने-अपने हिस्से का महुआ अलग रखते हैं। इसके एक हिस्से का उपयोग अपने पसन्दीदा सामान ख़रीदने और दूसरे का परिवार के लिए इंजिन, मोटर पम्प, फ्रिज, बाइक जैसा कोई बड़ा सामान ख़रीदने में होता है। एक समय में सब लोग अलग-अलग होते हैं और दूसरे वक़्त में अलग-अलग होकर भी एक साथ। राष्ट्रीयता के लिए अनेकता में एकता का सन्देश देने वाला इससे अच्छा उदाहरण भला और क्या हो सकता है!

जैसे स्कूल में कोई पाठ पढ़कर बच्चे ख़ुश होते हैं उनका आत्मविश्वास बढ़ता है, ठीक उसी तरह एक बोरी महुआ इकट्ठा करना भी उन्हें आत्मविश्वास और सन्तोष से भर देता है। किसने हर दिन कितना महुआ बीना, इस सप्ताह उसकी बोरी कितनी भर पाई, महुआ बेचकर उसे क्या लेना है, इस तरह की चर्चाएँ इन दिनों बच्चों की ज़ुबान पर होती हैं। साथ ही रात अँधेरे के समय जंगल में जाने के दौरान भालू का मिलना, जंगली सूअर से सामना, पत्तों में साँप का दिख जाना जैसे अनगिनत वास्तविक क़िस्से-कहानियाँ इन दिनों समुदाय में सुनने को मिल जाते हैं। महुए का मौसम अपने ही परिवेश में रहते हुए सन्दर्भ के साथ सीखने का पूरा माहौल देता है, पर अफ़सोस प्राथमिक कक्षाओं के पाठ्यक्रम में महुआ से जुड़ा एक भी पाठ नहीं है। *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* अपने परिचय में कहती है, "शिक्षा शिक्षार्थियों के जीवन के सभी पक्षों और क्षमताओं का सन्तुलित विकास करे, इसलिए पाठ्यक्रम में विज्ञान, गणित के अलावा बुनियादी कला, शिल्प, मानविकी, खेल और फिटनेस, भाषाओं, साहित्य, संस्कृति और मूल्य का अवश्य ही समावेश किया जाए।"[1] और यह भी कि *राष्ट्रीय शिक्षा नीति* प्रत्येक व्यक्ति में निहित रचनात्मक क्षमताओं के विकास पर विशेष ज़ोर देती है।[2] ख़ासतौर पर ग्रामीण और आदिवासी समुदायों में महुआ एक संस्कृति ही है जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी आगे बढ़ रही है। पेड़





चर्चाएँ हो सकती हैं। ये चर्चाएँ न सिर्फ़ ग्रामीण जीवन को समझने में बच्चों की मदद कर सकती हैं, बल्कि शिक्षक और बच्चों के बीच भी आपसी रिश्ते को भी और मज़बूत करेंगी। *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005* के अनुसार, "पर्यावरण के ज्ञान का एक बड़ा हिस्सा भारत के नंगे पैर चलने वाले परिस्थिति विज्ञानियों और ज़मीनी लोगों से भी सम्बन्ध रखता है।"[3] ये तथ्य इस परिवेश में काम करते हुए मुझे काफ़ी सच लगने लगा है। पर सवाल अब भी वही है कि विभिन्न परिस्थितियों के साथ अन्तःक्रिया करते हुए ग्रामीण समुदाय के बने ज्ञान, जंगलों के साथ रोज़ समय गुज़ारते हुए हासिल ज्ञान और अपनी कई पीढ़ियों से मिले ज्ञान की स्कूल में कोई अहमियत नहीं है। समाज, समुदाय लिखी हुई बातों को ही ज्ञान मानता है और लिखी हुई पाठ्यपुस्तकों में इस ज्ञान, इन अनुभवों के लिए बहुत सीमित जगह है। जब मैं बच्चों और उनके अभिभावकों से इस बारे में बात करता हूँ तो सभी यह जानकर ख़ुश होते हैं कि उनके पास भी कई तरह का ज्ञान है और यह ज्ञान भी समाज के लिए एक महत्त्वपूर्ण धरोहर है।

के नीचे दिनभर बैठकर महुआ बीनना एक महत्त्वपूर्ण रचनात्मक क्षमता है, पर अभी भी सवाल ये है कि क्या इतने महत्त्वपूर्ण विषय को कक्षा में कभी जगह मिल पाएगी?

महुआ और मौसम विज्ञान

महुआ के साथ मौसम का ज्ञान बहुत क़रीब से जुड़ा है। ये सामुदायिक ज्ञान है जो मौखिक बातचीत के माध्यम से ही बच्चों में हस्तान्तरित होता रहा है। जिस रात गर्मी तेज़ होगी, महुआ रात में ही टपक जाता है। उस दौरान लोग रात को लगभग 2 बजे या उससे भी पहले ही जंगल चले जाते हैं और महुआ बीनकर सुबह जल्दी लौट आते हैं। इसके विपरीत, जिस रात तुलनात्मक रूप से ठण्डा मौसम होता है, महुआ नहीं टपकता और तब लोग सुबह-सुबह जंगल जाते हैं और दोपहर बाद या शाम तक महुआ लेकर घर लौटते हैं। मौसम, प्रकृति और इंसान के बीच की यह साझी समझ कई सदियों से साथ-साथ सफ़र कर रही है।

जब गर्मी होती है तो महुआ जल्दी क्यों टपकता है? ठण्ड होने पर महुआ देर से क्यों टपकता है? गर्मी या ठण्ड पड़ने से महुआ बीनने वालों के काम पर कैसे असर होता है? ऐसे आधारभूत सवालों पर बच्चों के साथ लम्बी

और तब वे यह भी समझ पाते हैं कि स्कूलों में, कक्षाओं में इस तरह की चर्चाओं के लिए जगह बनाना ज़रूरी है। *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* के लागू होने के बाद ये उम्मीद भी है कि बच्चों की प्रारम्भिक शिक्षा उनकी क्षेत्रीय भाषा में ही सम्पन्न होगी। उस स्थिति में, उस क्षेत्र को प्रभावित करने वाले सामाजिक, प्राकृतिक और भौगोलिक कारकों को पढ़ाई का विषय बनाया जाएगा तो अधिगम की प्रक्रिया में यह मील का पत्थर साबित हो सकता है। जो काम हमारे जीवन का हिस्सा है उसके बारे में पढ़ने, लिखने और चर्चा करने में सम्भवतः शिक्षक को उतनी मेहनत नहीं लगेगी जितनी आमतौर हिन्दी या पर्यावरण के किसी अनजान पाठ को पढ़ाने में

लगती है। *कोठारी आयोग की रिपोर्ट* में भी कहा गया है, "प्राथमिक स्कूलों में विज्ञान पढ़ाने का मुख्य यह उद्‌देश्य होना चाहिए कि भौतिक और जैव पर्यावरण में मुख्य तथ्यों, सिद्धान्तों और प्रक्रियाओं की सही समझ का विकास हो सके।"[4]

कक्षा 11वीं में पढ़ने वाली रुकमनी कहती है, "जब पतझड़ शुरू होता है, पेड़ से पत्तियाँ झड़ने लगती हैं और पेड़ सुन्दर-सुन्दर गुच्छों से लद जाता है, इसे 'कूँची' कहते हैं। जिस पेड़ में जितनी ज़्यादा कूँचियाँ बनती हैं उससे उतना ज़्यादा महुआ टपकने की सम्भावना होती है। जब महुआ गिरना बन्द हो जाता है तो पेड़ पर छोटी-छोटी लाल रंग की पत्तियाँ आती हैं और कुछ दिन के लिए पेड़ एकदम लाल रंग से सजा दिखाई देता है। बाद में पत्तियाँ हरी हो जाती हैं और फिर धीरे-धीरे फल आना शुरू होते हैं। इसके बाद हरियाली के साथ पेड़ गुल्ली (महुआ का फल) से लदा दिखाई देता है। हम फिर से ख़ुश होते हैं और फिर से जंगल जाने की तैयारी करते हैं। अब गुल्ली बीनने का समय है, यह भी बाज़ार में बिकेगी क्योंकि इससे तेल निकाला जाता है।"

यही प्रक्रिया लगभग सभी पेड़ों के साथ होती है, पर महुआ का पेड़ बच्चों के जीवन से सीधा-सीधा जुड़ता है इसलिए ये प्रक्रिया वे बहुत क़रीब से देखते-समझते हैं। प्रक्रिया लेखन या कोई घटना कैसे होती है इसे समझना, ऑब्ज़र्व करना और प्रस्तुत कर पाना विज्ञान अध्ययन का महत्त्वपूर्ण आयाम माना जाता है; लेकिन क्या ये आसान है? बेशक ये मुश्किल है पर स्कूल में इसकी सम्भावना ज़रूर खोजी जा सकती है। यही बात तो *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* भी कहने की कोशिश कर रही है। "यह ज़रूरी हो गया है कि जो कुछ सिखाया जा रहा है बच्चे उसे तो सीखें ही और साथ ही वे सतत सीखते रहने की कला भी सीखें। इसलिए शिक्षा में विषयवस्तु बढ़ाने की जगह ज़ोर इस बात पर होने की ज़्यादा ज़रूरत है कि बच्चे समस्या-समाधान और तार्किक रूप से सोचना सीखें।"[5] अपने आसपास हो रही घटनाओं पर तो बच्चों की पारखी नज़र होती ही है, ज़रूरत है सिर्फ़ उसे नज़रिया देने की। एक बार वे समझ गए कि उन्हें क्या देखना है और कैसे, उसके बाद शिक्षक के बिना भी वे कई काम कर सकते हैं।

महुआ और गणित

महुआ का हिसाब रखने के लिए बच्चे, किशोर या गाँव वाले जिस टूल का इस्तेमाल करते हैं उसका नाम है कट्‌टी और बोरी। कविता बताती है, "जिस बोरी में 25 किलो कनकी (टूटे चावल) आती है उस बोरी में 10-12 किलो सूखा महुआ समा जाता है। इसको हम कट्‌टी बोलते हैं और 50 किलो वाली बोरी में 30-32 किलो महुआ आता है। जब हमारी कट्‌टी भर जाती है तो हम बोरी में महुआ भरना शुरू करते हैं। अभी महुआ 30 रुपए किलो है, थोड़ा रुक कर



बेचेंगे तो 32 रुपए किलो बिक जाएगा।"



एक दिन शाम में बच्चों से हुई बातचीत में उन्होंने महुआ से जुड़ा अपना हिसाब बताया।

6वीं कक्षा के अरुण ने बताया, "मैंने महुआ बेचकर 500 रुपए के पेंट-शर्ट, 150 की टी-शर्ट, 270 की सैंडिल, 50 का बेल्ट ख़रीदा और 40 रुपए में बाल कटवाए। अभी 3 कट्टी महुआ बचा है।"

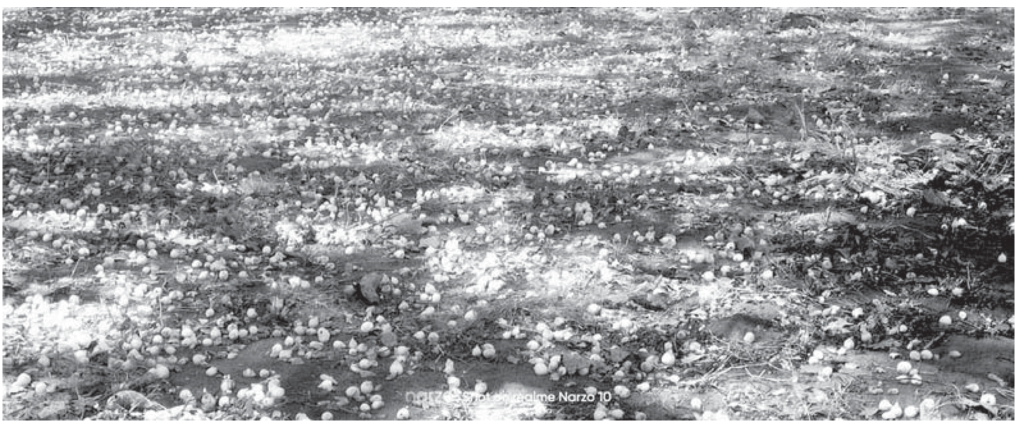
7वीं के संतुलाल ने बताया, "मैंने 2000 रुपए के महुए बेचे। 800 रुपए का कोट ख़रीदा, 200 के दो लोअर लिए, 400 का एक जीन्स लिया और 600 रुपए माँ को दे दिए। अभी 4 कट्टी महुआ बचा है। स्कूल शुरू होगा तब बेचूँगा किताब-कॉपी के लिए।"

पहली कक्षा की कृष्णा ने बताया कि उसने अभी एक झोला (लगभग 10 किलो) महुआ बेचकर पैर पट्टी (पायल) ख़रीदी है। ऐसे ही 9वीं की सुशीला ने बताया कि उसने 800 रुपए का जीन्स-टॉप व 150 का हार ख़रीदा और अभी 4 बोरी महुआ बेचना है।

ऐसे ही 22 दूसरे बच्चों ने भी महुआ बीनने, बेचकर सामान ख़रीदने और बचे हुए महुए का क्या करना है, इसकी जानकारी दी।

इस पूरी प्रक्रिया में सबसे ख़ास बात ये रही कि लगभग सभी बच्चों को ये पता था कि उन्होंने कितना महुआ बीना, कितना बेचा, कितने रुपए का कौन-सा सामान ख़रीदा, कितना महुआ बचा है और बचे हुए महुए का क्या करना है? महुआ की क़ीमत बढ़ने के लिए कब तक रुकना है, यदि क़ीमत बढ़ी तो क्या फ़ायदा होगा, घट गई तो कितने का नुक़सान, आदि। इस पूरी प्रक्रिया में जोड़ना, घटाना या कम करना, गुणा और भाग करना, लाभ-हानि आदि जैसी गणित की मूलभूत अवधारणाओं से रोज़ ही उनका सामना होता रहता है। अभिभावक भी बच्चों से अकसर ये पूछते देखे जाते हैं कि '29 रुपए को भाव से 4 किलो मौवा कित्तो को होयिगो;' या ये कि 'मोड़ा (लड़का) मैंने 31 को भाव से 5 किलो दुकान में दियो, एक 20 वाला सोडा (निरमा पैकेट), 30 के भाव से दो किलो कनकी लायो तो कित्तो रुपया होगो और कित्तो बचो।'

सम्भवतः महुआ ही ऐसा वक़्त होता है जब बच्चों और माता-पिता के बीच सबसे ज़्यादा



गणितीय बातचीत होती है। इसका एक पहलू यह भी है कि इन दिनों बच्चे अपने घर के लोगों से अपने ख़र्चे के पैसे नहीं माँगते बल्कि कई बार परिवार वालों को आइसक्रीम, लड्डू, नमकीन, आदि ख़रीदकर देते हैं। आर्थिक रूप से सशक्त होने और अपनों से बड़ों को कुछ देकर गौरवान्वित होने का अहसास वे इस दौरान कई बार जीते हैं।

अन्त में सिर्फ़ इतना ही कह सकता हूँ कि महुआ / गुल्ली का पेड़ ग्रामीण परिवेश को कई तरह से समृद्ध करता है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था का यह प्रमुख आधार है। इससे कई तरह के खाद्य पदार्थ और पेय बनाए जाते हैं। बच्चों के जीवन से इसका काफ़ी क़रीबी रिश्ता है, इससे जुड़ी चर्चा को कक्षा में शामिल किया जाना एक संस्कृति को गौरवान्वित करना होगा और समाज के अनुसूचित जनजाति कहे जाने वाले वर्ग के प्रति सम्मान। *राष्ट्रीय फ़ोकस समूह के आधार पत्र* में 'सम्मान' को परिभाषित करते हुए कहा गया है, "दूसरे का सम्मान करने तथा उसके प्रति न्याय करने का एक अर्थ यह भी है कि उससे जुड़ी ख़ास संस्कृति या समुदाय के प्रति सम्मान तथा न्याय।"[6]

सन्दर्भ

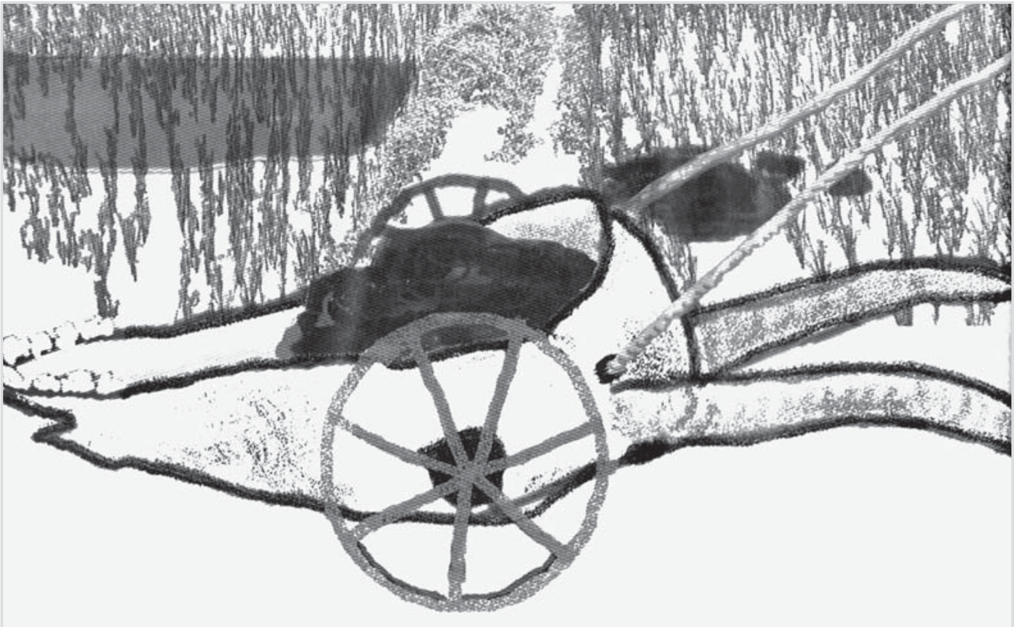
1. *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020*, परिचय
2. *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020*, परिचय
3. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005*, आवास और सीखना, सार संक्षेप
4. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005*, आवास और सीखना, पेज 2
5. *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020*, परिचय
6. *शिक्षा के लक्ष्य : राष्ट्रीय फ़ोकस समूह का आधार-पत्र*

महेश झरबड़े पिछले 15 सालों से बच्चों व युवाओं के साथ शिक्षा सम्बन्धी कामों से जुड़े रहे हैं। एकलव्य के शिक्षा प्रोत्साहन केन्द्र और मुस्कान के जीवन शिक्षा पहल स्कूल में बच्चों व युवाओं के विभिन्न मुद्दों को शिक्षा के साथ जोड़कर देखने का प्रयास किया है। आदिवासी और वंचित तबक़ों के लिए किस तरह की शिक्षा हो, ये समझने का प्रयास जारी है। आपने सिनर्जी संस्थान, हरदा के साथ जुड़कर इस मुद्दे को गहराई से समझने की कोशिश भी की है। बच्चों, युवाओं व ग्रामीण विकास के मुद्दों पर पढ़ने और लिखने में रुचि है। वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी फ़ॉउण्डेशन मध्यप्रदेश के खरगोन ज़िले में कार्यरत है।

सम्पर्क : mjharbade@gmail.com

जातिगत असमानता का दर्पण है कहानी 'दिलेर बड़य्या'

माया मौर्य



यह कहानी मादिगो समुदाय के बारे में है। मादिगो समुदाय का मुख्य काम चमड़े से चप्पल बनाना है। कहानी जातिगत काम के प्रति लोगों का नज़रिया बयाँ करती है और दो जाति के लोगों के बीच के भेदभाव की तरफ़ इशारा करती है। कहानी पढ़ते हुए इस समुदाय के काम व रहन-सहन के बारे में भी पता चलता है। मादिगो समुदाय के लोगों का मुख्य काम चमड़ा निकालने और उससे चप्पल बनाने का है। वे ज़मींदारों के लिए भी चप्पल बनाते हैं लेकिन चप्पल बनाने में माहिर होने के बावजूद उन्हें ज़मींदारों के सामने चप्पल पहनने की अनुमति नहीं है। यदि ज़मींदार सामने आए तो उन्हें अपनी चप्पल निकालनी ही होगी और नंगे पैर ही रहना / चलना होगा।

इस कहानी का मुख्य पात्र है बड़य्या। वह एक मात्र लड़का है इस समुदाय का जो स्कूल जाता है। समुदाय के सभी लोग उसे पसन्द करते हैं, बड़े भी और बच्चे भी। उसे खिलौने बनाना अच्छा लगता है और वह हड्डियों के खिलौने बनाने में माहिर भी है। जब उसके पिता मरे हुए जानवर की खाल निकालते हैं तभी वह उस जानवर की हड्डियाँ चुन लेता है। और उन्हें सुखाकर अपने लिए खिलौने बनाता है, उसका सबसे प्यारा खिलौना है जानवर की खोपड़ी की गाड़ी। जिससे वह 'गाड़ी भरो' का खेल खेलता है।

जातिगत असमानता का दर्पण है ये कहानी

दिलेर बड़य्या की यह कहानी कक्षा के अन्दर, गलियारों में, मोहल्ले में हो रहे शोषण,

ऊँच-नीच के व्यवहार और जातिगत भेदभाव पर टिप्पणी करती है। मसलन, बड़य्या स्कूल जाता है लेकिन कक्षा में शिक्षक उसे सबसे पीछे ज़मीन पर बैठाते हैं। शिक्षक को लगता है कि बड़य्या बाक़ी विद्यार्थियों को अशुद्ध न कर दे। हालाँकि बड़य्या शिक्षक की बात ध्यान से सुनता है, गृहकार्य भी पूरा करता है और कक्षा में पाठ भी सुनाता है, लेकिन तब भी उसका कक्षा में स्थान आगे नहीं आ पाता। कहानी इस तरह के पक्षपात को दर्शाते हुए शिक्षक के रवैए पर चोट करती है और स्कूल व कक्षा के भीतर ऐसे बच्चों के साथ होने वाले बर्ताव पर सवाल उठाती है। ऐसा लगता है कि बड़य्या शिक्षक की भूमिका को आदर्श के रूप में देखता है। वह उसके व्यवहार से नाख़ुश है परन्तु पढ़ने की चाह के कारण स्कूल जाना जारी रखता है। शिक्षक का व्यवहार उसे हताश तो करता है, उसके बावजूद वह सीखना चाहता है। इसीलिए शायद, वह अपमान को भी झेलते हुए कक्षा में अपने-आप को समायोजित कर पाने की जद्दोजहद करता है।

कहानी का एक और अंश है जो और अधिक चुभता है और सवाल भी खड़े करता है, वह है बड़य्या जब अपनी माँ के साथ साँझ ढले लकड़ी बीनने जाता है। 'माँ और बड़य्या तुअर के खेत में लकड़ी बीन रहे होते हैं और तभी पटेल वहाँ आ जाता है, माँ को अपनी चप्पल उतारनी पड़ती है, लेकिन समय कम है, वह लकड़ी बीनने का काम जारी रखती है, कँटीली लताएँ उसके पैर में चुभती जाती हैं, और तब तुअर का एक लम्बा-सा ठूँठ उसके पैर में चाकू की तरह घुस जाता है, ख़ून बहने लगता है, माँ बड़य्या को पुकारती है।' बड़य्या माँ की हर सम्भव मदद करता है, उसे माँ के पैर की पीड़ा का पूरा भान है, और तभी वो सवाल जो उसे हमेशा कचोटता था, वह माँ से पूछता है 'पटेल के सामने आते ही तुम्हें अपनी चप्पल क्यों उतारनी पड़ती है?' सवाल जायज़ है, किसी ऐसी जगह पर जहाँ चप्पल पहनना ज़रूरी है, जहाँ पैर में काँटे चुभने का ख़तरा है वहाँ चप्पल उतारने का क्या तुक? शायद कोई भी समझदार इंसान किसी को यही राय देगा कि ऐसी जगह पर चप्पल पहनी जाए।

पहलू जो अच्छे लगे

भाषा शैली ऐसी है कि पढ़ते ही घटना का चित्र सामने आ जाता है। साथ ही बहुत-सी बातें कहानी में पढ़कर समझ में आती हैं, लेकिन कई अनकही बातें भी पढ़ते-पढ़ते ज़ेहन में आने लगती हैं। परिवार के लोगों का, समुदाय के लोगों का जुड़ाव इस कहानी में दिखता ही है। और यह भी महसूस होता है कि हर परिवार और समुदाय में बहुत कुछ शायद समान होता है। माता-पिता का बच्चों से प्यार और जुड़ाव, बच्चों का अपने आसपास के वातावरण से जुड़ाव और लगाव और उस माहौल में उनका सीखना, बच्चों के सटीक और सोचने को विवश कर देने वाले सवाल, बच्चों के खेल, उनकी बातचीत, वयस्कों के बारे में उनकी समझ सबकुछ इस कहानी में साफ़ झलकता है।

साथ-ही-साथ कहानी मादिगो समुदाय की चुनौतियों को भी प्रस्तुत करती है। चर्मकार समुदाय के परिवेश और उनके जीवन संघर्ष का प्रतिनिधित्व करती है और उस समुदाय की बार-बार अवहेलना करने वाले पहलू दिखाती है। ख़ासकर, जब माँ को चोट लगती है उस दौरान माँ और बेटे की बातचीत काफ़ी कुछ कह जाती है। यह पाठक के लिए ऐसे सवाल भी छोड़ती है जो ऐसे भेदभाव पर सोचने के लिए विवश करते हैं।



चित्रों की भाषा

कहानी के चित्र काफ़ी निर्भीक हैं और बहुत कुछ बयाँ कर देते हैं। पहला चित्र इस समुदाय द्वारा किए जाने वाले काम की पृष्ठभूमि में बड़य्या और उसकी माँ का है।

चित्र समुदाय के काम और परिवेश को तो बताता ही है, साथ ही बड़य्या किस उम्र का लड़का होगा, उसका माँ के प्रति प्रेम आदि की छवि भी ज़ेहन में बनाता है। इस पहले चित्र में पूरे मोहल्ले में आदमी एक ही तरह का काम कर रहे हैं और बच्चे बाहर खेल रहे हैं। बहुत-से चित्रों में मरे हुए मवेशियों की हड्डियों से बनी हुई गाड़ी और दूसरे खिलौने हैं और उसी से बने औज़ार हैं। एक अन्य चित्र में मरी हुई गाय है जिसके अन्दर बच्चे बैठकर पढ़ रहे हैं। गाय का शरीर एक आउटलाइन की तरह दिख रहा है जिसके अन्दर बच्चे, उनकी पाठशाला और पढ़ाई-लिखाई सबकुछ है। यह प्रतीक है इस बात का कि समुदाय उन्हीं हालात में जीने को मजबूर है। उनकी शिक्षा और पूरा जीवन मरी हुई गाय के भीतर है। यह आउटलाइन बार-बार उनको उसी में धकेल रही है। इन चित्रों में जो रंग है वो हल्का गुलाबी (माँस के रंग का) है जो वहाँ की परिस्थिति और काम को बयाँ कर रहा है।

हड्डियों से बन्दूक, धनुष, हिरण जैसे कई खिलौने बने हैं। बच्चों के खेल-खिलौने और मनोरंजन सबकुछ मरे जानवरों की हड्डियों से है। एक दूसरा पहलू यह भी कि हड्डियों से भी तरह-तरह की कलाकृतियाँ बनाई जा सकती हैं। यह उन बच्चों की सृजनशीलता की झलक है।

बड़य्या अपनी माँ के लिए जो चप्पलें बनाता है वह किस तरीक़े से उसे काँटों से बचाती हैं, यह आख़िरी पेज में स्पष्ट है। काँटों के बीच पैर और चप्पल है। एक चित्र और है जिसमें ज़मींदार और दिलेर बड़य्या की माँ और कुत्ता है और बीचों बीच एक बड़ा-सा पैर है। इस पूरे पेज को लाल रंग दिया गया है जो ख़ून के साथ-साथ प्रतिरोध को भी प्रदर्शित कर रहा है। मिट्टी, खेत, गन्दगी, कचरा और मरे जानवरों के अवशेष वाले माहौल को दिखाने के लिए मटमैले-धूसर रंग का इस्तेमाल किया गया है। कोई भी चेहरा नैन-नक़्श के साथ नहीं बनाया गया है जो यह इशारा करता है कि ये कोई भी हो सकता है।

बतौर पाठक मेरा अनुभव

इस कहानी को पढ़कर "खिलौनेवाला घोड़ा" कहानी याद आती है जिसमें बच्चे अपने परिवेश के अनुसार अपने खिलौने ख़ुद ही गढ़

लेते हैं। जैसे इस कहानी में बच्चे जानवरों की खोपड़ी से खिलौने बनाते हैं।

अन्याय के ख़िलाफ़ आवाज़ उठाने जैसे छोटे-छोटे बीज बचपन से उसकी माँ उसमें बो रही थी। उसकी माँ का एक कथन है, "हमें अगर ज़मींदार से लड़ना है तो जाति, ताक़त और ज़मीन चाहिए होगी। यदि ताक़त और ज़मीन नहीं है तो हमें जातिगत भेदभाव को ख़त्म करना पड़ेगा", यह काफ़ी प्रभावित करता है और पूरी सामाजिक व्यवस्था की असलियत खोलकर रखता है। वह यही चाहती थी कि सारे मादिगो समुदाय को एकजुट होना पड़ेगा और जाति व्यवस्था ख़त्म होनी चाहिए। वह यह उम्मीद जगाती है कि ज़मींदार लोग जैसा चाहते हैं हम मादिगो जाति के लोग वैसा ही करते रहें, यह ज़्यादा दिन तक नहीं चलेगा।

जिस तरीक़े से बड़य्या ने अपनी माँ के लिए चप्पलें बनाईं और उन्हें पहनने के लिए मजबूर किया, यह समाज में बदलाव लाने की ओर आगे बढ़ रहा है। उसकी माँ गाँव में सभी को अपने बेटे की क़ाबिलियत के बारे में बताती है कि उसका बेटा अपने पिता के समान ही चप्पल बनाने में माहिर है। इसके आगे कहानी कुछ और भी कहना चाहती है पर माँ के माध्यम से अपनी जाति की ख़ासियत व हुनर बताकर रह जाती है।

कहानी थोड़ी चुभ रही है। ऐसा इसलिए लग रहा है क्योंकि बड़य्या अपनी माँ के लिए चप्पलें बनाता है और पहनाता भी है, लेकिन ज़मींदार के सामने चप्पल पहनकर माँ को जाते हुए कहानी में नहीं दिखाया जाता। मैं सोचती हूँ कि अगर वह वापस ज़मींदार के सामने चप्पल पहनकर जाती तो ज़मींदारों को एक गहरी चोट लगती। लेकिन इस हिस्से को नहीं लिखा गया है। एक पाठक के तौर पर मुझे ऐसा लग रहा है कि क्या इस हिस्से को छुपा दिया गया है? मुझे कहानी से इससे आगे की उम्मीद थी।

यह कहानी एक ऐसे समुदाय की है जिसके बारे में कम ही जानने को मिलता है और बच्चों की किताबों में शायद ही ऐसी कहानियाँ शुमार हों। लेखक बचपन से बड़े होने तक की कहानी, जैसे– खेल का जुगाड़, स्कूल में भेदभाव आदि को केन्द्र में रखते हैं। लड़के-लड़की के बीच भेदभाव को भी उजागर किया गया है। समाज में हाशियाकृत वर्ग में होते हुए भी वे अपने आत्मसम्मान को बनाए रखते हैं और अपनी ताक़त का प्रतिनिधित्व भी करते हैं।

किताब का नाम : फिर जीत गई ताटकी और दिलेर बड़य्या, **कहानी का नाम :** दिलेर बड़य्या, **मूल तेलुगु कहानी :** गोगु श्यामला
अँग्रेज़ी से हिन्दी अनुवाद : सुशील जोशी, **चित्रांकन :** पूजा वैश, **प्रकाशक :** एकलव्य, **मूल्य :** ₹110

माया मौर्य पिछले 15 साल से मुस्कान संस्था, भोपाल के साथ एक शिक्षिका के रूप में कार्य कर रही हैं। वे बस्ती सेंटर पर कामकाजी और स्कूल ड्रॉपआउट बच्चों को खेल-खेल में मनोरंजक तरीक़े से सीखने-सिखाने का कार्य करती हैं। उन्हें बच्चों के बीच रहने और उन्हें पढ़ाने में ख़ुशी मिलती है व बच्चों से बहुत कुछ सीखती हैं। उन्हें किताबें पढ़ने में रुचि है। माया मौर्य वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी फ़ॉउण्डेशन मध्यप्रदेश के भोपाल में कार्यरत है।

सम्पर्क : mayasom@gmail.com

विज्ञान, वैज्ञानिक सोच और विज्ञान शिक्षण

गौहर रज़ा

अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन रायपुर, छत्तीसगढ़ में विज्ञान, वैज्ञानिक सोच और विज्ञान शिक्षण विषय पर एक सिम्पोज़ियम आयोजित किया गया था। यह लेख, इस सिम्पोज़ियम में प्रोफ़ेसर गौहर रज़ा द्वारा दिए गए वक्तव्य पर आधारित है। इसमें विज्ञान क्या है और वैज्ञानिक मिज़ाज क्या है इसपर बात है। साथ ही इसमें विज्ञान और इंसान के रिश्ते, विज्ञान और इंसान होने के मक़सद आदि बिन्दुओं पर भी उदाहरणों के साथ चर्चा है। सं.

किसी बात को तब तक नहीं मानना चाहिए जब तक उसको परख नहीं लिया जाए, यही कारण है कि मैंने अपने परिचय को बीच में रोक दिया क्योंकि उसमें परखने के लिए कुछ भी नहीं था।

शुक्रिया, मैं अहसानमन्द हूँ अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन और आपकी यूनिवर्सिटी का, मुझे इस चर्चा में आने का मौक़ा दिया गया। ज़ाहिर है यहाँ आने का मेरा अपना स्वार्थ भी है। मैं बच्चों को जो यहाँ मौजूद हैं, स्कूल से आए हैं, उन्हें कुछ सिखा नहीं सकता। शिक्षक साथी जो यहाँ बैठे हुए हैं वो बच्चों को कहीं ज़्यादा बेहतर तरीक़े से सिखा सकते हैं। मैं सिर्फ़ आपके साथ अपना अनुभव साझा कर सकता हूँ। मैं आपके साथ अपना अनुभव ही बाँटने आया हूँ, और स्वार्थ इसलिए है कि एक तरफ़ मेरे सामने सारे ख़ूबसूरत चेहरे बैठे हुए हैं, वो जो इस देश के दिमाग़ों को गढ़ रहे हैं, जो इस देश की कल्पना को गढ़ रहे हैं, जो हमारे देश में आगे भविष्य में क्या होने जा रहा है उसके ख़्वाब, आपको दिखाने के लिए अपनी ज़िन्दगी लगा रहे हैं। और दूसरी तरफ़ आगे आने वाला भारत बैठा हुआ है। मैं ये इसलिए नहीं कह रहा हूँ कि आप ख़ुश हो जाएँ ये सुनकर कि ये हमारे बच्चे हैं, देश का भविष्य हैं... वग़ैरह...। मैं ये कह रहा हूँ... 'आप जैसा होंगे वैसा ये भारत होगा, वैसा ये देश होगा'। कल वैसा होगा जैसा आप बनेंगे या जैसा आप बनाना चाहते हैं। आप वो ख़्वाब जो आपकी पुरानी जेनरेशन देख रही है उसको साकार करेंगे। अपने नए ख़्वाब गढ़ेंगे, आगे बढ़ेंगे तो देश भी आगे बढ़ेगा। आप ख़राब होंगे, आगे आने वाले भविष्य को बेहतर नहीं बनाना चाहेंगे तो ज़ाहिर ही है कि देश बुरा होगा। अच्छा हो ही नहीं सकता क्योंकि... देश ज़मीन का टुकड़ा नहीं है, देश जंगल नहीं है, देश नदियाँ नहीं है, देश बाउण्ड्री नहीं है, देश आप हैं। हम कल तक थे, हमारा दौर जा चुका।

मैं अपने दौर की कुछ चीज़ें साझा करना चाहता हूँ... एक कहानी से शुरुआत करते हैं...

कुछ नए नौजवान रिक्रूट किए गए, उनके लीडर को, उन्हें कॅम्पास की ट्रेनिंग देनी थी, कॅम्पास जिसमें चुम्बक होता है। उससे आपको दिशा पता चल जाती है। उन्होंने कॅम्पास दिखाया और नौजवानों से कहा कि अपनी-अपनी जेब से कॅम्पास निकालो। कॅम्पास की सुई को दिखाकर कहा कि ये जो सुई है वो उत्तर दिशा (नॉर्थ) दिखाती है और ये जो सुई है, उत्तर की तरफ़

खड़े होने से इधर पूर्व और इधर पश्चिम। कहीं रास्ता खो जाओ, मान लो जंगल में हो तो इसकी मदद से तुम्हें रास्ता मिल जाएगा। फिर उन्होंने कहा, कोई सवाल...। एक शैतान रिक्रूट ने हाथ उठाया...। हाँ भाई रामफल, बता तेरा क्या सवाल है? श्रीमान आपने ये बड़े काम की बात बताई है। पर ये सुई उत्तर दिशा ही क्यों दिखाती है? उस्ताद चक्कर में पड़ गए। फिर कहा, वेरी गुड क्वेस्चन, उत्तर दिशा इसलिए दिखाती है कि अगर हम उत्तर दिशा में चलते चले जाएँ तो नॉर्थ पोल पर एक बहुत बड़ा पहाड़ है। वह चुम्बक का पहाड़ है और दो चुम्बक के नॉर्थ-साउथ एक दूसरे को खींचते हैं। वो जो पहाड़ है वो इस चुम्बक को खींचता है इसलिए ये सुई नॉर्थ दिखाती है। कभी जब जंगल में खो जाओगे, कोई रास्ता बताने वाला नहीं मिलेगा तो ये कॅम्पास तुम्हें रास्ता बताएगा। फिर कहा कोई सवाल...। रामफल ने फिर कहा, श्रीमान अगर मैं चलता ही जाऊँ... चलता ही जाऊँ... चलता ही जाऊँ... और उस पहाड़ के पास पहुँच जाऊँ तब ये सुई कौन-सी दिशा दिखाएगी? उस्ताद ने कहा... तो भी पहाड़ की तरफ़ ही दिखाएगी। फिर उनका लेक्चर शुरू हो गया। जब लेक्चर ख़त्म किया और पूछा, कोई सवाल? रामफल ने फिर हाथ खड़ा किया। अगर मैं उस पहाड़ पर चढ़ता ही जाऊँ... चढ़ता ही जाऊँ... चढ़ता ही जाऊँ... और उसकी चोटी पर पहुँच जाऊँ तो ये सुई किधर दिखाएगी? अब उस्ताद सच में चकरा गए...। बोले, सुनो भई रामफल, और बाक़ी सब भी सुन लो, प्रिंसिपल सर का ऑर्डर है कि तुममें से कोई भी उस पहाड़ के ऊपर नहीं चढ़ेगा।


चित्र : हीरा धुर्वे

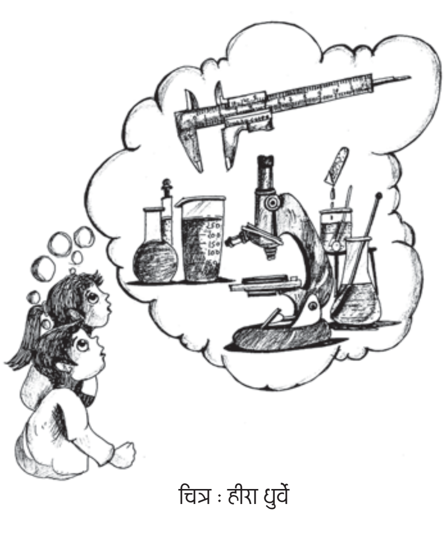
हम इस तरह से विज्ञान पढ़ाते हैं। सवाल नहीं पूछने देते। कोर्स पूरा करना है, कितनी देर सवाल का जवाब देंगे, और ये बच्चे तो सवाल की खान होते हैं पूछते ही रहते हैं। इसके बावजूद कि आज़ादी के बाद जो शिक्षा का ढाँचा तैयार हुआ उसमें बहुत कमज़ोरियाँ थीं, लेकिन अगर हम पिछले 70 साल पर नज़र डालें तो दुनिया में हिन्दुस्तान से पढ़-लिख कर जो लोग बाहर गए हैं उनकी एक साख है। बहुत पढ़ाकू लोग हैं, बाहर जाते हैं तो बहुत अच्छा करते हैं। कई ऐसे भी हैं जो बाहर गए और उनको नोबेल प्राइज़ मिला। इसका श्रेय किसको जाता है? इसका श्रेय उस वक़्त के शिक्षकों को जाता है जो हिन्दुस्तान के आज़ाद होने के बाद 50, 60, 70, 80 के दशक में पढ़ा रहे थे। आज के शिक्षक जो कर रहे हैं, आज की शिक्षा प्रणाली जो है, उसका टेस्ट अगले 70 साल में होगा। आज अगर हम कहते हैं कि जो कुछ हुआ वो सब बेकार था तो हम सारी दुनिया में अपनी साख को नीचा करेंगे। न सिर्फ़ हम अपने आज को बदनाम कर रहे हैं बल्कि अपने पूर्वजों को भी बदनाम कर रहे हैं कि उन्होंने कुछ नहीं किया। मैं ये समझता हूँ कि बहुत ख़राब होने के बावजूद, त्रुटियों के बावजूद, कितने ही देश आज़ाद हुए उनके मुक़ाबले कहीं ज़्यादा साख हमारे देश की है। हमने कोई बुरा काम नहीं किया है, हमने बहुत अच्छा काम किया है। एक के बाद एक जेनरेशन बेहतर होती चली गई। इसलिए मेरे ख़्याल में आज के शिक्षकों के लिए और हमारे पूर्वज शिक्षकों के लिए जिन्होंने आपको ट्रेंड किया पढ़ने के लिए, उनके लिए एक बार ताली तो बजाएँ।

दोस्तो, एक और कहानी सुनाता हूँ... एक वक़्त ऐसा था जब कुछ भी नहीं था और जब मैं कह रहा हूँ कि कुछ भी नहीं था तो इसे सोचना कितना मुश्किल है। मैं छोटी कार्यशालाओं में

यह सवाल ज़रूर पूछता हूँ। आपसे पूछूँगा वही सवाल तो आपके भी बड़े अजीब से जवाब होंगे। आप कहेंगे जब कुछ भी नहीं था तो अँधेरा रहा होगा, पर अँधेरा भी नहीं, आप कहेंगे सब ख़ाली था तो 'ख़ाली' भी नहीं, आप कहेंगे निर्वात (वैक्यूम) था, तो निर्वात भी नहीं। यानी यह सोचना कि एक ऐसा वक़्त था जब वक़्त भी नहीं था, कितना मुश्किल है।

पूरे ब्रह्माण्ड की सारी ऊर्जा एक बिन्दु पर एकत्रित थी, फिर एक विस्फोट जैसा कुछ हुआ, जिसको हम आम भाषा में बिग बेंग, पहले-पहले 10 की घात माइनस 42 सेकण्ड में, कहते हैं, उसमें तापमान था 10 की घात 32 केल्विन। भयानक तापमान, और इस भयानक तापमान में ऊर्जा ने फैलना शुरू किया और तापमान धीरे-धीरे नीचे आना शुरू हुआ। 10 की घात 36 सेकण्ड में यह तापमान घटते-घटते 10 की घात 29 केल्विन रह गया। और तब जिन चार फ़ोर्सेस को हम जानते हैं वे अलग-अलग होनी शुरू हुई। इससे पहले हमें नहीं पता कि ब्रह्माण्ड की शुरुआत के समय कौन-कौन से नियम काम करते थे? हमें नहीं पता कि जो आज के नियम (laws) हैं यह उस वक़्त पैदा भी हुए थे या नहीं। यह फैलाव (एक्सपेंशन) होता रहा, होता रहा। गुब्बारे की तरह से, शायद ऊर्जा फैलती रही और धीरे-धीरे कण पैदा हुए, कण जिसमें पार्टिकल्स और एंटीपार्टिकल्स थे और इनके बीच रस्साकशी थी। बराबर के पार्टिकल्स और एंटीपार्टिकल्स एक दूसरे को लगातार ख़त्म कर रहे थे। एक ऐसा द्रव्य था जो लगातार बन रहा था और ख़त्म हो रहा था और यह ऊर्जा फैलती जा रही थी। धीरे-धीरे तापमान कम हो रहा था और लगभग 10 की घात माइनस 5 सेकण्ड से 1 सेकण्ड के बीच नई तरह के कण, जिनके बारे में आज हम जानते हैं वैसे कुछ कण पैदा हुए और इनके गठन से अगले 10 सेकण्ड में बने अणु (एटम)। यह ऐसे अणु (एटम) थे जिनके साथ इलेक्ट्रॉन रुक ही नहीं सकते क्योंकि तापमान काफ़ी ज़्यादा था। जब तापमान घटना शुरू हुआ, हाइड्रोजन और हीलियम के एटम पैदा हुए।

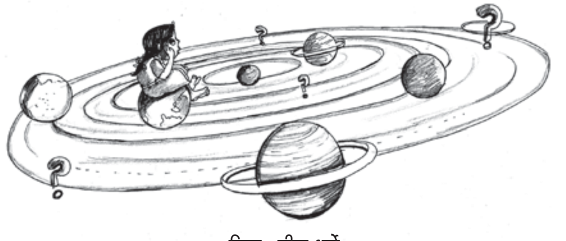
अगले 370 हज़ार साल गुज़र गए। तब गुरुत्वाकर्षण की वजह से शुरुआत में कुछ सितारे पैदा होने शुरू हुए। इसी गुरुत्वाकर्षण की वजह से सितारे एक दूसरे के क़रीब आने शुरू हुए और तब गठन हुआ आकाशगंगा का। इन कणों से बने बादलों के बीच बनना शुरू हुईं हज़ारों, लाखों, करोड़ों आकाशगंगाएँ जो 10 मिलियन साल तक लगातार बनती रहीं। 10 मिलियन साल तक!!! इन लाखों, करोड़ों-करोड़ आकाशगंगा में एक नन्ही-सी आकाशगंगा है जिसे हम मिल्की वे कहते हैं। पूरे ब्रह्माण्ड का माप 93 बिलियन प्रकाश वर्ष (लाइट ईयर्स) है, और इस ब्रह्मांड में कहीं एक कोने में एक नन्ही-सी आकाशगंगा है जिसका नाम है मिल्की वे। इस मिल्की वे में लगभग 400 मिलियन सितारे हैं। उन सितारों में से ज़्यादातर के चारों तरफ़ चक्कर लगातीं छोटी-छोटी, नन्ही-नन्ही गेंद, इन सितारों के ग्रह, कुल मिलाकर लाखों-करोड़ों ग्रह, और इनमें कहीं मिल्की वे की कगार पर एक छोटा-सा चमकता हुआ तारा है, उस नन्हे-से छोटे चमकते तारे के चारों तरफ़ चक्कर लगातीं नन्ही-नन्ही नौ गेंद, और उन नन्ही-नन्ही छोटी-छोटी गेंदों में से एक ख़ास गेंद है जहाँ पानी है।



चित्र : हीरा धुर्वे

यह एक अकेली गेंद है, नीले-हरे रंग की, और इस अकेली गेंद के ऊपर ढेर सारे देश और ढेर सारे देशों में से एक ख़ास देश, और उस देश के अन्दर ढेर सारे शहर, और उन शहरों में से एक ख़ास शहर, उस शहर में ढेर सारी बिल्डिंग, उनमें ढेर सारे रहने वाले लोग और उनमें से एक ख़ास, ख़ास बिल्डिंग जिसमें इस वक़्त एक बूढ़ा आदमी शायद बच्चों को बोर कर रहा है। यह पूरा सफ़र था 13.8 बिलियन ईयर्स का। और मैं बिलियन ईयर्स इसलिए कह रहा हूँ क्योंकि इसमें बताना आसान है। वरना अगर ज़ीरो लगाने शुरू करें तो बोर्ड छोटा पड़ जाएगा। सृष्टि को, ब्रह्माण्ड को, यह वक़्त, यह क्षण पैदा करने में, जिसमें मैं और आप एक दूसरे से वार्तालाप कर रहे हैं, आप यहाँ आए और मैं दिल्ली से आया, इसमें लगभग 13.8 बिलियन ईयर्स लगे हैं।

क्या सृष्टि ने हमें इसलिए पैदा किया है कि हम अपने को देशों में बाँट लें, धर्मों में बाँट लें, जातियों में बाँट लें, एक दूसरे के साथ नफ़रत करें, किसी को नीचा दिखाने की कोशिश करें, किसी को नीचा मानें, या फिर सृष्टि ने हमें इसलिए रचा कि जिन क्षणों को पैदा करने में सृष्टि को 13.8 बिलियन ईयर्स लगे हैं उनका इस्तेमाल हम इसके राज़ जानने के लिए करें। ख़ूबसूरत चीज़ें रचें, स्थिति को समझते हुए, बदलते हुए एक नई दुनिया अपने लिए पैदा करें, जिसमें भाईचारा हो, अमन हो, चैन हो जिसमें जंग न हो, नफ़रत न हो। यह सवाल सिर्फ़ मुझे नहीं पूछना है यह सवाल हम में से हर एक को पूछना है कि हमारा इस धरती पर होने का मक़सद क्या है? हम क्यों हैं इस धरती पर? मेरा जवाब सीधा-सा है– सृष्टि के राज़ों को जितना ज़्यादा-से-ज़्यादा समझ सकें, इस धरती पर पैदा होने वाली ज़िन्दगी की जितनी इज़्ज़त कर सकें। यह दो मक़सद अगर ज़िन्दगी के हों तो क्या यह ज़िन्दगी गुज़ारने के लिए काफ़ी नहीं है?



चित्र : हीरा धुर्वे

दोस्तो! मैंने यह कहानी आपको क्यों सुनाई? मैं यह कहानी सुना रहा हूँ सृष्टि को समझने के लिए। यह विज्ञान की कहानी है। और आप आज़ाद हैं इस कहानी को मानने या न मानने के लिए। हमने और बहुत सारी कहानियाँ रची हैं। अपने चारों तरफ़ की रियलिटी को, वास्तविकता को समझने के लिए हमने बहुत तरह से कोशिश की है, और जब मैं 'हम' कह रहा हूँ तो इंसानियत की बात कर रहा हूँ, मानवता की बात कर रहा हूँ। यह जो जनजातियाँ हैं अफ़्रीका की, हम मानते हैं कि वे इस धरती पर सबसे पुराने रहने वाले इंसान हैं, उन्होंने भी सृष्टि को समझने की कोशिश की और उनकी कहानियाँ हम तक पहुँचीं। इन कहानियों में हमें एक दिव्य शक्ति, कई दैवीय शक्तियों का वर्णन मिलता है, जिन्होंने इस सृष्टि को रचा। ये कहानियाँ अलग-अलग तरह से यह बताती हैं कि उस दिव्य शक्ति ने पहले चाँद रचा, फिर सूरज, फिर तारे रचे, उसके बाद कहीं धरती। जब धरती रची तो उसके ऊपर इंसान रखे और सबसे आख़िरी में इंसानों के लिए जानवर।

किसी और कहानी में यह भी है कि सबसे पहले कछुआ रचा, पानी रचा, आसमान रचा और उसके बाद फिर धरती और सूरज-चाँद व तारे रखे। हमारे यहाँ शास्त्रों में मिलने वाली सबसे पुरानी कहानियों में से एक ये है कि दैवीय शक्ति के सर से ब्राह्मण पैदा हुए, भुजाओं से क्षत्रिय, पेट से वैश्य और पैरों से शूद्र। हमें *बाइबिल* में मिलता है कि भगवान ने कहा कि 'let there be light and there was light'. पहले दिन उसने आसमान, चाँद, तारे रचे दूसरे दिन से लेकर 6 दिन में उसने पूरी सृष्टि रची और

सातवें दिन भगवान ने आराम किया। यही कहानी हमें पुराण में मिलती है।

सवाल वही है इस ब्रह्माण्ड को किसने रचा? कौन चला रहा है? यह सृष्टि कहाँ से आई है? इंसान कैसे पैदा हुआ? एक तरफ़ हमारे धर्म बता रहे हैं, हमारी पुरानी कहानियाँ बता रही हैं कि ब्रह्माण्ड कैसे रचा गया और दूसरी तरफ़ हमारा विज्ञान कुछ और बता रहा है। क्या विज्ञान की यह कहानी जो मैंने आपको सुनाई वो हमेशा से ऐसी ही थी? ऐसा तो है नहीं। और एक वैज्ञानिक होने के नाते मैं यह बात एडमिट कर लूँ कि एक सवाल का जवाब अभी तक मुझे नहीं मिला, मैंने बहुत कोशिश की जानने की, खँगालने की, और पिछले 5-7 साल से लगा हुआ हूँ, और वो सवाल यह है कि इंसान ने सवाल पूछना कब शुरू किया? और उनके जवाब कब तलाशने शुरू किए? इसी सवाल से एक और सवाल जुड़ा हुआ है कि क्या जानवर सवाल पूछते हैं? जानवर कब सवाल पूछता है? इन सवालों के जवाब मुझे अभी तक नहीं मिल पाए। यह मेरा क्षेत्र नहीं है लेकिन इवोल्यूशनरी बायोलॉजी के कॉग्निटिव साइंस के लोगों से मैंने बात की है पर अभी तक जवाब नहीं मिला। बहरहाल यह मान लेते हैं कि इंसान ने कभी विकास की सीढ़ियाँ चढ़ते हुए सवाल पूछने और उनके जवाब तलाशने शुरू किए।

और यह चीज़ हमको जानवरों से अलग करती है। मेरा मानना है कि 2 तरह के सवाल पूछे गए। एक वह जो हमें आम ज़िन्दगी गुज़ारने के लिए ज़रूरी हैं जैसे यह आदमी कब बोलना बन्द करेगा एक सवाल हो सकता है। लेकिन यह आदमी कब बोलना बन्द करेगा इसका जवाब मिल गया तो बात ख़त्म हो गई। यह चाबी कहाँ रखी है, किताब कौन-सी है, आपका क्या नाम है, वह कौन था, यह तस्वीर किसकी लगी है? ये वो सवाल हैं जो ज़िन्दगी गुज़ारने के लिए हम सुबह से लेकर रात तक न जाने कितनी बार पूछते हैं और उनका जवाब मिलते ही सवाल ख़त्म हो जाते हैं। पर दूसरी तरह के सवाल हैं जो मानवता ने बार-बार, बार-बार पूछे। इनको मैं मेटा प्रश्न / क्वैश्चन्स कहता हूँ।

मेटा सवाल ज़्यादातर बच्चे बड़े होते हुए अपने बड़ों से ज़रूर पूछते हैं और शिक्षकों को भी यह पता होगा कि उन्होंने भी सवाल पूछे थे और उन्होंने जितने बैच पढ़ाए हैं, हर बैच में यह सवाल पूछे गए थे। हम कहाँ से आते हैं, इंसान कैसे पैदा हुआ, यह सृष्टि किसने रची है? क्यों मैं बात सही कह रहा हूँ या ग़लत! तुमने पूछे हैं ये सवाल कभी... चाँद-तारे कहाँ से आए, किसने बनाए? यह सवाल मानवता ने भी बार-बार, बार-बार पूछा। यह दो श्रेणी में आते हैं... एक है सितारे, सूरज, चाँद, इंसान क्यों पैदा हुए? और दूसरा सवाल हो सकता है कैसे पैदा हुए? इन दोनों में बहुत बड़ा फ़र्क़ है। अगर हम क्यों वाले सवाल पूछेंगे, अगर हमारा सवाल क्यों से शुरू होगा, तो जब हम अपनी जानकारी की सीमा पर पहुँचेंगे तो जवाब होगा भगवान की मर्ज़ी। और अगर हम कैसे से सवाल शुरू करेंगे, जैसे– कैसे सूरज रोज़ निकलता है? चाँद-तारे रोज़ कैसे दिखाई देते हैं? चाँद-तारे कैसे बने? तब हम विज्ञान की तरफ़ जाएँगे।

तो दो अलग-अलग तरह के सवाल मानवता हमेशा पूछती रही है। एक तरह के सवाल हमको धर्म की तरफ़ ले जाते हैं और दूसरी तरह के वहाँ तक ले जाते हैं जहाँ हमारी जानकारी की बाउण्ड्री है। जब सीमा पर पहुँचते हैं, बाउण्ड्री पर पहुँचते हैं तब जवाब होता है आज के दौर में हमें इसका जवाब नहीं मालूम है या आपके शिक्षक कह सकते हैं, जो ईमानदार हैं, मुझे अभी नहीं मालूम है पढ़कर बताऊँगा, देखकर बताऊँगा, गूगल सर्च करूँगा वग़ैरह-वग़ैरह या करूँगी। या कोई शिक्षक ये भी कह सकता है बहुत बकवास करते हो, चुप रहो, बहुत बक-बक करना सीख लिया है, इसका कोई जवाब नहीं। और यह हमारे माँ-बाप तो अकसर करते हैं। कई बच्चों को यह अनुभव होगा। मुझे तो है, शिक्षकों को भी यह अनुभव होगा। अच्छा, भगवान ने सबकुछ बनाया है... अगर बच्चे ने

पूछ लिया... तो भगवान को किसने बनाया है... भगवान हमेशा से हैं बस बक-बक मत करो। अगर भगवान हमेशा से हैं तो... बच्चे ने पूछा...। अच्छा, तो धरती भी हमेशा से हो सकती है। बकवास।

विज्ञान भी एक-एक क़दम रखकर सीढ़ी चढ़ा है। एक ही बार में, एक ही वक़्त में विज्ञान को जवाब नहीं मिला और इसीलिए विज्ञान के अन्दर जवाब बदलते हैं। पहले जवाब था धरती चपटी, फिर उसके बाद धरती गोल है, धरती केन्द्र में है, पूरे चाँद-तारे धरती के चक्कर लगा रहे हैं, कैसे चक्कर लगा रहे हैं, सेलेस्टियल स्फ़ीयर है। सेलेस्टियल स्फ़ीयर क्या होता है? जिसमें चाँद, सूरज और तारे जड़े हैं, ये किसी पारदर्शी चीज़ से बने हैं, किसी ने इसे ईथर का नाम दिया तो किसी ने आकाश का। जब वह पूरा सेलेस्टियल स्फ़ीयर घूमता है तो सूरज, चाँद, तारे घूमते हैं। फिर पता लगाया यह तो कुछ गड़बड़ हो रही है। इनमें से कुछ गोले तो वापस चल देते हैं, पच्छिम से पूरब की तरफ़। क्या यह तो नहीं हो सकता कि गोला यानी आसमान, थोड़ी देर के लिए ही सही, वापस चल दे।

अगले चार-पाँच सौ साल तक इसका जवाब नहीं मिला, इसको पर्दे के पीछे ही धकेल दिया; यानी छोड़ो इसकी बात नहीं करते, गोले को ही चलने दो। पर प्रॉब्लम तो खड़ी रही और जवाब माँगती रही। फिर कॉपरनिकस साहब आ गए और उन्होंने कहा, ये तो नहीं होगा। ये सब धरती के चारों तरफ़ नहीं घूम रहा, धरती ख़ुद घूम रही है। बड़ा शोर मचा, बड़ा हंगामा हुआ। *बाइबिल* में जो लिखा है वो कैसे ग़लत हो सकता है? फिर गैलीलियो साहब आ गए। अजीब वैज्ञानिक थे। अरे भाई दूरबीन बनाई थी। इधर-उधर देखो, आसपास की चीज़ों को देखो, मज़े करो। ज़्यादा-से-ज़्यादा दूसरे की फ़ौज का आकलन कर लेते, दूरबीन लगाकर देख लो कितनी बड़ी फ़ौज है। यह बेवकूफ आदमी! इन्होंने आसमान की तरफ़ कर दी दूरबीन। इसकी क्या ज़रूरत थी।

लेकिन अब जब देखा वहीं देखते रह गए, वहाँ देखना शुरू किया तो पता लगा कि अरे दूसरे ग्रहों के भी चाँद हैं। बड़ा धर्म संकट आ गया। ब्रह्माण्ड में अब न तो धरती केन्द्र में है, और न ही सूरज। तो आख़िर सबकुछ चल कैसे रहा है? फिर न्यूटन साहब आए उन्होंने कहा कि $F = G(m1 \times m2)/R2$, मुझे ये इक्वेशन एक बेहतरीन कविता लगती है। चार अल्फ़ाबेट और दो नम्बर। और इसने पूरे ब्रह्माण्ड को समेट लिया। क्या घट रहा है, कौन-सी गैलेक्सी किसके क़रीब आ रही है, कौन-सी दूर जा रही है सबकी व्याख्या हो रही है; और एक नन्हे-से एटम के अन्दर जो कुछ हो रहा है वह भी इसी से व्याख्यायित होता है। कमाल की इक्वेशन है। मैं जब भी इस इक्वेशन को देखता हूँ तो मुझे लगता है जैसे बहुत बड़े दिमाग़ इतनी आसानी और ख़ूबसूरती के साथ पूरे ब्रह्माण्ड की व्याख्या कर देते हैं।

पर उनसे भी ग़लती हुई। उन्होंने कहा, ब्रह्माण्ड जैसा था वैसा ही है रुका हुआ। भगवान ने जैसा बनाया था वैसा ही है। गुरुत्वाकर्षण की वजह से इसे सिमटना चाहिए यह बात हुई। उनको लेकर बड़ा हंगामा हुआ; हालाँकि वो बहुत धार्मिक आदमी थे। पर उनके ऊपर लोग लांछन लगाने लगे कि यह तो भगवान को चैलेंज कर रहे हैं। उन्होंने कहा, भगवान की मर्ज़ी से नहीं चल रहा है यह तो सबकुछ चल रहा है गुरुत्वाकर्षण की वजह से। एक और वैज्ञानिक थे जो उनसे भी ज़्यादा धार्मिक थे। उन्होंने कहा कि न्यूटन साहब सौर मण्डल के बारे में यह कह रहे हैं कि भगवान ने ब्रह्माण्ड की घड़ी परफ़ेक्ट नहीं बनाई। यानी वह सिमटता जाएगा और भगवान को उसे कुछ दिन के बाद ठीक करना पड़ेगा।

न्यूटन का कहना था कि तारे एक दूसरे से इतनी दूर हैं कि वे अपनी जगह स्थिर हैं, और इसीलिए ब्रह्माण्ड भी स्थिर है। यही बात आइंस्टाइन ने दोहराई और अपनी एक इक्वेशन को ज़बरदस्ती बदल दिया, जबकि उनकी इक्वेशन चिल्ला-चिल्ला कर कह रही थी कि या

तो ब्रह्माण्ड सिकुड़ रहा है या फैल रहा है। जब एक दूसरे साइंटिस्ट लुमैथ (Lemaitre) ने कहा कि ब्रह्माण्ड फैल रहा है उसका प्रमाण मिल गया है तो आइंस्टाइन ने उनका मज़ाक़ उड़ाया और कहा कि तुम्हारी गणित तो ठीक हो सकती है पर तुम्हारी फ़िज़िक्स बहुत ख़राब है। पर 3-4 साल के बाद आइंस्टाइन ने माफ़ी माँगी, और कहा कि ये मेरी ज़िन्दगी की सबसे बड़ी ग़लती थी। अब विज्ञान की कहानी में ब्रह्माण्ड फैल रहा है।

बात कहाँ से शुरू हुई थी, सपाट धरती, ढँका हुआ आसमान, गोल धरती, आसमान में सूरज के चारों तरफ़ चक्कर लगाती हुई धरती, स्टैटिक और अब फैलता हुआ कॉस्मॉस, जिसकी कहानी मैंने आपको सुनाई।

बताइए तो, वैज्ञानिकों का, विज्ञान का कोई धर्म-ईमान है भी कि नहीं, रोज़ अपनी बात बदल देते हैं। पहले कुछ कह रहे थे फिर अब कुछ और कह रहे हैं। डीडीटी बहुत अच्छी चीज़ है सब जगह छिड़कनी चाहिए, सबकुछ ठीक हो जाएगा इससे। फिर कहते हैं डीडीटी सबसे ख़राब चीज़ है इससे कैंसर होता है। पर यही तो विज्ञान की ताक़त है। विज्ञान में कही हुई बात अन्तिम सत्य नहीं होती। विज्ञान के पास कोई अन्तिम सच नहीं है। विज्ञान के पास रास्ता है सच तलाश करने का। सच, आज का सच है कल यह सच बदल जाएगा। और इसीलिए, नई जेनरेशन को यह लगातार सोचना चाहिए कि यह आज का सच है और मुझे आगे का सच तलाशना है।

इस आयोजन में ज़्यादातर विज्ञान के शिक्षक व विद्यार्थी हैं, यह अच्छा है। मैं एक बात दावे के साथ कह रहा हूँ आपसे, आपमें से किसी ने भी *प्रिंसिपिया मैथमैटिका* किताब का कवर पेज नहीं देखा होगा। अगर देखा है तो बताएँ। इस किताब ने दुनिया को बदलकर रख दिया। न्यूटन की लिखी हुई किताब है आपमें से किसी ने नहीं देखा। किसी ने गैलीलियो की लिखी हुई किताब देखी है? कॉपरनिकस की लिखी हुई किताब देखी है? चलिए, वो तो पुरानी बात हो गई। आइंस्टाइन की लिखी हुई कोई किताब देखी है? क्यूँ? मुझे यक़ीन है पुराण देखा होगा। आपने वेदों को देखा होगा। आपने *रामायण, महाभारत* को देखा होगा। न्यूटन की किताब नहीं देखी जबकि विज्ञान पढ़ा है, ऐसा क्यूँ? आप शिक्षक हैं। अगर कोई शिक्षक धर्म पढ़ा रहा हो और उसने *रामायण* नहीं देखी हो तो उसे टीचर मानेंगे क्या आप? कोई इस्लाम पढ़ा रहा हो और उसने *क़ुरान* न देखा हो तो आप उसे टीचर मानेंगे क्या? और यहाँ सारे विज्ञान के शिक्षक बैठे हुए हैं। बच्चों को छोड़िए... पूछना अपने शिक्षक से कि *प्रिंसिपिया मैथमैटिका* का कवर पेज देखा है आपने?

विज्ञान में आज की नॉलेज, ज़रूरी नॉलेज है। किसी किताब से कितना भी बड़ा बदलाव आया हो विज्ञान में, उसे आँखों से नहीं लगाया जाता, चूमा नहीं जाता, सर पर नहीं रखा जाता। हर वैज्ञानिक को मालूम होता है कि आगे आने वाले वक़्त में उससे बेहतर किताब लिखी जाएगी, जो बेहतर खोज की तरफ़ इशारा करेगी और सच की तलाश के नए रास्ते खोलेगी।

अगर आज मुझे कैंसर हो जाए तो आप मुझे कहाँ जाने के लिए कहेंगे? लेटेस्ट कैंसर इंस्टीट्यूट में जाने के लिए कहेंगे ना! वहाँ यह तो नहीं लिखा होगा कि यह प्राचीन कैंसर इंस्टीट्यूट है। ऐसा कभी लिखा देखा है? पर जब धर्म की बात होती है तो सबसे पुराना टैक्स्ट सबसे ऑथेंटिक होता है, जितनी पुरानी किताब उतनी ज़्यादा ऑथेंटिक, जितनी पुरानी किताबों का ज्ञान उतना बड़ा ज्ञानी। विज्ञान में कल जो पेपर छपा है, कल जो रिसर्च आई है वह सबसे ज़्यादा ऑथेंटिक है। कैंसर इंस्टीट्यूट इसलिए जाते हैं कि वहाँ पर लेटेस्ट नॉलेज है, यह नहीं कि पुरानी नॉलेज है। एक तरफ़ बताया जा रहा है कि जो सबसे ज़्यादा पुराना है वही ऑथेंटिक है। साइंस में जो लेटेस्ट है वह ऑथेंटिक है। अभी मैं आपसे यह पूछूँ कि मोहम्मद साहब के बारे में कहा जाता है कि वह गए थे भगवान से मिलने के लिए तो वह घोड़े में बैठकर गए थे और एक रात में मिलकर आ गए। मैं कहूँ कि मैंने रिसर्च की कि वह घोड़े

में बैठकर नहीं गए थे टेली-ट्रांसपोर्टेशन से गए थे तो मुसलमान मेरे साथ क्या करेंगे? अगर मैं यह कहूँ कि मैंने रिसर्च की और अयोध्या में भगवान राम का जन्म नहीं हुआ था बल्कि यहाँ रायपुर में हुआ था और सिद्ध कर दूँ तो हिन्दू मेरे साथ क्या करेंगे? अगर मैं यह कहूँ कि जीसस क्राइस्ट वह चमत्कार नहीं करते थे। वो बहुत अच्छे डॉक्टर थे तो क्रिश्चियन मेरे साथ क्या करेंगे? कोई जवाब है आप लोगों के पास? मेरा भुर्ता बना देंगे। चाहे ज़बान से बनाएँ या वास्तविकता में बना दें।

हाँ, अगर मैं यह कहूँ कि $E = mc^2$ जो इक्वेशन है उसमें थोड़ी-सी ग़लती कर दी आइंस्टाइन ने, वो $E = mc^2 + X$ है। और मैं यह सिद्ध कर दूँ तो क्या होगा? बच्चो... बताओ मेरा क्या होगा या तुम में से किसी ने कर दिया तो तुम्हारा क्या होगा? तुमने आइंस्टाइन की इक्वेशन को ग़लत साबित कर दिया तो तुम्हारा क्या होगा? नोबेल प्राइज़ मिल जाएगा। अपने पूर्वजों को ग़लत साबित करके ही विज्ञान आगे बढ़ता है। अगर आप पूर्वजों की बातें ही बार-बार दोहराते रहो तो उससे क्या होगा, आगे तो नहीं बढ़ पाओगे। विज्ञान ने जब तक पूर्वजों को ग़लत साबित नहीं किया, या नया रास्ता नहीं बनाया किसी बात को साबित करने का, तब तक आपको कोई पूछेगा भी नहीं। अगर आपने कुछ नया कर दिया तो जश्न मनाया जाता है, कोई जात बाहर नहीं करेगा आपको। यानी एक तरफ़, बदलाव करने पर जात बाहर किया जाता है और दूसरी तरफ़ जश्न मनाया जाता है।



चित्र : हीरा धुर्वे

मैं इतनी लम्बी बात और इतना बोर आपको इसलिए कर रहा था कि दोनों में फ़र्क़ समझा सकूँ। ख़ासतौर से, शिक्षकों को यह समझना चाहिए कि एक तरफ़ सवाल है वैज्ञानिक मिज़ाज (साइंटिफ़िक टेम्पर) का जिसकी बात हो चुकी है जो हमारे संविधान का हिस्सा है दूसरी तरफ़ विज्ञान है, वैज्ञानिक जानकारी है। एक अच्छा नागरिक बनने के लिए, एक अच्छा शहरी बनने के लिए, आपको समझना होगा कि इस सृष्टि को समझने के अलग-अलग तरीक़े हमारे सामने हैं। सिर्फ़ तथ्य और आँकड़े बताकर विज्ञान पढ़ाया तो जा सकता है पर साइंटिफ़िक टेम्पर पैदा नहीं किया जा सकता। साइंटिफ़िक टेम्पर के लिए ज़रूरी है हम समझें कि सृष्टि को विज्ञान के ज़रिए देखने में और बाक़ी देखने के तरीक़ों में क्या अन्तर है? अगर आपका विद्यार्थी यह नहीं समझ पा रहा है कि क्या अन्तर है तो कोई फ़ायदा नहीं विज्ञान पढ़ाने का।

आप ज़्यादातर बच्चों को वैज्ञानिक पैदा नहीं कर रहे होते। कुछ बच्चे ज़रूर वैज्ञानिक बनेंगे, पर ज़्यादातर नहीं। वे अलग-अलग फ़ील्ड में जाएँगे, इसलिए एक अच्छा शहरी होना ज़रूरी है। एक ऐसा प्राणी होना ज़रूरी है, जिसके अन्दर हिम्मत हो सवाल पूछने की, जवाब तलाश करने की, जिसके अन्दर हिम्मत हो पुरानी सारी मान्यता को चुनौती देने की। यह वैज्ञानिक होने के लिए भी बहुत ज़रूरी है, लेकिन उससे ज़्यादा ज़रूरी है देश की उन्नति के लिए बेहतर-से-बेहतर शहरी पैदा होना। एक नागरिक पैदा होना जो हिम्मत कर सके और रामफल की तरह से हर बार अपनी उंगली ऊपर उठाए और कहे कि मेरे पास सवाल है, मुझे उसका जवाब चाहिए।

साइंटिफ़िक टेम्पर की, हालाँकि बहुत सारी परिभाषाएँ हैं हमारी सभ्यता से निकली हुई भी और बाहर की सभ्यता से निकली हुई भी, पर सबसे ख़ूबसूरत परिभाषा नेहरू की मिलती है।

एक जगह वो कहते हैं कि "Scientific temper is a temper of free man", यह आज़ाद मनुष्य का दृष्टिकोण है, यानी जब तक साइंटिफ़िक टेम्पर नहीं है मनुष्य आज़ाद नहीं हो सकता। और जब तक मनुष्य आज़ाद नहीं है साइंटिफ़िक टेम्पर नहीं हो सकता, नन्ही-सी, छोटी-सी परिभाषा है। एक जगह वे कहते हैं कि "Scientific temper is application for scientific methods beyond the four walls of laboratory", यानी जो कुछ हम लैब में कर रहे हैं उसका ज़िन्दगी में इस्तेमाल साइंटिफ़िक टेम्पर है। अगर एक विद्यार्थी प्रयोगशाला में प्रयोग कर लेता है और वह उस मैथडॉलॉजी को बाहर इस्तेमाल नहीं करता तो कोई फ़ायदा नहीं है उसका पढ़ने का।

और एक जगह लम्बी परिभाषा देते हुए वह कहते हैं, मैं आपको उसका अनुवाद सुना रहा हूँ– "यह विज्ञान का तरीक़ेकार है जो बहादराना भी है और आलोचनात्मक भी, यह तलाश है सच और इल्म की, यह रवैया है किसी भी चीज़ को तब तक न मानने का जब तक उसे परख न लिया जाए, यह नए सबूत की रोशनी में पुरानी मान्यताओं को बदलने की सलाहियत है। ये किसी पुरानी थ्योरी की बजाय परखे हुए सच पर भरोसा करने की आदत है, यह सोच है इंसानों में उस क्षमता को पैदा करने की जो उन्हें लगातार सवाल पूछने पर मजबूर करे।" अगर आप यह मानते हैं कि 5 बार नमाज़ पढ़ना ज़रूरी है, तिलक लगाना ज़रूरी है, सिन्दूर लगाना ज़रूरी है, जनेऊ पहनना ज़रूरी है, तब भी सवाल उठेंगे कि क्यों ज़रूरी है?



चित्र : हीरा धुर्वे

आपको भ्रमित करने के लिए बहुत कुछ है समाज के अन्दर, लगातार भ्रमित करने के लिए। साइंस ढूँढ़ते रहेंगे धर्म के अन्दर, हमारे शास्त्रों में यह लिखा है, *क़ुरान* में यह लिखा है, वेदों में यह लिखा है। इन दोनों को मिलाइए मत। ऐसे लोग न वेद जानते हैं न विज्ञान, न *क़ुरान* जानते हैं न शायद *बाइबिल* ही। ये वे लोग हैं जिनकी वेदों की भी जानकारी अधूरी है और *क़ुरान* की भी जानकारी अधूरी है जो विज्ञान के पास जा रहे हैं प्रमाण-पत्र लेने के लिए, देखो हमारा सबकुछ भी साइंटिफ़िक है। धर्म अलग है, वह एक तरीक़ा है सृष्टि को समझने का, और दूसरा तरीक़ा है विज्ञान। रास्ता आपको चुनना है, नई पीढ़ी को चुनना है।

गौहर रज़ा, वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसन्धान परिषद (CSIR) में प्रधान वैज्ञानिक थे और अब सेवानिवृत्त हैं। वे नवीकृत अनुसन्धान अकादमी (ACSIR) में प्रोफ़ेसर हैं और एक जाने-माने कवि व फ़िल्मकार हैं। वे कई प्रतिष्ठित अन्तरराष्ट्रीय संस्थाओं से जुड़े हैं और कई अन्तरराष्ट्रीय पत्रिकाओं के सम्पादकीय बोर्ड में भी हैं। उनका शोधक्षेत्र विज्ञान संचार है और *जर्नल ऑफ़ साइंटिफ़िक टेम्पर* उन्हीं के द्वारा शुरू किया गया और वे उसके पहले सम्पादक थे। उन्हें राज्यसभा चैनल पर 'यूरेका' नामक कार्यक्रम की एंकरिंग के लिए भी जाना जाता है।

सम्पर्क : gauharraza53@gmail.com

शुरुआती कक्षाओं में कहानी शिक्षण

संध्या पाण्डेय

शुरुआती कक्षाओं में बच्चों की भाषाई क्षमताओं के विकास में कहानियों और कहानी शिक्षण का ख़ास महत्त्व है। इस लेख में लेखिका ने बताया है कि बच्चों के साथ कहानियों पर काम करना क्यों ज़रूरी है और ये बच्चों को पढ़ना-लिखना सिखाने में किस तरह की भूमिका निभाती हैं। लेखिका ने *रिमझिम* पाठ्यपुस्तक में दिए गए पाठ्यचर्या के उद्देश्य व सीखने के प्रतिफल को ध्यान में रखते हुए कहानियों के साथ की गई बहुत सारी गतिविधियों और प्रक्रियाओं का वर्णन किया है। लेख में इस बात का भी ज़िक्र है कि कहानियों का चयन कैसे किया जाए और इनमें मातृभाषा के लिए कैसे जगह बनाई जाए। सं.

प्राथमिक कक्षाओं में भाषा शिक्षण बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है या यूँ कहें कि केन्द्रीय स्थान रखता है तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। हमारे यहाँ विद्यालयों में प्रथम भाषा हिन्दी है। यदि हिन्दी भाषा पर विद्यार्थियों की समझ अच्छी होगी तो दूसरे विषयों को सीखने-सिखाने की प्रक्रिया भी आसान हो पाएगी। सुनना, बोलना, पढ़ना और लिखना– भाषा के महत्त्वपूर्ण कौशल हैं। हम जिस भाषा को सीखना या सिखाना चाहते हैं, उसी भाषा में जितना ज़्यादा बच्चे को सुनने या पढ़ने को मिलेगा उतना ही आसान व सहज उस भाषा में उसका बोलना और लिखना होगा। जितना अधिक और विविध तरह का इनपुट होगा उतना ही बेहतर आउटपुट होगा। पाठ्यपुस्तक में दिए गए अनेक तरह के अवसर, बाल साहित्य का ख़ूब इस्तेमाल, संवाद के मौक़े, आदि इनपुट के सन्दर्भ में हम उपयोग करते ही हैं।

बच्चे अपने परिवेश से कहने और सुनने का हुनर और दुनिया को देखने-समझने का नज़रिया लेकर स्कूल में दाख़िल होते हैं। यह हुनर और नज़रिया आसपास की बातचीत, बाज़ार, विज्ञापन, मेले, नानी के घर, खेल गीत, लोकगीत, लोककथा, घटनाओं, आदि से निरन्तर गुज़रते व बारीक़ अवलोकन करते हुए बनता है। शुरुआती कक्षाओं में यदि विभिन्न सन्दर्भों में अर्जित बच्चों के ऐसे अनुभवों और नज़रिए को तरजीह दी जाती है तो निश्चित ही पढ़ने-लिखने की प्रक्रिया सहज, आसान और सार्थक होती है। यह केवल हिन्दी भाषा की बात नहीं, बल्कि गणित और अँग्रेज़ी पर भी लागू होती है, ऐसा मैंने शिक्षण करते हुए महसूस किया है। यहाँ मैं शुरुआती कक्षाओं (एक और दो) में कहानी की अनिवार्यता, भूमिका और प्रक्रियाओं का ज़िक्र करना चाहूँगी।

भाषा शिक्षण में बच्चों को पढ़ना-लिखना सीखने-सिखाने के अनेक माध्यम हैं, इनमें से एक सशक्त माध्यम कहानी है। छोटे बच्चों को वे कहानियाँ अधिक प्रिय हो सकती हैं, जो उनकी अपनी दुनिया के क़रीब हों। अपनी दुनिया से आशय यहाँ कल्पना, जिज्ञासा, कौतूहल, संघर्ष, साहस, जीत, बहादुरी, चमत्कार, सौन्दर्य, ख़ुशी, दुख आदि मनोभावों से है। जैसा कि अकसर कहा जाता है, कहानियाँ भाषा संवर्धन

के साथ-साथ तर्कशक्ति और कल्पनाशीलता को भी बढ़ावा देती हैं। कहानियों के प्रति बच्चे तो क्या बड़े भी सहज ही आकर्षित हो जाते हैं। कहानियाँ आनन्द और मनोरंजन के साथ-साथ जीवन को समझने, पात्रों के बारे में चर्चा के माध्यम से विभिन्न परिस्थितियों को समझने और उनके अनुसार व्यवहार करने की समझ विकसित करने में सहायक होती हैं। कहानी को प्रस्तुत करने के विभिन्न रूप हो सकते हैं। जैसे– कविता, संस्मरण, यात्रा वृत्तान्त, ऑडियो-वीडियो या छोटी-छोटी बाल फ़िल्में। पर इससे पहले है कहानी के चयन की बात। एक शिक्षक के तौर पर कहानी के चयन को लेकर सतर्क होने की ज़रूरत है। साथ ही सुनाई जाने योग्य कहानियों की पूर्व तैयारी होनी ज़रूरी है। इस लेख में आगे कहानियों की ज़रूरत और उनपर कक्षा में किए जाने वाले काम के बारे में मैंने अपने विचार रखे हैं।

कहानी की आवश्यकता

पाठ्यपुस्तक *रिमझिम* में पहली और दूसरी कक्षा में भरपूर कहानियाँ दी हुई हैं। इसके साथ ही पाठ्यचर्या के उद्देश्य और सीखने के प्रतिफल को देखें तो अधिकतर बिन्दु हमें कहानी शिक्षण से जुड़ते दिखाई देते हैं। कहानी धैर्यपूर्वक सुनने और अभिव्यक्ति कौशल का विकास करती है। कल्पना, तर्क, अनुमान, सौन्दर्य बोध (सराहना करना, संवेदनशीलता को महसूस करना), दुनिया को समझने, शब्द भण्डार बढ़ाने, अन्दाज़ा लगाने, भाषा के इस्तेमाल, क्रमबद्धता, विराम चिह्नों की समझ, स्कूल में भय व झिझक दूर करने जैसे अनेक कौशलों को बेहतर बनाने में कहानी की महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

कहानी शिक्षण की प्रक्रियाएँ

यहाँ प्रक्रिया के तौर पर कुछ बातें मैं अपने अनुभव के आधार पर और कुछ आरम्भिक भाषा कार्यक्रम के सत्रों से मिली गतिविधियों के आधार पर साझा करना चाहूँगी। कहानी का चयन इस बात पर निर्भर करता है कि वह केवल सुनाने के लिए है या वह बच्चों को खोजने, सोचने, पढ़ने, लिखने, अभिव्यक्त करने और रचनात्मकता का अवसर देती है। शुरुआती कक्षाओं में पढ़ने-लिखने को रोचक बनाने के लिए सुनाने से लेकर अक्षर मात्रा की पहचान तक की यात्रा विभिन्न चरणों में होती है। इसे हम समग्रता में शिक्षण करना कह सकते हैं। कुछ चरणबद्ध तरीक़े इस तरह से हो सकते हैं :

1. शुरुआती कक्षाओं के लिए मन को गुदगुदाने वाली कहानी का चयन करना : जैसे– छोटा सा मोटा सा लोटा, लालू और पीलू, चूहे को मिली पेंसिल, एक कहानी कहनी है, आदि।

2. उचित हाव-भाव, आरोह-अवरोह, मुखौटे का उपयोग कर नाटकीय ढंग से कहानी सुनाना : यदि सम्भव हो तो पद्य रूप में कहानी को ढालकर सुनाना, मसलन जब मैं पहली और दूसरी कक्षा में कहानी की शुरुआत करती हूँ तो 'प्यासा कौआ' कहानी को पद्य रूप में उचित हाव-भाव और लय के साथ चित्र की सहायता से सुनाती हूँ :

तेज़ धूप में कौआ प्यासा
पानी की थी कहीं न आशा
एक घड़े में थोड़ा पानी
देख हुई उसको हैरानी...
या
एक कहानी कहनी है
वो जो आम की टहनी है
वहीं कहीं एक तोती है
जो दिनभर बस रोती है
कोई उसे जगा दे तो
बड़ी देर तक रोती है
सभी परिन्दे कहते हैं
वो कुम्भकरण की पोती है

कहानी सुनाते समय यह प्रयास रहे कि बच्चे भी साथ में हाव-भाव के साथ अभिनय

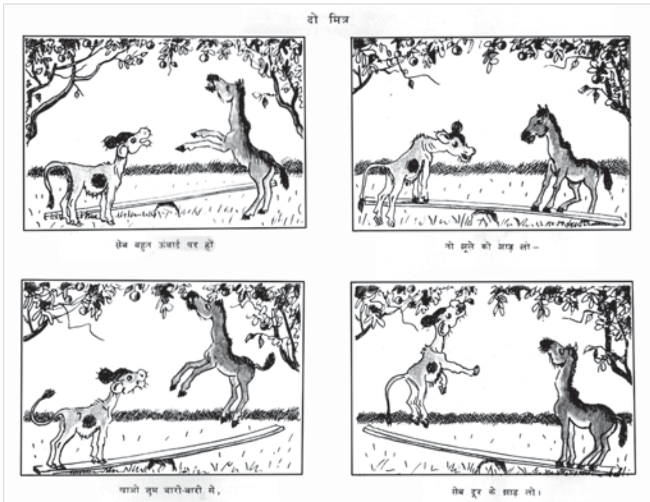
करें और हम भी बच्चों के साथ आई कान्टेक्ट बनाकर रखें। जैसा कि हम सभी जानते हैं, बच्चे शान्त नहीं बैठ सकते, उनमें अपार ऊर्जा होती है। उनकी ऊर्जा का उपयोग हम अपनी कक्षा को जीवन्तता देने और सीखने-सिखाने की प्रक्रिया को रुचिपूर्ण बनाने के लिए करें। एक चीज़ का और ध्यान रखना चाहिए कि कहानी का प्रयोग करते समय हमारी प्राथमिकता बच्चों का मनोरंजन और आनन्द प्राप्ति रहे। भाषा तो वे इस प्रक्रिया में ग्रहण ही कर रहे होंगे।

3. कहानी सुनाने के बाद उसपर बातचीत करना, जिसमें सोचने, अनुभव को शामिल करने व अनुमान लगाने के मौक़े हों : जैसे– कौन-सा पात्र अच्छा या बुरा था, ऐसा कहने के पीछे की समझ, आप किसी पात्र की जगह होते तो क्या करते, फिर आगे क्या हुआ होगा, क्या आपने ऐसा देखा है, कहानी से जुड़ी कोई समस्या उठाकर उससे उबरने के तरीक़ों को सुनना, आदि।

4. कहानी को आगे बढ़ाना : मौखिक रूप से कहानी में बच्चों को जुड़ने के लिए प्रेरित करना। फिर क्या हुआ होगा, आगे ऐसे हुआ होता तो, जैसे वाक्यों का उपयोग करके उनके अनुमान, कौतूहल, सोचने के कौशलों को विस्तार देने का प्रयास करना। बातचीत में बच्चों से आए विचारों को बोर्ड पर हूबहू बोलते हुए लिखना और बाद में उंगली रखकर पढ़ना।

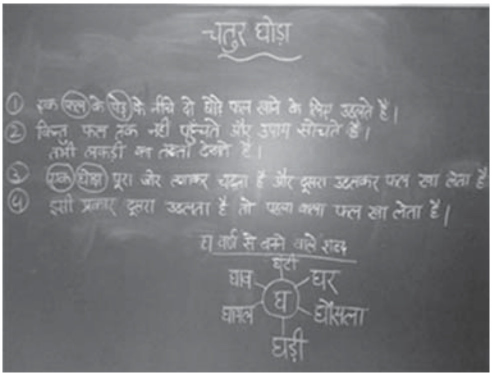
5. कहानी को चार्ट या बोर्ड पर बड़े-बड़े फॉण्ट में लिखकर, उंगली रखकर पढ़ना-सुनाना : इस प्रक्रिया में बच्चे ध्वनियों, शब्दों, वर्णों, मात्राओं, उच्चारण, वाक्यों, विराम चिह्नों, आदि से परिचित होते हैं। यदि सम्भव हो तो कहानी से जुड़ा चित्र भी उसमें शामिल करना चाहिए ताकि बच्चों को आकर्षक लगे। यह चार्ट हमें कक्षा में प्रिंट रिच के रूप में उपयोगी होता है। यह बच्चों की आँखों के सामने रहता है तो बच्चे उससे अपना जुड़ाव बनाए रखते हैं।

6. चित्रकथा के रूप में इस्तेमाल : आगे क्या हुआ, इससे घटनाओं के क्रम को समझने में मदद मिलती है। छोटे बच्चे चित्रों के प्रति अधिक आकर्षित होते हैं। रंगीन चित्रों के माध्यम से कहानी को कहा जा सकता है और उन चित्रों पर बच्चे क्या सोच रहे हैं, उन्हें क्या लगता है, सबकी प्रतिक्रिया लेते हुए कहानी को आगे बढ़ाते हैं।



चित्र 1

उक्त चित्र पर हम बच्चों के साथ चर्चा करते हुए कहानी को बढ़ाएँगे। मसलन, यह फल कैसे हैं। सम्भावित उत्तर गोल है। तो गोल आकार के कौन-कौन से फल होते हैं। सम्भावित उत्तर माल्टा, सेब, कीनू, अनार, आदि। अच्छा, तो मान लेते हैं कि यह सेब के फल हैं। अब सेब देखकर वह उसे खाना चाहते हैं लेकिन वहाँ तक पहुँच नहीं पाते। क्या करें कि वे सेब तक पहुँच जाएँ। और बातचीत करेंगे कि यह क्या लग रहा है, सम्भावित उत्तर लकड़ी का पट्टा, लकड़ी, आदि। उसके नीचे क्या है, बड़ा-सा पत्थर या बड़े पेड़ की जड़, आदि। कभी ऐसा झूला देखा है या झूला है, इसमें क्या होता है। इसमें एक तरफ़ अगर कोई ज़ोर लगाकर बैठे



चित्र 2



चित्र 3



चित्र 4

तो दूसरी तरफ़ उठ जाता है और इस प्रकार दोनों एक दूसरे को उछालते हैं और फल खा लेते हैं।

अब कहानी की इन पंक्तियों को बोर्ड या चार्ट पर बोल-बोल कर लिखेंगे और प्वाइंटर की मदद से ज़ोर से पढ़ेंगे। फिर बच्चों से कुछ शब्दों जैसे फल, पेड़, घोड़ा, एक आदि को उन वाक्यों में ढूँढ़ने को कहेंगे और उनपर गोला लगाएँगे। तत्पश्चात एक वर्ण जैसे 'घ' से बनने वाले शब्दों को बच्चों के साथ मिलकर बनाएँगे और बोर्ड पर लिखेंगे। फिर बच्चों को वे शब्द अपनी कॉपी में भी लिखने के लिए कहेंगे और अन्त में उन्हें अपने प्रिय फल का चित्र बनाने के लिए भी कहेंगे।

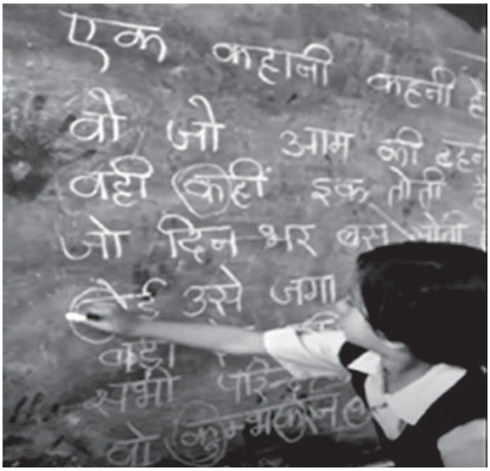
इसी प्रकार बाल साहित्य या पाठ्यपुस्तकों में चित्र-आधारित कहानियों को बच्चों के बीच में बैठकर किताब को उनकी तरफ़ करके और लिखे हुए वाक्यों पर उंगली रखते हुए पढ़कर और चर्चा करते हुए हम कहानी की गतिविधि करते हैं। इस तरह बच्चों को घर के माहौल से विद्यालय के माहौल में जोड़ने के लिए कहानियाँ सेतु का काम करती हैं।

7. रोल प्ले द्वारा : सुनाई गई कहानी में बच्चों को शामिल करते हुए रोल प्ले तैयार करना, सारे बच्चों को मौक़े देना, मुखौटे का उपयोग करते हुए अभिनय करने व बोलने के अवसर देना, उनसे बात करके जानना-समझना कि कैसा लगा। इससे रचनात्मकता और अभिव्यक्ति कौशल को बढ़ावा मिलता है।

8. कहानी के वाक्यों, शब्दों की पट्टियाँ बनाना और उन्हें क्रम से देखकर लगाने को कहना : इससे वाक्य विन्यास, शब्द भण्डार, शब्द के उपयोग की पहचान तो होती ही है, साथ ही यह समझ भी बनती है कि बोले हुए को लिखा और पढ़ा जा सकता है। वाक्यों की पट्टियाँ ज़्यादा हो सकती हैं, वहीं शब्द पट्टियाँ कुछ चयनित वाक्यों के शब्द लेकर बनाई जा सकती हैं। यह भी कि ऐसी कविताएँ जिनमें शब्दों का बहुत अधिक दोहराव है, उनको लेकर शब्द पट्टी बनाना ज़्यादा सार्थक हो सकता है।

9. कहानी से जुड़े पात्रों के चित्रों को उकेरना, उनमें अपनी पसन्द के रंग भरना और काग़ज़ या मिट्टी का उपयोग करते हुए कलाकृतियाँ बनाना : रचनात्मक कौशल को निखारने के लिए और उनकी उंगलियों की

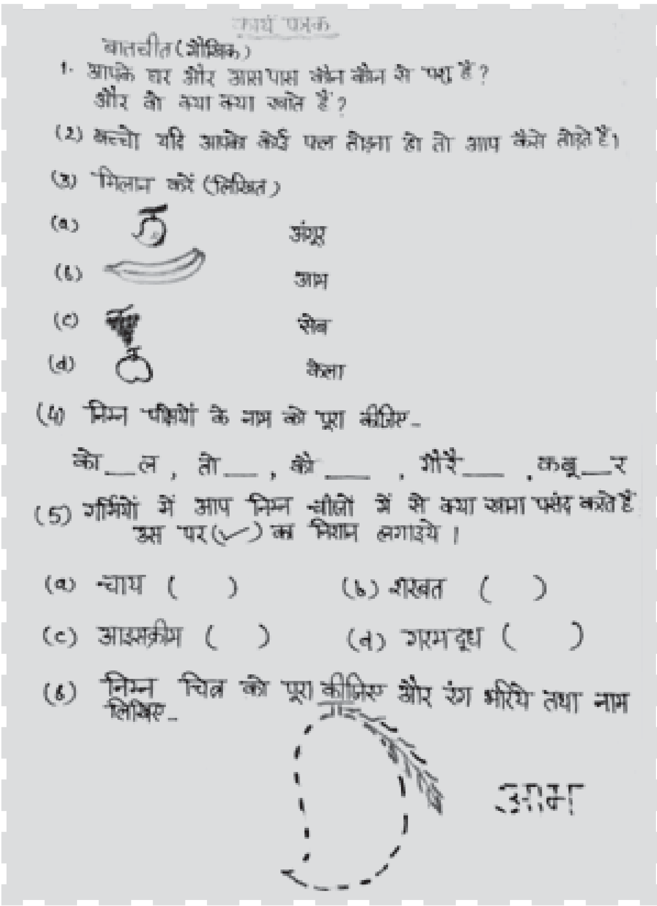
माँसपेशियों को लचीला बनाने में इस तरह के अवसर उपयोगी होते हैं। बच्चे चाहें तो कहानी में आए सभी पात्रों के चित्र बनाएँ, या जो पात्र उन्हें सबसे अच्छा लगा उसका चित्र। कहानियों में घटी घटनाओं के सिलसिलेवार चित्र भी बना सकते हैं।



चित्र 5

10. अक्षर–मात्रा की पहचान : बोर्ड पर लिखी कहानी को ख़ुद पढ़ना, बच्चों के साथ पढ़ना, बच्चों से पढ़वाने के बाद शब्दों, अक्षरों और मात्राओं पर गोला लगाने को कहना। लिखने के अभ्यास के तौर पर आसान दिखने वाले शब्दों, अक्षरों को देखकर बनाने को कहना। ऐसे कार्य जोड़े में कराए जा सकते हैं।

11. आकलन : कहानी की पूरी प्रक्रिया में निरन्तर आकलन का उपयोग सीखने के लिए होता ही रहता है। शुरुआती कक्षाओं में मौखिक कौशलों (सुनना, बोलना, पढ़ना) के विकास पर अधिक ज़ोर रहता है, वहीं लेखन के कौशलों (लिखना, रचनात्मक कार्य) की शुरुआत होती रहती है। कहानी को मौखिक रूप से अपने शब्दों में सुनाने को कह सकते हैं। मौखिक कौशल के अन्तर्गत क्या और कहाँ वाले प्रश्न अधिक होते हैं। इनके जवाब के क्रम में बच्चों के उत्तर एक शब्द या वाक्य में हो सकते हैं। इससे स्मरण शक्ति, क्रमबद्धता, ध्यानपूर्वक सुनने, समझकर बोलने का आकलन आसानी से हो जाता है। इसके साथ ही लेखन की क्षमता समझने के लिए वर्कशीट का इस्तेमाल किया जा सकता है। यह भी ध्यान देने वाली बात है कि शुरुआती कक्षाओं में पाँच या छः प्रश्न से अधिक नहीं होने चाहिए। अधिक प्रश्न होने पर बच्चों में रोचकता और उत्साह की कमी होने लगती है। उदाहरण के लिए, दूसरी कक्षा की वर्कशीट कुछ इस तरह से हो सकती है। देखें चित्र 6।


बातचीत (मौखिक)

1. आपके घर और आसपास कौन कौन से पशु हैं? और वो क्या क्या खाते हैं?

(2) बच्चो यदि आपको कोई फल तोड़ना हो तो आप कैसे तोड़ते हैं।

(3) मिलान करें (लिखित)

(a) अंगूर
(b) आम
(c) सेब
(d) केला

(4) निम्न पक्षियों के नाम को पूरा कीजिए-

को__ल, तो___, कौ___, गौरै___, कबू__र

(5) गर्मियों में आप निम्न चीजों में से क्या खाना पसंद करते हैं उस पर (✓) का निशान लगाइये।

(a) चाय ( )　(b) शरबत ( )
(c) आइसक्रीम ( )　(d) गरम दूध ( )

(6) निम्न चित्र को पूरा कीजिए और रंग भरिये तथा नाम लिखिए-

आम

चित्र 6

निष्कर्ष

सीखने की शुरुआत करने वाले बच्चों के लिए कहानियों का चयन करते समय यह ध्यान देने वाली बात होती है कि कहानी छोटी हो। उसका विषय बच्चों के दैनिक जीवन या उनके अनुभवों से जुड़ा हो। नए शब्दों व परिवेश से भी गुज़रने का अवसर हो। सुनने-सुनाने को विस्तार देते हुए हम बच्चों से भी अपने दादा-दादी, पापा-मम्मी या बड़े भाई-बहनों से कहानी सुनने और उसे पुनः कक्षा में सुनाने को प्रेरित व प्रोत्साहित कर सकते हैं। मैंने महसूस किया है कि बच्चे इस प्रकार के क्रियाकलाप में बहुत उत्साह से प्रतिभाग करते हैं। जब वे अपनी पसन्द की कहानी सुनाएँ तो उनको उच्चारण आदि पर टोकने की बजाय उनकी प्रशंसा की जाए। इन गतिविधियों में वे अपनी मातृभाषा (गढ़वाली आदि) का प्रयोग भी करेंगे, इसे हमें सहजता से लेना चाहिए। भाषा के रूप में कहानियों की पहुँच समग्र रूप में होती है। विद्यालय के पुस्तकालय में रंगीन, आकर्षक, बड़े-बड़े चित्रों वाली किताबें होती हैं, जिनमें प्रत्येक पेज पर बड़े से चित्र के नीचे एक लाइन लिखी होती है। इस प्रकार की पुस्तकें बच्चे को कहानी के परिप्रेक्ष्य में पढ़ने की आदत, अनुमान लगाने, कल्पना करने और कौतूहल जगाने का कार्य करती हैं और छोटे-छोटे वाक्यों की बनावट को समझने के लिए प्रेरित करती हैं। बच्चों के मन में कहानी के माध्यम से ललक व जिज्ञासा जगाने के उपरान्त उनको पढ़ने के लिए तैयार करना सहज होता है। कहानी शिक्षण की पूर्व तैयारी भाषा शिक्षण के उद्देश्यों और आधारभूत कौशलों को विकसित करने में निश्चित ही मददगार होती है।

संध्या पाण्डेय ने स्नातक और बीटीसी किया है। वर्तमान में राजकीय प्राथमिक विद्यालय अलमस, जौनपुर, टिहरी गढ़वाल में प्रधानाध्यापिका के पद पर हैं। वे विगत तेईस वर्षों से सरकारी सेवा में अध्यापन कार्य कर रही हैं। उसके पहले तीन वर्षों तक कान्वेंट स्कूल में शिक्षण कार्य करने का अनुभव भी रखती हैं। आप बच्चों के साथ शिक्षण करने के साथ-साथ रोचक गतिविधियों के माध्यम से शिक्षण में नवाचार करने में रुचि रखती हैं।

सम्पर्क : pandeysandhya1969@gmail.com

शिक्षकों के साथ पढ़ने-लिखने का सफ़र

कमलेश चंद्र जोशी

कोविड महामारी के दौरान बने तालाबन्दी के हालात में न सिर्फ़ बच्चों की पढ़ाई को जारी रखने के लिए ऑनलाइन वैकल्पिक कोशिशें की गईं वरन् शिक्षकों के दक्षता संवर्धन के प्रयासों को भी निरन्तर रखने के प्रयास किए गए। ऐसे ही प्रयासों के अन्तर्गत यह लेख पढ़ने-लिखने में दिलचस्पी दिखाने वाले शिक्षकों के एक छोटे समूह के साथ वॉट्सएप के माध्यम से जुड़कर किए गए कार्यों के अनुभव प्रस्तुत करता है। इन अनुभवों में शिक्षक समूह को पढ़ने के लिए दी गई सामग्री, उससे जुड़ाव बनाने व संवाद करने की प्रक्रिया आदि के विवरण शामिल हैं। सं. .

पृष्ठभूमि

प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षकों के साथ मिलना-जुलना होता रहा है। शिक्षकों से जब भी मुलाक़ात होती है तो उनसे अनौपचारिक रूप से यह बात भी ज़रूर होती है, मसलन, क्या आपको पढ़ने का समय मिल पाता है, आप क्या-क्या पढ़ते हैं? अधिकतर शिक्षकों का जवाब अकसर यह रहता है कि पढ़ने का समय नहीं मिल पाता। कुछ शिक्षक अख़बार, पत्रिकाएँ आदि पढ़ने की बात करते हैं परन्तु मुकम्मल रूप से किताबों के पढ़ने के अनुभव बहुत कम उभरकर आ पाते हैं।

शिक्षकों के पढ़ने के रुझान को देखकर यह प्रश्न भी मन में उभरता है कि जिस दौर में ये शिक्षक बने हैं उस दौरान उन्हें अपने आसपास, विद्यालय-कॉलेज में पुस्तकें पढ़ने का किस प्रकार का और कितना सान्निध्य मिला है?

हम लोग शिक्षक पेशेवर विकास पर कार्य कर रहे हैं और इसके लिए नियमित रूप से प्रशिक्षण / बैठकों आदि के माध्यम से शिक्षकों के साथ संवाद करते हैं। यहाँ भी मन में हमेशा यह बात उभरती रही है कि शिक्षक को तो नियमित रूप से पढ़ने-लिखने वाला होना ही चाहिए। बिना इसके उनकी कार्यशालाओं की समझ कैसे पुख़्ता होगी, शिक्षण का नज़रिया कैसे विकसित होगा, विषय की समझ कैसे बनेगी और विस्तार लेगी, वे अपने विषय को अच्छे-से कैसे पढ़ा पाएँगे, और बच्चों में पढ़ने का उत्साह कैसे बना पाएँगे?

पढ़ने पर शिक्षकों से बातचीत की शुरुआत

मार्च 2020 में कोविड महामारी के कारण विद्यालय बन्द हो गए थे। तालाबन्दी का एक लम्बा दौर शुरू हुआ। सभी अपने-अपने घर पर ही थे। शुरुआती एक-दो सप्ताह के बाद शिक्षकों से बात शुरू हुई। बातचीत से यह लगा कि क्यों न पढ़ने-लिखने में रुचि दिखाने वाले एक छोटे समूह के साथ वॉट्सएप समूह के माध्यम से संवाद शुरू किया जाए। इस समूह में विभिन्न विषयों से जुड़ी रोचक सामग्री प्रेषित की जाए जिसमें किसी भी विषय से जुड़े शिक्षक व शिक्षा के क्षेत्र में कार्यरत अन्य कार्यकर्ता भी अपना जुड़ाव बना सकें। सामग्री रोचक हो, बहुत लम्बी न हो और वह पन्द्रह-बीस मिनट में पढ़ भी ली जाए।



मुख्यतः ये एक पठन समूह बनाने और शिक्षा पर संवाद को सम्भव करने का प्रयास था।

साझा की गई सामग्री पर शिक्षकों की प्रतिक्रिया, उनके इंटरप्रिटेशन व बातचीत से यह समझ आया कि सामग्री को पढ़ लेने मात्र से ही काम नहीं चलेगा। उसको कैसे पढ़ें और एक शिक्षक के होने से कैसे जोड़ पाएँ, यह नज़रिया भी विकसित करना होगा। यह भी लग रहा था कि इसपर निरन्तर संवाद करने की ज़रूरत है। धीरे-धीरे यह भी समझ आने लगा कि अभी जो प्रयास कर रहे हैं वह पढ़ने का रुझान बनाने का एक ज़रिया मात्र हैं। व्यापक उद्देश्य तो शिक्षक का पेशेवर विकास ही है। इस तरह की सामग्री पढ़ना, उसपर प्रतिक्रिया लिखना व परिचर्चा करना शिक्षक समूह के क्षमतावर्धन का रास्ता भी है।

इस समूह की शुरुआत में कुल 14 सदस्य थे। आज लगभग 40 सदस्य इस समूह में हैं जिनमें अधिकांश महिला शिक्षिकाएँ हैं। ऐसा नहीं रहा है कि समूह के सभी सदस्य आलेखों पर अपनी प्रतिक्रिया देते रहे हों या साप्ताहिक परिचर्चा में शामिल हो रहे हों। सदस्यों की भागीदारी में विभिन्न कारणों से उतार-चढ़ाव रहता है। औसतन 28 सदस्य इसमें जुड़ते रहते हैं, और 15 से 18 साप्ताहिक परिचर्चा में आ जाते हैं। दो वर्षों में समूह की क़रीब सौ से ऊपर ऑनलाइन चर्चाएँ हो चुकी हैं, और सदस्यों को पढ़ने के लिए तीन सौ से अधिक आलेख प्रेषित किए जा चुके हैं। अब स्कूल नियमित होने के उपरान्त समूह में कक्षा के कामकाज के बारे में भी चर्चा की जाती है। इसपर कभी आगे लिखा जाएगा।

सामग्री कैसी-कैसी

इस पठन समूह को संचालित करने में प्रेषित सामग्री की केन्द्रीय भूमिका रही है। सामग्री चयन में ध्यान रखा गया कि वह पढ़ने में रोचक हो, नई दृष्टि देती हो, उसमें संवैधानिक मूल्य उभरते हों, भाषा सहज हो, प्रस्तुतिकरण अच्छा हो और स्कूल, कक्षा एवं शिक्षा से जुड़े कार्यकर्ता / व्यक्ति उससे अपना जुड़ाव बना सकें। उन्हें महसूस हो कि विभिन्न विषयों पर रोचक तरीक़े से भी लिखा जा सकता है। समूह में समय-समय पर कहानियाँ व कविताएँ भी साझा की गईं। इनके चयन का आधार यह रहा कि वे पाठ्यपुस्तकों में पढ़ी कहानियों से इतर हों। उनमें भी विषय, भाषा, प्रस्तुतिकरण को लेकर नयापन हो। चयनित सामग्री के कुछ उदाहरण हैं : अरुण कमल की रचनाएँ– '*हवा*', '*आलू*', '*सर्दियों की रात में गाय*', '*जल*'; विनोद कुमार शुक्ल की कहानी '*गोदाम*'; उदयन वाजपेयी की कहानियाँ– 'शेर और कवय्या' एवं '*घुड़सवार*'; प्रियम्वद की कहानी '*मुन्ना बुनाईवाले*', आदि।



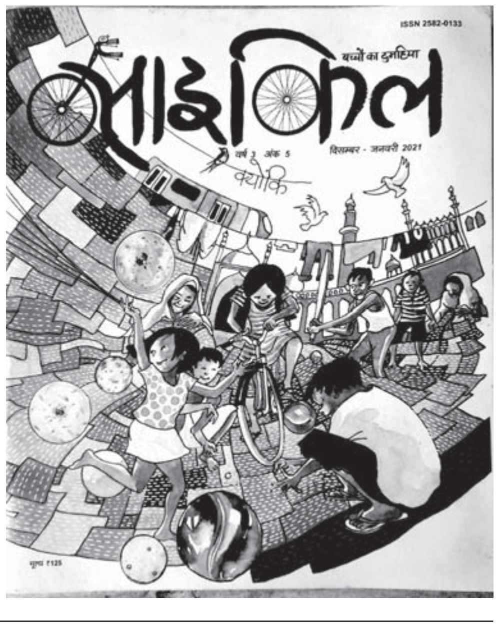


शिक्षा से जुड़े विभिन्न मुद्दों पर भी सामग्री शामिल की गई थी, जैसे– सी एन सुब्रह्मण्यम का लेख 'फ़ेल न किया तो क्या किया?'; मोहम्मद उमर के लेख 'वे स्कूल क्यों आते हैं' और 'भोजन की थाली से'; कैरेन हेडाक के लेख 'बच्चों से कैसे प्रश्न पूछें' और 'बच्चों के चित्र क्या बताते हैं' आदि। इनके अलावा, सुशील जोशी व किशोर पँवार के विज्ञान से जुड़े हुए लेखों को देखा जा सकता है। यह सामग्री विविध स्रोतों से चुनी गई जिनमें *चकमक, साइकिल, शैक्षणिक संदर्भ, खोजें-जानें, प्राथमिक शिक्षक, आधुनिक शिक्षा, पाठशाला भीतर और बाहर* आदि पत्रिकाएँ प्रमुख थीं। इसके अलावा, एनसीईआरटी व एकलव्य द्वारा विकसित पाठ्यपुस्तकों से भी सामग्री का चयन किया गया।

समूह की शुरुआत सप्ताह में हर दिन एक आलेख, यानी पूरे सप्ताह में छह आलेख, भेजने से की गई। कुछ समय बाद शिक्षकों के अन्य संस्थागत कार्यों में जुड़ाव के चलते सप्ताह में तीन आलेख भेजे जाने लगे। इन तीन आलेखों में एक परिप्रेक्ष्य से जुड़ा होता है, दूसरा किसी विषय पर रोचक जानकारीपरक, और तीसरा कहानी, कविता, संस्मरण, यात्रा-वृत्तान्त आदि होता है। कभी-कभी किसी विषय पर कोई अच्छी चर्चा उभर रही हो तो उससे ही जुड़ा दूसरा आलेख भेजा जाता है। समूह में प्रेषित सामग्री पर साप्ताहिक चर्चा व आलेखों पर प्रतिक्रियाओं को लिखने का काम भी रखा गया। इससे पता चलता था कि सामग्री को समूह के सदस्यों द्वारा कैसे समझा जा रहा है, सदस्य अपनी भूमिका के सन्दर्भ में इसका क्या मतलब निकाल पा रहे हैं, इससे वह अपने स्कूल व समाज को कैसे जोड़ पा रहे हैं, और साथ ही प्रतिक्रियाओं के द्वारा लिखने के कौशल के विकास की बात भी शामिल थी।

सदस्यों की प्रतिक्रियाएँ

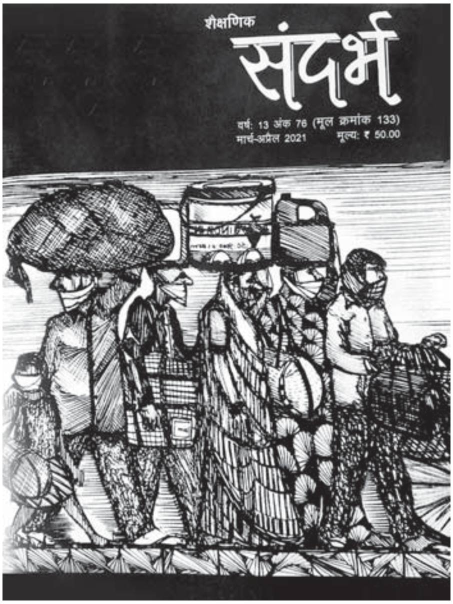
सामग्री ने निश्चित रूप से शामिल सदस्यों को सोचने के लिए प्रेरित किया। एस के पोट्टेकाट की मलयालम कहानी का हिन्दी अनुवाद 'हामिद खाँ' सदस्यों ने पढ़ा। यह पाकिस्तान भ्रमण पर गए लेखक की, एक मुस्लिम चाय वाले द्वारा की गई ख़ातिरदारी पर आधारित कहानी थी जो कुछ सदस्यों के ज़ेहन में घर कर गई। समूह के साथियों का हिन्दू-मुस्लिम के बारे में सोचने का विचार थोड़ा व्यापक हुआ जो मीडिया की बहसों ने बहुत संकुचित बना दिया था। कहानी को पढ़कर कुछ सदस्य अपनी स्मृतियों में चले गए। इसे



पढ़ते हुए एक सदस्य को अपने बचपन के गाँव के अल्पसंख्यक ताँगेवाले की याद आई और इसपर उन्होंने एक संस्मरण भी लिखा। इसी कहानी को पढ़कर एक अन्य सदस्या ने अपने मोहल्ले में कश्मीर से आने वाले एक कम्बल व शॉल बेचने वाले के अनुभव को जीवित किया जो मुस्लिम थे और उनका उनसे एक बेटी के समान रिश्ता था। वे उन्हें बाबा कहती हैं। वे उम्रदराज़ होते हुए भी उनसे हर वर्ष मिलने आते हैं, और इस सदस्य ने उनके लिए एक स्वेटर भी बनाया था। उन्होंने इस पूरे संस्मरण को लिखा। एक अन्य सदस्य ने अपने बचपन में साथ पढ़ने वाली अपनी दोस्त के बारे में बताया जो एक मुस्लिम परिवार से थीं।

साप्ताहिक परिचर्चा

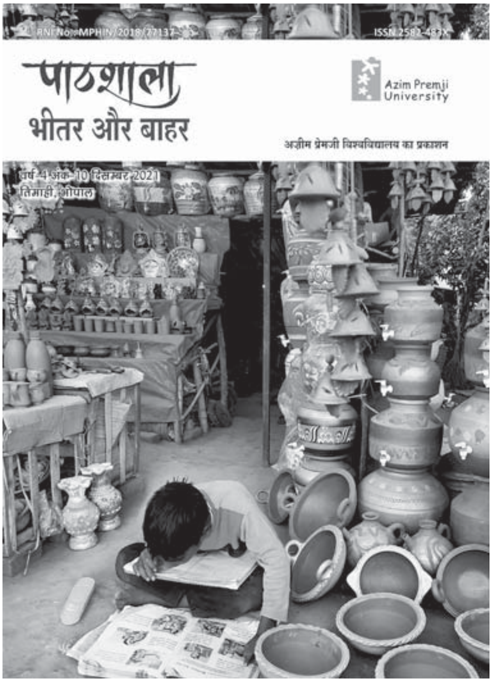
सप्ताह में होने वाली परिचर्चाओं का मुख्य उद्देश्य यह रहा कि शिक्षकों का ध्यान इस तरफ़ आकृष्ट किया जाए कि इस समूह से जुड़कर केवल पढ़ना ही नहीं है। उससे ज़्यादा महत्त्व की बात यह है कि सामग्री को कैसे पढ़ें? इस पूरी क़वायद का दीर्घकालिक उद्देश्य यह था कि शिक्षकों में शैक्षिक नज़रिया विकसित हो। इसमें यह भी ध्यान रखा गया कि यहाँ हम शिक्षकों के साथ कोई शैक्षिक परिप्रेक्ष्य पर कार्यशाला नहीं कर रहे हैं वरन् छोटे-छोटे आलेखों / कहानियों / कविताओं के माध्यम से संवैधानिक मूल्यों, शैक्षिक व विषय के नज़रिए के संकेत उभारे जा रहे हैं जिससे वे समझ को अपने अनुभवों से जोड़ सकें और उनमें शिक्षा व विषय से जुड़ने का उत्साह पैदा हो सके। समूह की सालभर की चर्चाओं को तो यहाँ समेटना मुश्किल है। इन्हें केवल उदाहरणों के द्वारा ही समझा जा सकता है।



पसन्दीदा आलेख

समूह के अधिकांश लोग शिक्षा के क्षेत्र में कार्य कर रहे थे। उनकी पसन्दीदा सामग्री भी इस क्षेत्र से सम्बन्धित थी। जैसे– कक्षा अनुभव, शिक्षक डायरी, बचपन के किसी शिक्षक से जुड़ी हुई याद, आदि। इसके साथ ही उन्हें समूह में भेजी गई कहानियाँ भी पसन्द आईं। जानकारीपरक लेख या विषयों से जुड़े सैद्धान्तिक लेखों का क्रम थोड़ा पीछे ही रहा।

इनमें से कुछ पसन्दीदा लेख थे : कक्षा के अनुभवों से जुड़ा 'शंकरजी का पसीना और जंगल का बनना' व माधव केलकर का आलेख 'बच्चों का पूर्वज्ञान बनाम वैज्ञानिक तर्क', *एनसीएफ़ 2005* के मार्गदर्शक सिद्धान्त, आदि। इसमें आगे यह भी बात है कि किस तरह से पारम्परिक ज्ञान को एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण से पड़ताल के दायरे में लाया जाता है और बच्चों से उसपर संवाद होता है। नंदा शर्मा का आलेख 'लालाजी के लड्डू से खुले चर्चा के द्वार' पढ़ने के दौरान भी कक्षा की प्रक्रियाओं पर अच्छी बात की गई। इसी तरह शिक्षकों की डायरी– जैसे जूलिया वेबर गार्डेन की डायरी, व शहनाज़ और पूजा बहुगुणा के सिलसिलेवार कक्षा अनुभवों पर लिखे लेखों को उन्होंने पसन्द किया। इन डायरियों को पढ़कर उन्हें समझ में आया कि डायरी में केवल यह नहीं लिखना है कि कक्षा में मैंने क्या किया, बल्कि यह भी कि उस समय बच्चे क्या कर रहे थे, कितने भाग ले रहे थे, आपको क्या लगा कि बच्चे क्या सोच रहे थे, किस तरह से भाग ले रहे थे, और यह भी कि कौन-सी चीज़ ठीक से नहीं हो पाई, आदि।



इसी तरह मोहम्मद उमर का लेख 'वे स्कूल क्यों आते हैं' पढ़कर शिक्षकों ने स्कूल में मिड-डे मील के महत्त्व को समझा। इसपर हुई चर्चा में कुछ शिक्षकों ने ईमानदारी से कहा कि इस लेख को पढ़ने से पहले हम मिड-डे मील को शिक्षकों पर एक बोझ समझते थे, लेकिन अब इसका महत्त्व समझ में आया है। 'भोजन की थाली से' लेख से हमारे देश की विविधता व खान-पान के बारे में बात हुई। उसमें यह बात स्पष्ट करने की कोशिश की गई कि दूसरी जाति, धर्म, राज्य के खान-पान, भाषा, पहनावा आदि को लेकर अकसर हमारे मन में कुछ सवाल रहते हैं और हमें अपना ही खान-पान, पहनावा व भाषा अच्छी लगती है। हमें अपने देश की बहुसांस्कृतिकता, बहुभाषिकता आदि को समझने की ज़रूरत है।

समूह में अगर कहानियों पर चर्चाओं की बात करें तो उदयन वाजपेयी की कहानी 'घुड़सवार' पढ़ते हुए उन्हें समझ में आया कि ऐसा अन्त नहीं होना चाहिए। एक शिक्षिका ने तो उसका अन्त ही बदल दिया और कहा कि ऐसा होना चाहिए। इसपर दूसरी शिक्षिका ने कहा कि कहानी का यह अन्त बिलकुल ठीक लग रहा है। जब यह कहानी के लेखक को प्रेषित किया गया तो उन्होंने वॉट्सएप पर अपनी टिप्पणी में शिक्षिका की मंशा की प्रशंसा की। उदयनजी की 'शेर और कवय्या' में शिक्षक कहानी की चित्रात्मकता को समझ पाए और प्रियम्वद की कहानी 'मुन्ना बुनाईवाले' भी उन्हें बहुत अच्छी लगी।

बहुत-से नए कवियों और कहानीकारों को भी सदस्यों ने पसन्द किया, मसलन, कुँवर नारायण, केदारनाथ सिंह, मंगलेश डबराल, विनोद कुमार शुक्ल, अशोक वाजपेयी, नरेश सक्सेना, उदयन वाजपेयी, आदि। उनका कहना था कि इस तरह की कविताओं से हमारा सामना पहली बार हुआ। उन्हें यह भी एहसास हुआ कि कविताओं के कई अर्थ निकल रहे हैं?

समूह के अवलोकन

समूह की चर्चाओं से समझ में आ रहा था कि सभी को नए विचारों से जूझने का मौक़ा मिल रहा था। समूह के एक सदस्य अकसर चर्चाओं में कहते कि हमें निरन्तर ख़ुद को सवालों के घेरे में लाना चाहिए और कक्षा में एक योजना के साथ काम करना चाहिए। समूह की सदस्य एक शिक्षिका ने अपने कक्षा अनुभवों पर आधारित एक लेख साझा किया। उन्होंने बताया कि आलेखों को पढ़ने के बाद मेरा भी लिखने का मन हुआ और यह अनुभव लिखा। आप इस लेख को पढ़ें और इसपर अपना फ़ीडबैक दें। आगे आप लिखने पर भी हमारे साथ बात करें, चाहें तो कार्यशाला कर लें, इसके साथ ही वे यह भी कह रही थीं कि इन लेखों को पढ़ने के बाद लिखने के तरीक़ों के बारे में भी समझ बढ़ी है।

एक अन्य सदस्य ने कहा कि अब वे पठन सामग्री को कुछ ज़्यादा ध्यानपूर्वक देखती हैं। पत्रिकाओं से मिली सामग्री पढ़ने के बाद उन्होंने *चकमक*, *प्लूटो* और *साइकिल* की अन्य रचनाओं को भी पढ़ा और अब इनका बच्चों के साथ

उपयोग कर रही हैं। उन्होंने इस समूह में कार्य करते हुए विगत महीनों में तीन आलेख लिखे जो प्रकाशित भी हुए हैं। इससे उन्हें बहुत अच्छा लग रहा है और उनका आत्मविश्वास भी काफ़ी बढ़ा है।

एक और सदस्य, जो समूह में शुरुआत से ही जुड़े हैं और लेखों पर अपनी संक्षिप्त टिप्पणी भी लिखते हैं, का कहना था कि पुस्तकालय, कक्षा की प्रक्रियाओं से जुड़े लेख पढ़कर उन्होंने समझा कि बच्चों के साथ कार्य कैसे होना चाहिए। पुस्तकालय के अनुभव पढ़कर उन्हें अपने स्कूल से जुड़े समुदाय के बच्चों के साथ पुस्तकालय संचालित करने की प्रेरणा मिली और उन्होंने इसपर कार्य शुरू किया है। उनका यह भी कहना था समूह में पढ़ी गई सामग्री से यह पता चल रहा है कि एक शिक्षक बनने के लिए हमें अपने विषय के अलावा और बहुत-से मुद्दों पर समझ बनाने की ज़रूरत है।

एक अन्य सदस्या का कहना था कि एक वर्ष में जितनी सामग्री हमने पढ़ी, उतनी शायद ही कभी पढ़ी हो। साथ ही बहुत-से नए विषयों, अवधारणाओं से सम्बन्धित सामग्री भी पढ़ी। शिक्षक अब अपने काम के बारे में भी महत्त्वपूर्ण बातों को देख पाते हैं और बातचीत में रेखांकित कर पाते हैं। नई सामग्री का इन्तज़ार भी कुछ सदस्यों को रहता है। नए सदस्यों को भी इस समूह से जोड़ने का प्रयास सदस्य कर रहे हैं। कई सदस्य यह भी कहते हैं कि बच्चों को भी पढ़ने के लिए अच्छी और अधिक सामग्री मिलने के साथ उन्हें भी ऐसे चर्चा के मौक़े मिलने चाहिए।

निष्कर्ष

यूँ तो इस समूह को बनाने का दूरगामी लक्ष्य यह रहा कि एक चिन्तनशील समूह बने और सदस्यों में पढ़ने के रुझान का विकास हो और वे अपने काम से जुड़ी व अन्य किताबें भी पढ़ें। इसकी पृष्ठभूमि में यह समझ है कि पढ़ना सभी के लिए ज़रूरी है। यदि शिक्षा में काम की दृष्टि से देखें तो यह और भी महत्त्वपूर्ण है। यह शिक्षक और शिक्षा में काम करने वाले कार्यकर्ता के लिए पेशेवर विकास का एक रास्ता भी है। दूसरी तरफ़, यदि हम बच्चों में पढ़ने-लिखने के प्रति रुझान पैदा करना चाहते हैं तो उसका उत्तर भी इसमें है कि हम ख़ुद भी पढ़ें-लिखें। मक़सद यह है कि अपने काम के बारे में, काम को समझने के बारे में एक संवाद की प्रक्रिया शुरू हो पाए। ऐसे संवाद का कुछ हिस्सा मौखिक हो सकता है और कुछ लिखित।

अन्त में, हम सिर्फ़ इतना कह सकते हैं कि समूह के शिक्षक साथी अपने अन्दर के सीखने वाले को बाहर ला पा रहे हैं और कुछ सार्थक पढ़ रहे हैं। आगे यह भी लग रहा है कि इसमें निरन्तरता बनाए रखना और नए विचारों के साथ कक्षा में कार्य करना ज़रूरी है।

(इस आलेख को तैयार करने में अपने साथियों साहबुद्दीन अंसारी व योगेन्द्र शुक्ला के साथ हुई चर्चाओं का सहयोग मिला है)

कमलेश चंद्र जोशी प्राथमिक शिक्षा से लम्बे समय से जुड़े हुए हैं। प्राथमिक शिक्षा से जुड़े विभिन्न विषयों– शिक्षक शिक्षा, बाल साहित्य, प्रारम्भिक भाषा एवं साक्षरता आदि में गहरी रुचि। वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, ऊधम सिंह नगर में कार्यरत।
सम्पर्क : kamlesh@azimpremjifoundation.org

बच्चों के नामों से पढ़ना–लिखना सिखवाना

मीनू पालीवाल

कक्षा में बच्चों को पढ़ना-लिखना सिखाने के लिए वर्णमाला-आधारित अर्थहीन, नीरस और रटवाने पर आधारित विधियों का उपयोग किया जाना आम बात है। लेखिका शुरुआती स्तर पर बच्चों को पढ़ना-लिखना सिखाने के लिए उनके नामों पर आधारित अर्थपूर्ण व रुचिकर गतिविधियाँ ईज़ाद करती हैं, और उन्हें कक्षा में आज़माती हैं। लेख में ऐसी ही 10 गतिविधियों को आयोजित करने के तरीक़ों और उनसे मिले अनुभवों का विश्लेषणपरक विवरण प्रस्तुत किया गया है। सं.

अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन में फ़ेलोशिप के दौरान बच्चों को पढ़ना-लिखना किस तरह सिखाया जाए, यह करके सीखने का मौक़ा मिला। आमतौर पर पढ़ना-लिखना सिखाने का मतलब अक्षर-मात्रा रटवाना समझ लिया जाता है, और यह अर्थहीन, नीरस प्रक्रिया एक लम्बे समय तक दोहराई जाती है। पढ़ना-लिखना सिखाने में अर्थ की भूमिका बहुत महत्त्वपूर्ण है यह समझना ज़्यादा मुश्किल बात नहीं है, पर बावजूद इसके आज भी वर्णमाला रटवाने का काम बदस्तूर जारी है।

सिल्विया एश्टन वार्नर अपनी किताब 'अध्यापक' (*टीचर*) में 'इमोशनली चार्ज्ड' शब्दों से पढ़ना सिखाने की बात करती है। 'इमोशनली चार्ज्ड' यानी ऐसे शब्द जिनका सीखने वाले से एक भावनात्मक रिश्ता है, सीखने वाला उससे जुड़ पाता है और इसीलिए इन शब्दों का उसकी ज़िन्दगी में महत्त्व है। मसलन, किसी बच्चे के लिए उसकी माँ का नाम, उसका स्वयं का नाम, उसके दोस्तों के नाम, या जिससे बच्चों को डर लगता है, जैसे– साँप। इन शब्दों से बच्चों के दिमाग़ में शायद एक ज़्यादा साफ़ और गहरी मानसिक छवि बनती है, चित्र बनता है। हर बच्चा उसकी कक्षा में पढ़ने वाले बच्चों के नामों को बार-बार सुनता है, बोलता है, कक्षा के हर बच्चे को वो जानता है, कुछ बच्चे उसके ख़ास दोस्त भी होते हैं जिनसे उसका ख़ास लगाव होता है और इन सभी दोस्तों के नाम भी 'इमोशनली चार्ज्ड' शब्दों की श्रेणी में रखे जा सकते हैं। ऐसे शब्दों से बच्चों को पढ़ना सिखाने की प्रक्रिया अर्थपूर्ण और रुचिपूर्ण बन जाती है।

मैंने भी बच्चों में अपना नाम लिखना सीखने की इच्छा देखी। मुझे लगा कि उनके नामों से ज़्यादा उनके लिए शुरुआती स्तर पर क्या महत्त्वपूर्ण हो सकता है। पहली कक्षा में ज़्यादातर स्कूलों में बच्चे शायद काफ़ी कम शब्द लिखना और पढ़ना जानते हों, परन्तु अपना नाम लिखना और पढ़ना (पहचानना) लगभग सभी जानते हैं। शुरुआत में बच्चे नाम को किसी चित्रकारी के तौर पर पहचानते हैं। वे ध्वनि चिह्नों की आकृति को बहुत बारीक़ी से नहीं देख पाते। बच्चे लिखे हुए को चित्रों से अलग करके बारीक़ी से देखने-समझने लगें, यह अवधारणा निर्माण कर पाएँ कि बोले जा रहे शब्द कुछ ध्वनियों से मिलकर बने हैं, इसके लिए हमने बच्चों के नामों के साथ कुछ गतिविधियाँ बनाईं।

बच्चों के नामों के साथ बनाई गई इन गतिविधियों को कक्षा में करके देखा, जिनमें मेरे साथ-साथ बच्चों को भी बहुत मज़ा आया। जब किसी कार्य को करने में बच्चों को मज़ा आता है तो इससे उनका सक्रिय प्रतिभाग सुनिश्चित होता है। इन गतिविधियों के द्वारा कक्षा 1 में चयनित 'हिन्दी की वर्णमाला के अक्षरों की आकृति और ध्वनि को पहचानते हैं' इस प्रतिफल को प्राप्त करने पर काम किया गया।

पहली गतिविधि

दीवार पर लगे उपस्थिति चार्ट पर अपनी उपस्थिति दर्ज करना। इसमें बच्चे अपने नाम के साथ-साथ तारीख़, दिन, अपने नाम के आगे-पीछे किन बच्चों के नाम लिखे हैं, उनसे भी परिचित होते हैं।

कक्षा अनुभव

इस गतिविधि के दौरान मैंने देखा कि जसकरण और विदेशिनी जैसे ज़्यादा अक्षर वाले नाम अधिकतर बच्चे पहचान रहे थे। शब्द कैसा दिखता है वह भी शुरुआती दौर में, बच्चों को काफ़ी मदद देता है। असल में, इस तकनीक का उपयोग हम बड़े भी ख़ूब कर रहे होते हैं, लेकिन हम अपने पठन पर इतना ध्यान नहीं देते और इस वजह से हम स्वयं भी हमारे इस कौशल के बारे में सचेत नहीं होते।

उपस्थिति दर्ज करते-करते जब कुछ दिन बीत गए तो चार्ट फट गया और दीवार से गिर गया। चार्ट को कक्षा में रखे कचरे के डब्बे में डाल दिया गया। उसी दिन कक्षा में सब बच्चों को स्कूल में जो-जो उन्हें दिखता है, उसका चित्र बनाने और नाम लिखने की गतिविधि करवाई जा रही थी। सभी बच्चों को एक ख़ाली पृष्ठ देकर कहा गया कि वे अपने पन्ने पर पहले अपना नाम लिखें और फिर दिया गया काम शुरू करें। बच्चे को अपना नाम ठीक से लिखना नहीं आया, उसने कचरे के डब्बे से चार्ट निकालकर अपना नाम पहचान कर अपने पन्ने पर लिखा।

दूसरी गतिविधि

कोई भी एक ध्वनि, जैसे– 'न' किस-किस बच्चे के नाम में आती है, बच्चों से पूछना। जब मैं यह गतिविधि कर रही थी तब बच्चों ने यह भी बताया कि आधा 'न' अक्षर भी कुछ नामों में आता है, जैसे– भूपेन्द्र के नाम में आधा 'न' आता है। यह कितना सूक्ष्म अवलोकन है! जब यह गतिविधि करवाई जा रही थी तो एक बच्ची कक्षा में लगाए गए उपस्थिति चार्ट को देखकर बताने लगी कि किन-किन बच्चों के नाम में 'न' आता है। बच्ची ने पूछे गए सवाल का उत्तर देने के लिए जो आइडिया लगाया वह देखकर ख़ुशी महसूस हुई।

तीसरी गतिविधि

बच्चों के नामों को ध्वनियों में तोड़ना। पहले शिक्षक बहुत-से नामों को बच्चों से दोहराव करवाते हुए ध्वनियों में तोड़ने की प्रैक्टिस करवाएँ। यही काम बच्चे करें। इसके बाद शिक्षक किसी बच्चे के नाम के टुकड़े बोलें और बच्चों से पूछें कि इन ध्वनियों से मिलकर किस बच्चे का नाम बनता है।

कक्षा अनुभव

स्कूल की कक्षा 2 में अभिलाषा नाम की एक बच्ची थी। मैंने इस नाम को बहुत धीरे-धीरे ध्वनियों में तोड़ा। बाक़ी बच्चे नहीं पहचान पाए, पर अभिलाषा समझ गई कि उसका नाम है। मैंने इशारे से उसे थोड़ा ठहरने को कहा। बच्चों को चुनौती दी कि तुम्हारी ही कक्षा के किसी बच्चे का नाम है, ज़रा दिमाग़ पर ज़ोर डालो। बच्चे अनुरोध करने लगे कि मैं दोबारा उस नाम को ध्वनियों में बोलूँ। 4-5 बार में बच्चे पहचान गए कि किसका नाम टुकड़ों में लिया गया था। इस प्रक्रिया में बच्चों ने ख़ुद से इस बात पर ध्यान दिया कि नाम छोटा है या लम्बा, पहली ध्वनि क्या है, और उस ध्वनि से कक्षा में किसका नाम शुरू होता है। बच्चों को संघर्ष करते देखने में बहुत मज़ा आया। क्या यह विचारणीय बात नहीं है कि जिस बच्ची का नाम था वह पहली बार

में ही समझ गई कि उसके नाम की ही ध्वनियाँ हैं जो अलग-अलग करके बोली गई थीं (अ भि ला षा) और बाक़ी बच्चों को समय लगा। यह घटना भी इस बात का प्रमाण है कि जिन शब्दों से पढ़ना-लिखना सिखाया जाना चाहिए उन शब्दों की सीखने वाले बच्चों के लिए अहमियत होनी चाहिए।

चौथी गतिविधि

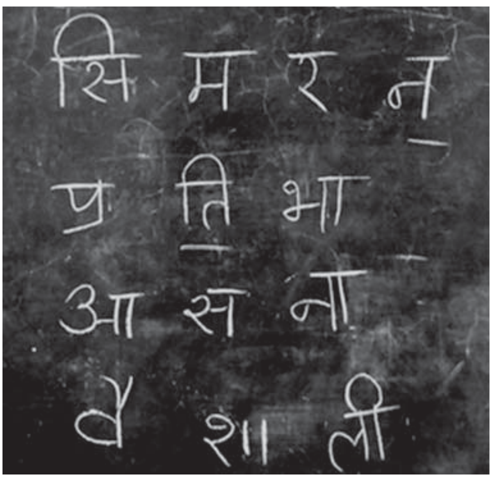
अकसर स्कूलों में बच्चे 'क', 'ख' देखकर कबूतर या ख़रगोश बोलते हैं। 'क' से कबूतर और 'ख' से ख़रगोश की बजाय हमें बच्चों की यह समझने में मदद करनी होती है कि हर शब्द कुछ अक्षरों से मिलकर बना है। जब उनके नाम से अक्षरों को एक-एक करके मिटाया और पढ़ा जाता है तो बच्चों का ध्यान इस ओर जाता है।

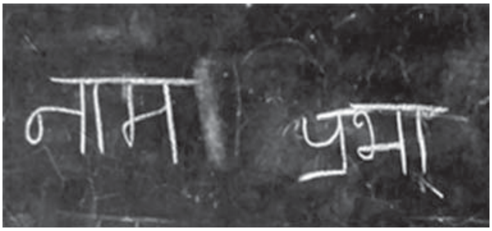
जब बच्चे मौखिक स्तर पर शब्दों को ध्वनियों में तोड़ना सीख जाएँ तब यही गतिविधि लिखित तौर पर करना और इस माध्यम से बच्चों को अक्षरों की आकृति से परिचित करवाना। पहला अक्षर मिटाना, दूसरा अक्षर मिटाना, अन्तिम अक्षर मिटाना और बच्चों से पढ़वाना। उदाहरण के लिए, रागिनी नाम को देखें :

'रा' मिटाने के बाद पढ़ने बोलना : _गिनी

'गि' मिटाने के बाद पढ़ने बोलना : रा_नी–रानी

'नी' मिटाने के बाद पढ़ने बोलना : रागि_





बच्चों के द्वारा बनाए गए शब्द

इस गतिविधि में बच्चों को ख़ुद का नाम होने से ध्वनियों के लिखित रूप को पहचानने में मदद मिलती है। जैसे– बच्चों को पता है कि 'रागिनी' नाम लिखा है। यदि इसको टुकड़ों में बोर्ड पर लिखा– 'रा' 'गि' 'नी', तब बच्चे यदि भूल गए कि 'नी'– यह क्या लिखा है तो बच्चे रागिनी बोलकर देखेंगे और बोलकर देखने से अन्तिम ध्वनि की आकृति को पहचान लेंगे।

पाँचवीं गतिविधि

कुछ बच्चों के नामों को ध्वनियों में तोड़कर बोर्ड पर लिखें। इनके टुकड़ों को उंगली रखकर पढ़ें। फिर अलग-अलग नामों से टुकड़े जोड़कर नए शब्द बनाएँ। बच्चों ने आसना से 'ना' लेकर सिमरन के 'म' से जोड़कर 'नाम' शब्द बना दिया। इस तरह से हम बच्चों को उनके नामों की मदद से अन्य शब्द ख़ुद से बनाने और पढ़ने के क़ाबिल बना पाएँगे। इस पूरी प्रक्रिया में बच्चे लगातार मानसिक तौर पर संलग्न होंगे क्योंकि ये काम बच्चों को एक खेल / पज़ल की तरह लगता है।

छठवीं गतिविधि

नामों को कुछ इस तरह लिखकर पढ़वाना।

1	अभिलाषा	रानी
2	अभिला_	रा
3	अभि_ _	
4	अ_ _ _	

- अ + रानी = अरानी
- अभि + रानी = अभिरानी
- अभिला + रानी = अभिलारानी

इस गतिविधि में बच्चों को ठहरकर शब्दों को देखना, पहले से जो शब्द पहचान आते हैं उनकी मदद से डिकोडिंग की प्रक्रिया सीखने पर लगातार काम होता है।

सातवीं गतिविधि

बच्चों से उनकी कक्षा के बच्चों के नाम अक्षरों की संख्या के आधार पर वर्गीकृत करवाना।

नामों को कुछ इस तरह लिखकर पढ़वाना।

1	दो अक्षर वाले नाम	तीन अक्षर वाले नाम	चार अक्षर वाले नाम
2	मीना	मिताली	अनामिका
3	मीता		
4			

एक-सी ध्वनि से ख़त्म होने वाले नाम
रानी
विदेशिनी
यामिनी

आठवीं गतिविधि

बच्चों की कापियाँ, पन्ने उन बच्चों से बँटवाना जिनको पढ़ने में ज़्यादा परेशानी है। लिखना-पढ़ना किसी उद्देश्य के लिए होना चाहिए। जब हम बच्चे से कहेंगे कि उसे कापियाँ बाँटनी हैं, बच्चे को नाम पढ़ने का एक उद्देश्य मिलेगा। वह सिर्फ़ इसलिए नहीं पढ़ रहा होगा कि उसकी शिक्षिका ने उसे पढ़ने के लिए कहा है।

इस काम को करने के लिए बच्चा, कॉपी में किसका नाम लिखा है, यह पता करने के लिए किसी भी तरह की मदद लेने के लिए स्वतंत्र है। मेरे अनुभव में मैंने पाया कि इस काम को करने के लिए वे बच्चे भी उत्सुक होते हैं जो अभी सबका नाम नहीं पहचानते। पर कुछ ही दिनों में यह काम करने के दौरान वे सभी के नाम पहचानने लगते हैं।

नौवीं गतिविधि

नाम के अक्षरों का क्रम उलट-पुलट करना और पहचानने के लिए कहना।

जैसे– विदेशिनी – विशिदेनी

अजय – जयअ

शुरुआत में पहली ध्वनि को न ही बदलें तो बेहतर होगा। धीरे-धीरे पहली ध्वनि भी बदल सकते हैं। इस गतिविधि को करने के दौरान किसका नाम लिखा है, यह पता लगाने के दौरान बच्चे कुछ मानदण्ड तय कर रहे होंगे, मसलन, कितने अक्षर का नाम है, हमारी कक्षा में किस-किस का नाम उतने ही अक्षर का है। फिर उनका ध्यान ध्वनियों की ओर जाएगा कि किसके नाम में ये ध्वनियाँ आती हैं।

दसवीं गतिविधि

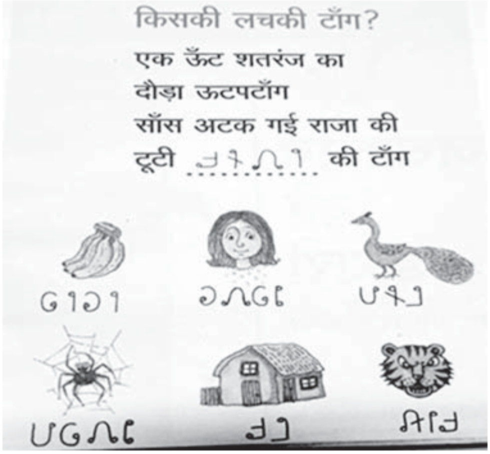
बच्चों से इस तरह की पहेली बनाने को कहना।

पहेली 1 : मैं एक ऐसे बच्चे के बारे में बात कर रही हूँ जिसका नाम 3 अक्षर का है, और वो काफ़ी कम बोलती है। बताओ, मैं किसके बारे में बात कर रही हूँ?

पहेली 2 : मैं जिसके बारे में बात कर रही हूँ उसका नाम 'अ' अक्षर से शुरू होता है, और वो रोज़ स्कूल आता है। बताओ, मैं किसके बारे में बात कर रही हूँ?

ऊपर लिखे क़िस्सों को पढ़कर हम यह समझ सकते हैं कि किसी गतिविधि को करने का उद्देश्य बच्चों को पता हो तो वे उस गतिविधि में सक्रिय रूप से शामिल होते हैं और किसी काम को पूरा करने के तरीक़े ढूँढ़ते हैं। ऊपर सुझाई गई गतिविधियों से हम बच्चों को सिर्फ़ कुछ अक्षर नहीं सिखा रहे, बल्कि उनमें अवधारणा

निर्माण पर काम कर रहे हैं कि शब्द ध्वनियों से मिलकर बनते हैं, और ध्वनियों को प्रतीकों (अक्षर) के माध्यम से लिखा जाता है और उनके (बच्चों) द्वारा बोली गई बात लिखी भी जा सकती है। बच्चे कई बार शब्दों को ध्यान से नहीं देखते, इन गतिविधियों से बच्चों को लिखे हुए शब्दों की आकृतियों को ज़्यादा ध्यान से देखने की सहज ज़रूरत महसूस हुई। जैसे कि हमने अपने अनुभव में देखा है कि कुछ बच्चे 'क' को ही कबूतर पढ़ देते हैं। इन गतिविधियों को थोड़ा विस्तार भी दिया जा सकता है। जैसे– किसी एक बच्चे के बारे में कुछ वाक्य बच्चों से पूछकर लिखना, बच्चों के नामों को लेते हुए कोई छोटी कहानी बनाना आदि। *सीखने के प्रतिफल* दस्तावेज़ कहता है, "पहली बार स्कूल आने वाला बच्चा बहुत-से शब्दों और उनके अर्थों से परिचित होता है। चिह्न और उनसे जुड़ी ध्वनियाँ बच्चों के लिए अमूर्त होती हैं, इसलिए पढ़ने का प्रारम्भ अर्थपूर्ण सामग्री से और किसी उद्देश्य के लिए होना चाहिए।"



प्लूटो पत्रिका से साभार

बच्चों के नामों को इस्तेमाल करके हम अर्थपूर्ण और उद्देश्यपूर्ण रूप से काम कर रहे होंगे। इस प्रक्रिया में हमारी और बच्चे की भागीदारी बराबर होगी। बच्चे सिर्फ़ सुनकर हुक्म की तामील नहीं कर रहे होंगे। बच्चे जिस प्रक्रिया से पढ़ना सीख रहे होंगे उस प्रक्रिया को ऊपर दी गई पहेली को हल करने के दौरान आप अनुभव कर सकते हैं।

मीनू पालीवाल अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन में 2017 से काम कर रही हैं। आप फ़ेलोशिप प्रोग्राम के ज़रिए अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन से जुड़ीं। इससे पहले उन्होंने 6 वर्ष आईसीआईसीआई बैंक में काम किया। वे अपने मन में आने वाले सवालों की तलाश में शिक्षा और शिक्षण प्रक्रिया से जुड़ीं। प्राथमिक कक्षाओं में बच्चों के साथ काम करना उन्हें अच्छा लगता है।

सम्पर्क : meenu.paliwal@azimpremjifoundation.org

अख़बार के रास्ते भाषा शिक्षण का अनुभव

अर्चना द्विवेदी

लेखिका ने अख़बार को शिक्षण सामग्री बनाया और उसको लेकर कक्षा में भाषा सीखने-सिखाने का काम किया है। बच्चे समाचार पत्र की समझ रखते हैं ये उनकी बातचीत में उभरकर आता है। वे आगे बच्चों से समाचार पत्र की ख़बरों को लिखने के लिए कहती हैं और बच्चे इसमें जुट जाते हैं।

बच्चों के लिए लेखन को अर्थपूर्ण बनाना कैसे हो सकता है, यह लेख इसकी भी एक झलक देता है। सं.

भूमिका

भाषा को पढ़ना-लिखना सीखना और लिखित रूप में समझना भाषा शिक्षण के आवश्यक कौशल हैं। पढ़ना-लिखना जीवन को समृद्ध बनाने के साथ ही उसे समझने में भी मदद करता है। इस कौशल से हम दुनिया में बदलाव की उम्मीद भी कर सकते हैं क्योंकि ये आपके समझने की क्षमता का विकास भी करता है।

विद्यालय में बच्चों को लिखने व पढ़ने के जितने अधिकाधिक अवसर हम दे पाएँ, उतना बेहतर है। पढ़ने-लिखने की प्रक्रिया में बच्चे भाषा से जुड़े अन्य कौशल, जैसे– अवलोकन करना, सवाल पूछना, कल्पना करना, जीवन में इनकी प्रासंगिकता समझना आदि भी सीखेंगे, और लिखने-पढ़ने के माहौल में इन कौशलों में कुछ बढ़ोतरी कर पाना सबके लिए सम्भव होगा ही।

प्रिंट समृद्ध वातावरण एक प्रकार की ललक उत्पन्न करता है। प्रिंट सामग्री में मौजूद आकर्षक रंग, रूपरेखा, चित्रांकन पाठक को, चाहे वह छोटा हो या बड़ा, कम-से-कम एक बार सोचने और देखने के लिए मजबूर करते हैं। यह इस माहौल में पहली बार आने वाले छात्रों की रुचि को तो 'एक बार' ट्रिगर करता ही है। यहाँ 'एक बार' के महत्त्व को समझना और भी महत्त्वपूर्ण हो जाता है क्योंकि मेरी कक्षा के ज़्यादातर बच्चे ऐसी पृष्ठभूमि से आते हैं जहाँ उन्हें छपी हुई सामग्री का कोई ख़ास एक्सपोज़र नहीं मिल पाता है।

अख़बार से सीखना

छात्रों को भाषा सिखाने के लिए अख़बार भी एक अच्छी सामग्री है, ऐसा कहा जा सकता है। अपने अनुभवों में मैंने पाया है। कि प्राथमिक कक्षाओं में भाषा शिक्षण की दृष्टि से अख़बारों का प्रयोग सीमित होता है। जहाँ कहीं अख़बारों का प्रयोग होता भी है, वहाँ यह सूचना प्राप्त करने या सामान्य और सतही जानकारी तक ही सीमित है।

मैंने अख़बार को लेकर कक्षा 3 के बच्चों के साथ काम किया और मेरे अनुभव काफ़ी रोचक रहे। इस लेख में मैंने इन्हीं अनुभवों को रखा है।

कक्षा की प्रक्रिया और अनुभव

लॉकडाउन के पश्चात जब काम शुरू किया तब बच्चों के सीखने के स्तर को देखते हुए

कक्षा 3 के बच्चों को दो समूहों में विभाजित किया गया था। एक समूह में वे बच्चे थे जो कोविड समय के दौरान भी स्कूल व समुदाय की कक्षाओं से लगातार जुड़े रहे थे जबकि दूसरा समूह नए बच्चों का था और वे कुछ महीनों से ही हमारे साथ थे। दोनों समूहों के साथ काम करने की रूपरेखा अलग-अलग बनाई गई और इनके साथ की जाने वाली कुछ गतिविधियाँ भी अलग थीं।



चित्र : प्रशान्त सोनी

एकलव्य द्वारा प्रकाशित प्रारम्भिक साक्षरता पर द्विभाषी पुस्तकों को पढ़ते हुए मैंने महसूस किया था कि ये पुस्तकें पठन कौशल की अलग-अलग दक्षता रखने वाले छात्रों के लिए प्रासंगिक हैं। इसी श्रृंखला की एक पुस्तक *अख़बार* थी। मेरी योजना ऐसी ही किताबों के इर्द-गिर्द विचारों और संरचित पठन-पाठन का निर्माण करना थी।

अख़बार से जुड़े अनुभव

अपनी योजना को आगे बढ़ाते हुए मैंने छात्रों से निम्नलिखित बातचीत की :

1. हम सभी कवर पेज से इस किताब को पढ़ना शुरू करेंगे।

2. सबसे पहले कवर पेज को देखो और बताओ कि इस पेज में क्या-क्या दिख रहा है?

लगभग सभी छात्रों ने समवेत स्वर में उत्तर दिया कि एक आदमी अख़बार पढ़ रहा है। बातचीत को आगे बढ़ाते हुए मैंने उनसे पूछा :

1. क्या आप जानते हो अख़बार क्या होता है?

2. क्या आपने कोई अख़बार देखा है?

सभी ने सकारात्मक उत्तर दिया और उत्साह के साथ सिर भी हिलाया। ऐसे प्रश्न काफ़ी सामान्य लग सकते हैं लेकिन ये काफ़ी अहम हैं। ये बच्चों के अवलोकन और समझ को जगह देते हैं और उनका उत्साहवर्धन करते हैं क्योंकि इस तरह के प्रश्नों से वे यह समझ पाते हैं कि कक्षा की बातचीत उनके रोज़मर्रा अनुभवों से जुड़ी हुई है।

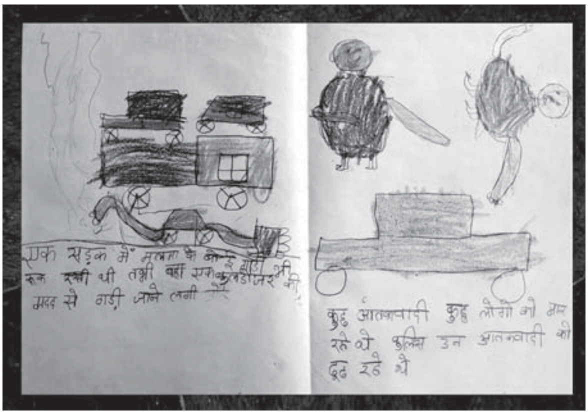
ख़ैर... इसी बात को ध्यान में रखते हुए मैंने अपना अगला सवाल पूछा कि आप सभी ने अख़बार देखा है तो आप उसमें छपी चीज़ों के बारे में क्या जानते हैं?

बच्चों ने मेरे सवाल का जवाब देना शुरू कर दिया। मैंने उनसे कहा कि मैं एक-एक करके आपके जवाब सुनूँगी। मुझे आपके हाथ देखने दो और उसके बाद मैं आपका नाम पुकारूँगी और तब आप जवाब दे सकते हैं। इस रणनीति के पीछे मक़सद था कि जो बच्चे अभी सोच नहीं रहे हैं उन्हें सोचने का मौक़ा मिले, साथ ही निर्देशों को स्पष्ट रूप से समझकर वे भी अपने जवाब तय कर सकें।

लगभग सभी बच्चों ने इस प्रश्न का उत्तर दिया। कई बच्चों ने 3 या 4 बार जवाब दिया। मैं उनके उत्तर बोर्ड पर लिख रही थी और आए जवाबों को अलग-अलग शीर्षक और उपशीर्षकों में बाँटती जा रही थी। मैंने समाचारों

को उनकी प्रकृति के अनुसार वर्गीकृत करने का प्रयास किया। वर्गीकरण एक महत्त्वपूर्ण कौशल है जिसे विषय सामग्री के अनुरूप श्रेणियाँ बनाते हुए इस्तेमाल किया जा सकता है। कुछ ही देर में, मेरे पैटर्न को पकड़ते हुए एक छात्र ने अन्य छात्रों की प्रतिक्रियाओं को भी लिखी गई श्रेणियों में वर्गीकृत किया। कुछ ख़बरों के लिए बच्चे ख़ुद ही बोलने लगे कि यह पहले से ही लिखा हुआ है। जब मैं पूछती कहाँ, तो वह सब मिलकर मुझे उसकी जगह बताते। यह उनके धीरे-धीरे शब्दों और वर्गीकरण के पैटर्न से परिचित होने का संकेत था।

समाचार पत्रों में बच्चों ने जिन समाचारों का उल्लेख किया, वे थे :



सामान्य जानकारी, जनता के बारे में, प्रधानमंत्री के बारे में, लोगों की फ़ोटो, सूचना, चोरी के बारे में ख़बरें, मृत व्यक्तियों की फ़ोटो, यात्रा की ख़बर, जंग जीतने की ख़बरें, फ़ौजी और लोगों के मरने की ख़बरें, गाड़ी गिरने की ख़बरें, घर गिरने की ख़बर, बाढ़, तूफ़ान, भूस्खलन, खेल और प्रतियोगिता की ख़बरें, नौकरी लगने वालों की फ़ोटो छपती है, मंत्रियों को माला पहनाने की फ़ोटो, स्कूल जब प्रथम आता है उसकी ख़बर, फ़िल्म की ख़बर, बॉलीवुड की ख़बरें, आदि।

इसके बाद हमने किताब पढ़ी और तस्वीरों के साथ दिए गए शब्दों को भी। मैंने पढ़े गए पृष्ठों से कुछ एक-पंक्ति वाले प्रश्न भी पूछे। बाद में अपनी योजना को आगे बढ़ाते हुए मैं कक्षा में अख़बार लाई और छात्रों से अख़बार के पन्ने पलटने व उसे देखने के लिए कहा। उन्होंने अख़बार को देख, पन्ने पलटकर, कुछ सरसरी तौर पर पढ़कर उसकी जगह पर रख दिया। अब मैंने उन्हें दोतरफ़ा कोरा काग़ज़ दिया और उन्हें अपना अख़बार बनाने को कहा। इस अख़बार में आप अपनी ख़बरें लिखें और उन्हें दर्शाने के लिए चित्र भी बनाएँ। छात्रों ने पूछा कि वह अपने अख़बार को क्या नाम दें। वहीं एक बच्चे ने पूछा कि क्या हम इसे अपना नाम दे सकते हैं, मैंने हामी भर दी।

जब उनका यह कार्य समाप्त हो गया तो मैंने उनके अख़बारों को देखा। पहले तो मुझे यह समझ नहीं आया कि उन्होंने अपने अख़बार में बॉक्स क्यों बनाए, बाद में एहसास हुआ कि मैंने उन्हें चित्र भी बनाने के लिए कहा था और समाचार लिखने के लिए भी। बच्चों ने अपने चित्र को बॉक्स में रखा जैसा कि अख़बारों में बॉक्स में पिक्चर दी होती है, उन्होंने उसी पैटर्न का अनुसरण किया। यह उनके गहन अवलोकन और निष्पादन को दिखाता है।

चूँकि वे लिखने में चुनौतियों का सामना कर रहे थे, इसलिए जिन शब्दों को लिखने में उन्हें मुश्किल हो रही थी मैं उन्हें बोर्ड पर लिख रही थी क्योंकि लिखे जाने वाले शब्द उनके अपने शब्द थे, इसलिए वे पहचानने की कोशिश कर रहे थे और आसानी से लिख रहे थे। इस अभ्यास का यह लाभ होता है कि वे नए शब्दों को भी बोलने व लिखने की कोशिश करते हैं। मैंने यह भी पाया कि इस प्रक्रिया ने उनमें कुछ नया लिखने का विश्वास भी दिया। इससे उनका वर्तनी वर्धन हुआ। यह अन्य बच्चों को अपने वाक्यों में भी नए शब्दों का प्रयोग करने के लिए प्रेरित करेगा। वे किताब भी देख सकते हैं और उससे भी वर्तनी लिख सकते हैं।

यह जानने के लिए कि अन्य लोगों ने क्या लिखा है, सभी ने अपने-अपने समाचार पत्र को ज़ोर से पढ़ा। बच्चे अपने साथियों द्वारा बनाए समाचार पत्रों को देखने और उनमें लिखी ख़बरों को पढ़ने के लिए उत्सुक थे। सभी ने अपना समाचार पत्र लेखन और चित्र अन्य छात्रों को दिखाए।

कुछ अवलोकन

मैंने बच्चों के काम को पढ़ा और उनका विश्लेषण किया। ये इसलिए भी ज़रूरी था क्योंकि ये बच्चे स्कूल में नए थे और इन बच्चों द्वारा किए गए काम को जानकर, समझकर आगे काम किया जा सकता है, इसकी योजना बनाई जा सकती है। इस हिस्से में बच्चों द्वारा लिखी गई ख़बरों के नमूने और उनका विश्लेषण है :

> ***रवीश के अख़बार की ख़बर :*** *नदी की खबर कल नदी आने वाली है, गहने की खबर आज गहने की चोरी हुई थी, एक लड़की की खबर है एक लड़की डॉक्टर बनी थी, एक तोता की खबर है एक बार एक गाँव में बोलने वाला तोता था, एक छोटा बच्चा किडनैप हुआ गया था, भुतिया घर में एक बूढ़ा रहता था, जादुई पेड़ रहता था जो बीमार पड़ता था वहाँ उसके पेड़ के पास जाता था, प्यारा कुत्ता की खबर है एक कुत्ता को किडनैप किया गया था, एक हाथी की खबर है एक हाथी गाँव में आया था।*

विश्लेषण : रवीश ने हर हेडलाइन के साथ उससे जुड़ी तस्वीर खींची। डॉक्टर के मामले में, उसने लड़की को कुछ विशेष प्रकार के सिर के साथ बनाया। यह स्नातक समारोह में छात्र के कपड़े जैसा दिखता है और मुझे लगता है कि वह लड़की को डॉक्टर की डिग्री के साथ दिखाना चाहता है। उसके चित्रों में सकारात्मकता के साथ उसके ख़ुशमिज़ाज स्वभाव की झलक दिखती है।

> ***सुधांशु के अख़बार की ख़बर :*** *एक बस खाई में गिर गई, पानी की लहर में एक घर खाई में गिर गया टूटने की वजह से बह गया और खो लोग बह गए और जब पुलिस ने उनको जब बेहके जब देख तो पुलिस ने एंबुलेंस बुलाई गई और उसे ले गया और उनको अस्पताल में भर्ती की गया। एक सड़क में मलमा के कोई गाड़ी भी रुक रखी थी तभी वहाँ एक बुलडोज़र की मदद से गाड़ी जाने लगी।*



चित्र : प्रशान्त सोनी

विश्लेषण : फिर से यह ख़बर स्थानीय परिवेश के सम्बन्ध में थी जहाँ भूस्खलन बहुत आम है, और जेसीबी द्वारा मार्ग को साफ़ किया जाता है। जेसीबी का चित्रांकन व आयाम उपयुक्त बनाया गया है। यह ड्राइंग करते समय चीज़ों की समझ को दर्शाता है। यह एक जटिल चित्र था।

कुछ आतंकवादी कुछ लोगों को मार रहे थे पुलिस उन आतंकवादियों को ढूँढ़ रही थी। मृत व्यक्ति का चित्रांकन देखते हैं तो उसका

कोण बदला हुआ है, वह क्षैतिज रूप से लेटा हुआ है। आतंकवादी का चित्र भी वैसा ही था जैसा अमूमन टीवी में दिखता है। उसके हाथ की मुद्राएँ तो बनाईं, लेकिन बन्दूक नहीं दिखाई गई थी। इस बच्चे ने पुलिस की गाड़ी भी बनाई।

सुधांशु का अख़बार बिलकुल उन्हीं तरह की ख़बरों से भरा था जैसी हम अख़बारों में देखते या पढ़ते हैं। ये इस बात को दर्शाता है कि आसपास नकारात्मक प्रभाव काफ़ी ज़्यादा है।

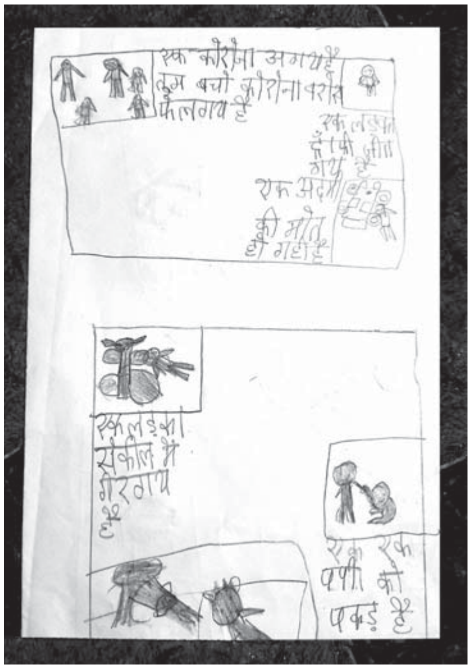
हालाँकि चित्र काफ़ी अच्छे बने थे और धीरे-धीरे वह अच्छा चित्रकार बने, ऐसा हो सकता है। मुझे यह भी लगा कि कहीं ऐसा तो नहीं कि वह मन से उदास हो।

मैथली के अख़बार की ख़बर : *एक कोरोना आ गया है, तुम बचो कोरोना वायरस फैल गया है, एक लड़का ट्रोफी जीत गया है, एक आदमी की मौत हो गई है, एक लड़का साइकिल में गिर गया है। एक पिल्ले को पकड़ रहा है, एक चिड़िया की मौत हो गई है। एक लड़की गाड़ी के नीचे आ गई है। एक फूल सूख गया है। भारत के झण्डे जीत गए हैं टीवी में न्यूज़ पेपर दिख रही है। एक चील उड़ रही है। एक चूजे रवीना के बच्चे तीन हैं।*

विश्लेषण : उसकी ख़बरों में विविधता है और विचार भी अलग थे। उसने सिर्फ़ एक ही शब्द मुझसे लिखने के लिए कहा और वह था कोरोना। और सबसे पहली ख़बर भी कोरोना को लेकर थी। उसका समाचार पैटर्न बॉक्स के भीतर बॉक्स था। उसने एक बड़ा बॉक्स बनाया और फिर उस ख़बर को बाहर निकालने के लिए बड़े बॉक्स में एक छोटा-सा बॉक्स बनाया। वह ख़ुद पढ़ती है और लिखित रूप में भी कम समर्थन लेती है। यह उसके अख़बार की वर्तनी से स्पष्ट है कि चीज़ें ख़ुद ही करें। अगर उसके चित्रों को देखें तो चित्रों को विभिन्न कोणों से बनाया गया था जो सामान्यतः इस उम्र के बच्चों में कम ही दिखता है और शायद ऐसी कल्पना करना व उसे काग़ज़ पर उकेरना उच्च स्तर का कौशल है।

सुरेश के अख़बार की ख़बर : *मोदी जनता के बारे में बोल रहा है, एक लड़का हवाई जहाज में जा रहा है, एक लड़का बह गया है, मर गया है न्यूज़ गाड़ी पेपर पर छपी है, कबड्डी में खेल के हैं, लड़का बात कर रहे हैं।*

विश्लेषण : उसके व्यक्तित्व के अनुसार उनका कार्य भी बहुत सरलता के साथ स्पष्टता वाला था। स्पष्ट रूप से चित्रों को दिखाते हुए उसने पूर्ण वाक्यों का उपयोग किया।



उसने एक मृत शरीर का चित्र बनाया, उसी मुद्रा में जैसे शव रखा गया था। एक सफ़ेद चादर और माला को एक ही रंग से दिखाया गया था, जो मेरे लिए बहुत विचारणीय था। जाने-अनजाने में अपने अख़बार में उसने केवल लड़कों का उल्लेख किया, शिक्षक के रूप में हमें उसमें यह विचार लाने की आवश्यकता है कि दोनों जेंडर हमारी बातचीत का हिस्सा होना चाहिए। यह भी चिन्तनीय है कि अख़बारों

में महिलाओं का उल्लेख कम किया जाता है और अपने परिवेश में हम दूसरे जेंडर को उतनी महत्ता देते भी हैं या नहीं?

गौरव के अख़बार की ख़बर : *एक कार के ऊपर पत्थर गिर गया तब उस गाड़ी का कचूमर बन गया, दो फौजी की मौत, एक मोदी पर माला पड़ी, एक साइकिल फिसल गई, एक बच्चे की साइकिल टूट गई मुझे दुख हुआ, एक लड़की खुश हुई थी क्योंकि उसका भाई वॉलीबॉल में फर्स्ट आया था, एक घोड़े की मौत, 10 फौजी की बर्फ़ में मौत, एक कुत्ता मर गया, एक लड़का रो रहा है, एक लड़का उदास है, एक साँप को नेवला ने काट दिया।*

विश्लेषण : गौरव को पढ़ने-लिखने में कोई दिक़्क़त नहीं है। उसका पैटर्न बॉक्स के अन्दर तस्वीरें रखना और बाहर लिखना था। उसने बहुत कम वर्तनी की ग़लतियाँ कीं और पूर्ण वाक्य बनाए, जब भी आवश्यकता हुई वर्तनी पूछी। एक बार फिर बहुत सारी दुखद और मौत की ख़बर पढ़ने को मिलीं।



चित्र : प्रशान्त सोनी

सुमित के अख़बार की ख़बर : *20 फौजी की बर्फ़ में मौत हो गई, एक साइकिल वाला को उसके ऊपर एक पत्थर पड़ गया उसके साइकिल का कचूमर बन गया, एक बूढ़ा ट्रक के नीचे आ गया, एक आदमी ने दारू में अपने घर में जला दिया, एक आदमी ने नया घर बनवाया, एक अमीर आदमी ने पाँच सितारा होटल बनवाया, एक आदमी ने एक स्कूल खोला, एक आदमी ने एक कार बनाया, एक आदमी ने एक बन्दूक बनाया, एक आदमी ने एक टेंट बनाया।*

विश्लेषण : मैं इन सभी बातों को वहाँ के सन्दर्भ से जोड़ पा रही थी। शराब की बात से उसके प्रभाव को बच्चे के जीवन में भी समझ पा रही थी, उसके अन्दर इस बात की पूरी समझ थी कि शराब क्या-क्या करा सकती है।

कृष्णा के अख़बार की ख़बर : *चार लड़के कार लेकर जा रहे थे एक चोर लड़के वेगन से मारने लगा तभी वो खाई में गिर गया उन चार लड़कों की तस्वीर समीर कुमार उनका घर देहरादून पवन कुमार का घर इंडिया सुनील उनका घर नेपाल सीबब घर जुगोड़ो, एक लड़का रास्ते से जा रहा था एक बस ने उस लड़के को ठोक दिया तभी उसकी मौत हो गई उस लड़के की तस्वीर नाम देवराम है उस बस वाले की तस्वीर, एक बस रास्ते में जा रही थी तब बस के सामने एक घर आ गया उस घर में कोई नहीं था, एक ट्रक रास्ते से जा रहा था तभी एक बड़े बड़े पत्थर आए तब उसकी मौत नाम केरब।*

विश्लेषण : वह शान्त है, कम बात करने वाला है। हालाँकि पूछे जाने पर प्रतिक्रिया देता है और लिखना जानता था। उसने कोई वर्तनी नहीं पूछी। कृष्णा वही छात्र था जिसने उल्लेख किया कि मरने के बाद लोगों की तस्वीरें भी अख़बार में आती हैं। इसे उसने अपने अख़बार में बनाया है। ऐसा नहीं था कि पहले कक्षा में ख़बरों के बारे में चर्चा नहीं हुई परन्तु इसके बावजूद

उसने उन्हीं ख़बरों को जगह दी जिनका प्रभाव उसपर ज़्यादा था।

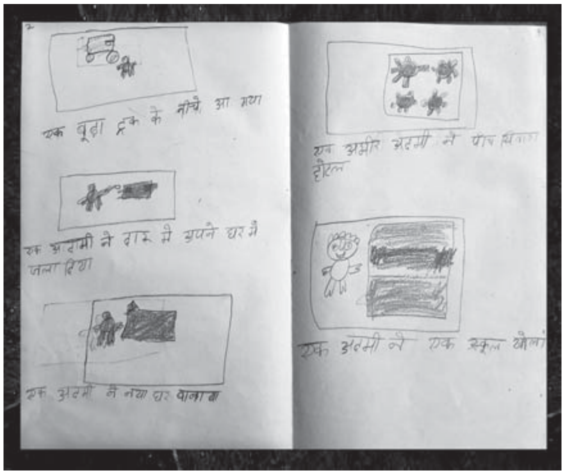
माधव के अख़बार की ख़बर : *आज चोर आया और चोरी कर गया, आज फौजी मारा, आज जहाज लड़ते लड़ते धरती पर गिरा, और बाढ़ आई है वो बाढ़ में डूब गई, दो मारो ट्रॉफी की लड़ाई, एक साइकिल मौत हो गई, एक फौजी की मौत हो गया, एक चिड़िया की मौत, एक पुलिस की मौत, एक लड़की के ट्रैक्टर के नीचे, एक बूढ़ा ट्रैक्टर के नीचे आ गया, एक नाव झील में पड़ी है, एक बूढ़ा दारू पीके सड़क पर चल रहा है उसका एक्सीडेंट, एक बूढ़ा को मुज लगया, एक लड़का के घर पर आग लगी, एक चोर ने अन्दर घर में चोरी एक बूढ़े की मौत हो गई।*

विश्लेषण : माधव के ध्यान का मुद्दा, यह बात उसके कार्य में भी दिखाई दे रही थी जिसमें चित्रों और समाचार से कोई सम्बन्ध स्थापित नहीं हो पा रहा था, अन्य ख़बरों की तरह इसमें भी एक समान स्वरूप देखने को मिल रहा है।

समीक्षा के अख़बार की ख़बर : *जब बस गिरती है तब अखबार में छपती है, जब लड़ाई होती है तब अखबार में छपता है, जब बिल्ली गिरती है तब अखबार में छपता है, जब घर डूबता है तो अखबार में छपता है, जब मरते हैं तब अखबार में छपता है, जब पत्थर गिरता है तब अखबार में छपता है, जब टीवी नई आती है तब अखबार में छपते हैं, जब घर टूटता है तब अखबार में छपता है, जब कोई स्कूल में जीते हैं तब अखबार में छपते हैं, जब पहाड़ टूटते हैं तब अखबार में छपते हैं, जब वर्तने आते हैं तब अखबार में छपते हैं।*

विश्लेषण : समीक्षा एक मुस्कुराती हुई लड़की है, जो अपने स्तर पर पूरी कोशिश करती है। उसकी ख़बरों में कुछ शब्दों की अधिकता है जो दर्शाता है कि वह लिखना तो चाहती है परन्तु लिखने में परेशानी के कारण कुछ जाने हुए शब्दों के उपयोग तक सीमित है।

सूरज के अख़बार की ख़बर : *एक रोबोट ने मार कर एक चोर को मार पांच, एक गाड़ी गिरी पानी में बस के बुरे हाल हो गया, जिप्सी गिरी पहाड़ से जिप्सी टूटी और आदमी की लाश मिली कल सबको, लाल कार जीती मिला 5,00,00,000 का चैक।*



विश्लेषण : मुझे कई बार ऐसा लगा कि सूरज किसी प्रकार के मनोवैज्ञानिक दबाव का सामना कर रहा है, यह उसके काम से स्पष्ट है। भले ही वो कक्षा में उत्तर देता हो, उसके विचार से यह स्पष्ट हो जाता है। उसके रंगों की पसन्द, ड्राइंग पैटर्न, उसका लेखन हमेशा कक्षा में इसका प्रतिबिम्ब है। इस कार्य में उसने चित्रों में कुछ चमकीले रंगों का प्रयोग किया है, अन्यथा वो हमेशा dull या अधिक काले रंग पसन्द करता है।

सिया के अख़बार की ख़बर : दो गाड़ी के *ठोकर, दो बच्चे हाथ पकड़ रहे, पेड़ पर सेब उग रहे हैं, तितली उड़ रही है, फूल*

उग रहे हैं, आइस क्रीम, नदी बह रही है, बक्सा, डिब्बा, हाउस, तितली उड़ रही है।

विश्लेषण : सिया के लिए लेखन अधिक चुनौतीपूर्ण है। वह थोड़ी उलझन में रहती है और निर्देशों को एक साथ समझना उसके लिए मुश्किल होता है, फिर भी उसने मेरी अपेक्षा के अनुरूप काम किया। उसने मुझसे पूछा कि क्या करना है, मैंने समझाया कि आप अख़बार में जो ख़बरें देखती हैं आपको उसका चित्र बनाना है और उसके बारे में लिखना है। बाद में मैंने कहा कि आपको वाक्य लिखने की ज़रूरत है, आप केवल शब्द ही लिख सकती हैं। जब उसने चित्र बनाया तो मैंने कहा कि अब जो चित्र बनाया उसके लिए शब्द लिखो। हालाँकि, वह भी पूरे वाक्य को लिखना चाहती है जैसा कि अन्य कर रहे थे, इसलिए शुरू में मुझे बोर्ड पर केवल शब्द लिखने के लिए कहा। बाद में अपने चित्र के अनुसार उन शब्दों के साथ उसने वाक्य बनाया। एक और बात यह थी कि जैसे-जैसे समय आगे बढ़ रहा था, मैंने उसे केवल दो पृष्ठ समाप्त करने के लिए कहा। फिर भी जब उसने दो पृष्ठों को रंग दिया और अतिरिक्त समय बच गया, तो उसने कहा कि वह तीसरे पृष्ठ में भी काम करना चाहती है। उसने नदी बनाई और उसके बारे में लिखा। हालाँकि उसका कार्य दिए गए अनुसार नहीं था, फिर भी उसने बिना किसी दबाव के उसे पूरा किया।



चित्र : प्रशान्त सोनी

जब वह अपना काम कर रही थी, मैंने उसके क़रीब आने की कोशिश की, मैं उसके काम के लिए उसकी सराहना करना चाहता थी। मैंने अपना हाथ उसके चेहरे के क़रीब रखा, वह डर गई और अपना चेहरा पीछे की ओर धकेल दिया। उसने सोचा कि मैं उसे मारूँगी। मैंने उससे कहा कि उसे डरने की ज़रूरत नहीं है और वह जो चाहे या जब चाहे पूछ सकती है, उसने अपना सिर हिलाया और मुस्कुराने लगी।

इन अनुभवों पर चिन्तन

जब मैंने कक्षा में इस योजना को कार्यान्वित करने हेतु प्रवेश किया तो मेरा विचार भाषा, अक्षर, वाक्य और लेखन सीखने के इर्द-गिर्द ही घूम रहा था। यह मेरी कल्पना से परे था कि मैं उनके विचारों में इतनी भिन्नता प्राप्त करूँगी और उनकी ख़बरें इस तरह की होंगी।

इस गतिविधि की रूपरेखा बनाते हुए मैंने कुछ मापदण्ड रखे थे जैसे– सभी छात्रों का पुस्तक पढ़ने में शामिल होना, सक्रिय भागीदारी, जो महसूस किया है उस भावना को अपने लिए समझना और व्यक्त करना, आदि। गतिविधि के अन्त में यदि बच्चों के कार्य का अवलोकन करूँ तो सभी छात्र इन स्तरों पर काम कर पाए। सबकी क्षमता अलग थी परन्तु इस कार्य ने सभी को सार्थक रूप से शामिल किया। साथ ही, उन्होंने अपने काम में उन उच्च स्तर की रणनीतियों का उपयोग करके उसे अख़बार के रूप में पेश किया जो उनके इस कार्य से संज्ञानात्मक जुड़ाव को दिखाता है।

यदि इस गतिविधि से छात्रों के कार्यों को समझा जाए तो यह दर्शाता है कि अख़बारों के प्रति उनकी एक समझ है और उन्हें पता है कि समाचार कैसे बनते हैं। उनके अख़बारों की हेडलाइन पढ़कर ये भी समझ आता है कि हेडलाइन का अर्थ है कुछ सार्थक शब्द जो पाठक को पढ़ने के लिए आकर्षित करें,

और साथ ही कुछ चित्रांकन भी। वे बहुत सारे विचारों को परिभाषित करने के लिए उपयुक्त शब्दों का चयन करना सीखते हैं। अपने अख़बार में हेडलाइन का इस्तेमाल करना दर्शाता है कि वह सुर्ख़ियों में इस्तेमाल की जाने वाली भाषा की अभिव्यक्ति समझ गए और अपने अख़बारों की सुर्खियों के लिए भी उन्होंने संक्षिप्त आकर्षक शब्दों का चयन करने की कोशिश की।

इस गतिविधि ने छात्रों के सांस्कृतिक और भाषाई पहलुओं और उनपर उनकी आपसी बातचीत को भी कक्षा में लाया। उनके लेख समाचार सामग्री के बारे में उनकी सामाजिक सोच का विश्लेषण थे।

यदि हम इस गतिविधि को एक छात्र के सीखने के दृष्टिकोण से देखें तो महसूस करेंगे कि बातचीत के साथ-साथ अपना अख़बार बनाने में भी वे आसपास के अन्य दृष्टिकोणों के प्रति संवेदनशील थे और अपनी दुनिया से उसे जोड़ने की कोशिश भी की। हालाँकि वैश्विक स्तर या अन्य आयामों से उनका जुड़ाव न के बराबर था जो बताता है कि शिक्षक को शायद इस क्षेत्र में काम करने की ज़रूरत है।

उनके अख़बार को पढ़ते हुए मैंने पाया कि वे सभी मौत की ख़बरों के सम्पर्क में हैं, और इसका उनके चित्रांकन के साथ-साथ लेखन पर भी प्रभाव दिखा। ऐसा लगता है कि सार्वजनिक समाचार पत्र ने अपना उद्‌देश्य खो दिया है और यह केवल बुरी ख़बरों का भण्डार हैं।

जब मैंने उनसे अपने अख़बार की ख़बरें पढ़ने को कहा तो उनमें ज़्यादातर ख़बरें सेना के जवानों की मौत, भूस्खलन से मौत, दुर्घटना के कारण मौत के बारे में थीं। इससे पता चलता है कि कम उम्र में वे इस कठोर वास्तविकता से इतने अधिक परिचित हैं क्योंकि यह स्कूल उस स्थान से जुड़ा हुआ है, जहाँ दुर्घटनाएँ आम हैं और कई परिवार में लोग सेना में भर्ती होते हैं।

यह गतिविधि कहीं-न-कहीं बच्चों के लिखित व मौखिक कौशल का विकास करने के साथ ही शिक्षक को बच्चे के अन्दर चल रहे उन विचारों से भी अवगत कराती है जिन्हें उसने कभी सोचा नहीं था। कक्षा के बाद जब लिखने के लिए मैं इनके काम को पढ़ रही थी तो मैं उनके विचारों और व्यक्तित्व का भी अध्ययन कर रही थी। मेरी कोशिश यह भी थी कि इनके कार्यों से और क्या जान सकती हूँ जो मुझे इनकी पढ़ने-लिखने की क्षमताओं को बेहतर बनाने में मदद करे।

गतिविधि के माध्यम से बच्चों के व्यवहार सम्बन्धी मुद्‌दों, और विभिन्न पृष्ठभूमि से आ रहे बच्चों के सामाजिक-भावनात्मक विकास को भी समझने में मदद मिलती है।

भविष्य की कक्षाओं में छात्रों को समाचार पत्रों के कुछ और पहलुओं से अवगत कराने का प्रयास किया जाएगा, अर्थात, समाचार पत्र के लिए क्या-क्या लिख सकते हैं, और लेखन की विविधता और अलग-अलग तरह के टैक्स्ट लिखने के लिए क्या-क्या करना होगा आदि।

लेख में दिए गए सभी बच्चों के नाम काल्पनिक हैं।

अर्चना द्विवेदी ने साल 2013 से कई स्कूलों में अध्यापन कार्य किया है, वे पिछले 4 सालों से अज़ीम प्रेमजी स्कूल में पर्यावरण अध्ययन और विज्ञान पढ़ा रही हैं। फ़िलहाल अज़ीम प्रेमजी स्कूल उत्तरकाशी में शिक्षण कार्य कर रही हैं। प्रकृति में विचरण करने और वहाँ से तरह-तरह के नमूने जुटाने में उनकी विशेष दिलचस्पी है।

सम्पर्क : archana.dwivedi@azimpremjifoundation.org

भाषा की कक्षा में रचनात्मकता
सहज प्रक्रियाओं की ओर

अनिकेत कुमार

बच्चों के साथ भाषा पर काम करते हुए ये बहुत ज़रूरी है कि काम सन्दर्भयुक्त हो, जीवन अनुभवों से जुड़ा हुआ हो, काम में भागीदारी और अभिव्यक्ति के मौक़े हों। कहानियाँ इसके लिए बहुत ही उपयुक्त साधन हैं। कहानी की किताबों पर काम करते हुए पढ़ना-लिखना तो एक आधारभूत काम होता ही है लेकिन उच्च भाषा कौशल जैसे– कल्पना, अनुमान, तर्क, भावनात्मक प्रतिक्रिया और विचारों का आदान-प्रदान भी सध पाते हैं। चित्रों वाली कहानी की किताबों के साथ इसपर और बेहतर काम हो पाता है। प्रस्तुत आलेख में अनिकेत कुमार ने प्राथमिक स्तर के बच्चों के साथ कहानी की किताबों को लेकर किए गए सुनियोजित काम से जुड़े अपने अनुभव विस्तार से लिखे हैं। सं.

बच्चों के साथ किताबों पर कार्य करते हुए आवश्यक है कि बच्चे समझ के साथ पढ़ें। इस समझ में शामिल है कि पढ़े हुए को अपने अनुभव से जोड़कर अभिव्यक्त कर सकें, उसपर सवाल-जवाब कर सकें, क्या अच्छा लगा क्या नहीं बता सकें, आदि। ये प्रक्रियाएँ बच्चों को सोचने, प्रतिक्रिया देने और रचनात्मकता के अवसर भी देती हैं। प्राथमिक कक्षाओं के लिए निर्धारित अधिगम प्रतिफल में यह अपेक्षित है कि भाषा शिक्षण की प्रक्रिया में बच्चे सुनने, बोलने, पढ़ने, और लिखने के कौशलों को बेहतर कर पाएँ और विभिन्न भाषाई दक्षताओं, मसलन पढ़ी हुई कविता / कहानी को अपने अनुभव से जोड़कर बताना, सोचना, तर्क करना, मौलिक लेखन की प्रक्रिया में शामिल हो पाना, आदि कर पाएँ। शासकीय प्राथमिक शाला में बच्चों और शिक्षक के साथ कार्य करने के दौरान इन प्रतिफलों को ध्यान में रखते हुए कार्य किए गए।

प्राथमिक कक्षाओं में बच्चों को भाषा क्यों सिखाई जाए, इस सवाल पर बात करते हुए प्रोफ़ेसर मनोज कुमार कहते हैं कि बच्चे बुनियादी भाषा कौशलों को निखार पाएँ, बेहतर कर पाएँ, साथ ही आगे की कक्षागत प्रक्रिया में सक्रियता से सहभाग कर पाएँ, यह बहुत ज़रूरी है क्योंकि जब तक बच्चे इन बुनियादी कौशलों को हासिल नहीं कर पाते, आगे बढ़ना मुश्किल होगा। वे बताते हैं कि भाषा बच्चों के लिए खिड़की का कार्य करती है, मतलब जब बच्चे पढ़ने-लिखने लगें, उसके बाद आगे की संज्ञानात्मक क्षमताओं पर कार्य किया जाना ज़्यादा बेहतर रहता है। अपनी बात को रख पाना, पढ़ना-लिखना सीखना, सीखने की प्रक्रिया में बच्चे की अधिक और बेहतर सहभागिता को भी सुनिश्चित करता है। यह कह सकते हैं कि यह बच्चे को सीखने में स्वतंत्र बनाने की दिशा में बढ़ाता है।

कक्षा की प्रक्रिया में किताबों के माध्यम से इस तरह के अवसर कैसे बनाए जाएँ ताकि बच्चों को सुनकर समझने, अनुमान लगाने, सवाल बनाने, तर्कों पर बात करने, उन्हें जाँचने, संवाद गढ़ने, कहानी-कविता पर फ़र्क़ तरह से और कुछ नया सोचने के मौक़े मिलें? क्योंकि ये सभी अवसर बच्चों के समझकर पढ़ना-लिखना सीखने में ही नहीं, बल्कि व्यवहारिक जीवन में भी मददगार होंगे और शिक्षा के व्यापक उद्देश्यों को प्राप्त करने में मदद करेंगे।

इन्हीं बिन्दुओं पर विचार करते हुए मैंने कक्षा 3, 4 और 5 के बच्चों के साथ काम शुरू किया। सबसे पहले मैं समझना चाहता था कि बच्चे क्या-क्या जानते-समझते हैं, ख़ासकर पढ़ने-लिखने और भाषा के अन्य कौशलों के सम्बन्ध में।

इस आकलन के लिए मैंने कहानियों की कुछ किताबें उन्हें पढ़ने के लिए दीं। इसके साथ ही कहानियों पर आधारित लेखन कार्य करवाए, जैसे– कहानी का सारांश लिखना, कहानी में क्या और क्यों अच्छा लगा, कहानी के आधार पर चित्र निर्माण, आदि। इस आकलन से मुझे



बच्चों की वर्तमान स्थिति और ज़रूरत का एक अन्दाज़ा लगा। यह समझ आया कि कक्षा 3, 4 और 5 के उपस्थित 32 बच्चों में से 12 पढ़कर समझ लेते हैं और उसपर बात करते हैं। मैंने शिक्षक से इसपर बातचीत की और उनके साथ मिलकर योजना बनाई गई कि बच्चों के साथ किताबों पर क्या-क्या कार्य किए जा सकते हैं। योजना के कुछ बिन्दु थे : बच्चों को ढेर सारी पुस्तकें पठन हेतु दी जाएँ, बच्चे किताबों को पढ़ने के बाद उनपर अपनी बात रखें, कहानी के आधार पर सोच पाएँ, कहानी के प्रसंग को लेकर तर्क-वितर्क के मौक़े बनें, बच्चे समूह में काम करें, आदि।

कहानी पर बच्चों की अभिव्यक्ति

योजना कुल 16-17 दिनों की थी और पूरी प्रक्रिया कुछ हिस्सों में विभाजित थी। इसमें बच्चों को कहानी की किताबें एकल और समूह में पठन हेतु देना, बच्चों को कहानी बोलकर/पढ़कर सुनाना और उसपर उन्हें सोचने, अनुमान लगाने व उसे समझने के मौक़े देना, इसके बाद कहानी के आधार पर बच्चे कैसे सोचें, इस तरह की गतिविधियों पर काम, जैसे– कहानी के पात्रों के बारे में बताना, कहानी के बाद कहानी को लेकर बात करना, शामिल था। अगले चरण में सोचने, कहानी बनाने, लिखने आदि बिन्दुओं पर कार्य किए गए। उद्‌देश्य यह था कि बच्चों के साथ चित्र और सन्दर्भ आधारित कहानियों का चयन किया जाए, जिसमें लिखी हुई कहानी का सम्बन्ध चित्रित घटनाओं से हो। और मुख्य रूप से इन्हीं प्रक्रियाओं के माध्यम से बच्चों को नया सोचने के मौक़े दिए जाएँ।

नियोजित प्रक्रिया के अनुसार बच्चों को पठन हेतु कहानियाँ दीं और फिर उन्हें सुनाईं भी। कहानियों को बोलकर / पढ़कर सुनाने के दौरान बच्चों ने अलग-अलग तरह से अनुमान लगाए। जैसे– 'नन्हे चूजे की दोस्त' कहानी के आवरण पृष्ठ के अवलोकन के उपरान्त बच्चों के अलग-अलग अनुमान थे। कुछ बच्चों ने कहा कि लोमड़ी चिड़िया के बच्चे को खा जाएगी, कुछ ने बताया कि खा जाएगी तो कहानी आगे कैसे बढ़ेगी? शायद इन दोनों में दोस्ती हो जाएगी। एक बच्चे ने बताया कि लोमड़ी पहले दोस्ती करेगी उसके बाद चालाकी से उसे खा लेगी। यहाँ बच्चे अनुमान तो लगाते ही हैं, साथ ही तर्कों पर भी बात करते हैं और अपने तर्क शामिल भी करते हैं।

एक और कहानी 'शेर और लोमड़ी' पर काम करते हुए यह समझ आया कि कहानियाँ बच्चों के सोचने के दायरे को आगे कैसे बढ़ाती हैं। इस कहानी में एक जगह शेर और लोमड़ी मिलकर आदमी को बन्धक बना लेते हैं और उसे बाँटकर खाने की बात करते हैं। यहाँ बच्चों से सवाल किया गया कि तुम ऐसी स्थिति में फँसते तो क्या करते!

नीलम : "मैं तो उसे अपनी कुल्हाड़ी से मार देती।"

पुष्पक : "मैं तो डर जाता।"

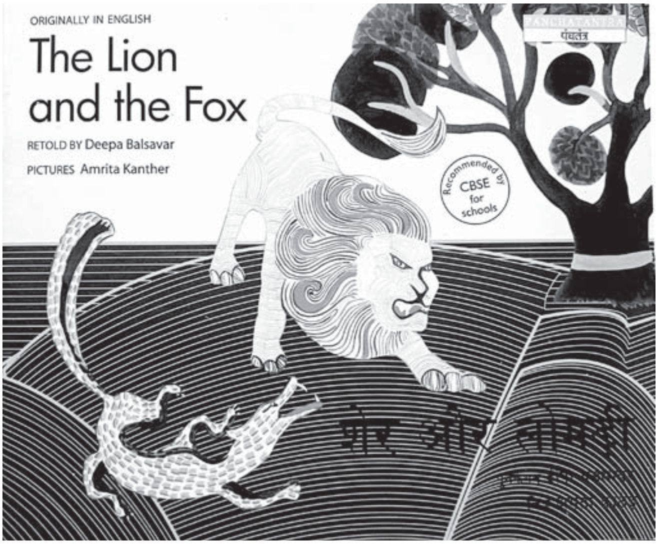
रोहिणी : "मैं शेर और लोमड़ी से विनती करती कि मुझे जाने दो, मैं तुम्हारे लिए और बढ़िया शिकार ढूँढ़कर लाऊँगी।"

इसपर रामजी ने कहा : "शेर इतना बेवकूफ नहीं है कि वो हाथ आए शिकार को जाने दे!"

नीलम और पुष्पक ने जो जवाब दिया वह एक स्वाभाविक प्रतिक्रिया है कि ऐसी स्थिति में या तो डर जाते या प्रतिकार करते। वहीं रोहिणी कहानी की समस्या पर सोचकर अपने समाधान बताती है कि वह शेर और लोमड़ी से बात करती, और रोहिणी के इस समाधान पर रामजी का तर्क कि शेर इतना बेवकूफ नहीं कि हाथ आए शिकार को जाने दे। यह कहानी वास्तविक जीवन की चुनौतियों से रूबरू कराती है कि समस्याओं के समाधान इतने आसान नहीं होते, हमें मज़बूत कारण ढूँढ़ने होते हैं। कहानी पर होने वाली बच्चों की ऐसी तार्किक बहस का जुड़ाव शिक्षा के उद्देश्यों से होता है कि शिक्षा जीवन की तैयारियों और उसमें आने वाली चुनौतियों के लिए हो, और समाज का प्रत्येक व्यक्ति इस क़ाबिल हो कि स्वयं के स्तर पर उन चुनौतियों का समाधान खोज पाए।

शेर और लोमड़ी कहानी पर अब तक किए कार्य ने कहानी को और आगे लेकर जाने की सम्भावनाओं को साफ़ कर दिया।

यहाँ एक और बात समझ में आई कि बच्चे कहानी की घटनाओं, कहानी में पात्रों की प्रतिक्रियाओं, समस्याओं आदि के बारे में पूर्वानुमान भी लगाने लगे हैं। लगभग 15 दिनों तक विभिन्न कहानियों के साथ काम करने की प्रक्रिया के दौरान बच्चे कहानी की संरचना को समझने लगे थे। बच्चे भले ही यह न बता पा रहे हों कि कहानी में पात्र होता है, घटनाएँ होती हैं, कुछ समस्याएँ होती हैं और उनका समाधान होता है, पर वे पात्रों को समझने लगे थे, पात्रों की स्थिति के अनुरूप जवाब देने लगे थे और कहानी में आगे क्या होगा, इसका अनुमान इसी समझ के आधार पर लगाने लगे थे। जो उत्तर रामजी ने दिया कि शेर इतना बेवकूफ नहीं है कि इंसान को जाने देगा, उससे यह भी पता चलता है कि कोई कहानी जब शुरू हुई है और उसमें कुछ समस्या है तो उसका समाधान एकदम से नहीं मिलेगा, क्योंकि इस तरह तो कहानी बनेगी ही नहीं।



कहानी से संज्ञानात्मक क्षमताओं का विकास

अगले चरण में हमने समूहों में कहानियों को पढ़ा, उनपर समूह में ही बातचीत की, प्रश्न बनाए, उत्तर ढूँढ़े, इसके बाद आगे की प्रक्रियाओं पर कार्य किए। यहाँ कार्य करते हुए उद्देश्य यह था कि बच्चे समूह में कहानी पढ़ें, उसपर और कहानी के किसी पात्र को लेकर बातचीत करें / बताएँ, कहानी को आगे लेकर जाने सम्बन्धी बिन्दुओं पर बातचीत करें / सोचें, कहानी के बारे में ख़ुद लिखें।

यहाँ बच्चों को *बरखा* सीरीज़ की स्तर एक और दो की पुस्तकें पठन हेतु दीं। बच्चों ने

कहानियों को पढ़ा और नीचे दिए बिन्दुओं के आधार पर कहानी को लेकर कार्य किया :

बच्चों ने जो किया	भाषाई दक्षताओं की प्राप्ति
कहानी में कौन-कौन है, कहानी में क्या हो रहा है?	तथ्यों को बताना
कहानी के बारे में बताना।	सारांश / भाषा का इस्तेमाल
कहानी में क्या अच्छा लगा और क्यों?	सोच पाना
कहानी पर कुछ सवाल बनाओ।	सोच पाना
कहानी के बाद क्या हुआ होगा?	कल्पना करना, अनुमान लगाना

कहानी के बारे में बताते हुए बच्चों को शुरुआत में एक से ज़्यादा घटनाओं वाली कहानियों के सारांश बताते हुए चुनौती महसूस हुई। मसलन 'तालाब के मज़े' कहानी की घटनाओं को रोहिणी अपने शब्दों में बता रही थी, लेकिन वो बीच-बीच में कई दफ़ा रुकी, सोचने के लिए समय लिया, और घटनाओं को क्रमवार रखने में भी उसे कठिनाई हुई। स्तर दो की पुस्तकों में एक से ज़्यादा घटनाएँ हैं अतः उन्हें इसे बताने में सोचना पड़ा। मैंने पूरक सवाल भी पूछे कि बगुले ने अपने बच्चे को खाना कैसे खिलाया। पूरक सवाल के बाद रोहिणी ने बताया कि बगुले ने अपने बच्चों को मछली पकड़ना कैसे सिखाया, ताकि उन्हें आगे बढ़ने में मदद मिले।

अगले समूह को 'गिल्ली-डण्डा' कहानी पढ़नी थी। बच्चों ने कहानी के पात्रों और कहानी को अपने शब्दों में बताया कि बबली गिल्ली लाने और खेल शुरू करने में सबकी मदद करती है। यहाँ एक बात समझ में आई कि चूँकि बच्चों के साथ कहानी पर कार्य करते हुए यह पहला मौक़ा है जब उन्हें कहानी पर बात करने, उसके बारे में बताने, अपनी बात कहने और सवाल बनाने के मौक़े दिए जा रहे हैं, अतः स्तर एक की पुस्तकें इन बच्चों के लिए ज़्यादा उपयुक्त थीं।

आगे बढ़ते हुए जब बच्चों से पूछा कि कहानी में क्या अच्छा लगा। एक बच्चे ने कहा कि बबली अच्छी लगी क्योंकि वह दूसरों की मदद करती है। एक अन्य बच्चे ने बताया कि उसे कहानी के बच्चे पसन्द आए क्योंकि वे खेल रहे हैं। बच्चों से कहानी पर सवाल बनाने को कहा। बच्चों के सवाल थे : गिल्ली को किसने उछाला, सब लोग किसे पकड़ने दौड़ रहे थे, गिल्ली-डण्डा कौन-कौन खेल रहा था, गिल्ली कहाँ चली गई, आदि।



यहाँ बच्चे ऐसे सवाल बना रहे थे जिनका जवाब एक शब्द में हो सकता था। गिल्ली-डण्डा कौन-कौन खेल रहा था? इस सवाल में ज़रूर कुछ विवरणात्मक जवाब की अपेक्षा थी। यहाँ समझ आया कि बच्चों के साथ प्रश्न बनाने पर भी और कार्य किया जा सकता है। कहानी का सारांश बताने में बच्चों को भाषाई चुनौती आई और एक से ज़्यादा घटनाओं का होना भी उनके लिए दिक़्क़तों-भरा था। एक और समझ बनी कि जब बच्चे कहानी पर अपने अनुभवों को जोड़कर बताते हैं तब वे अधिकतर उनके पसन्द की चीज़ें होती हैं। मसलन, बच्चों ने बताया कि उन्हें खेल के दौरान एक दूसरे की मदद करना अच्छा

लगा। अब यहाँ ग़ौर करें तो बच्चों के अपने जीवन में भी जब वे किसी समस्या में होते हैं और कोई उनकी मदद करे तो उन्हें बहुत अच्छा लगता है। बच्चे कहानी के पात्रों को अपने अनुभव से जोड़कर देखते हैं। यह भी कि एक सुगमकर्ता के तौर पर पूरी प्रक्रिया में धैर्य का होना आवश्यक है क्योंकि प्रत्येक बच्चा अपना समय लेता है।

प्रो. कृष्ण कुमार ने अपनी पुस्तक *बच्चे की भाषा और अध्यापक* में कहा है, "अध्यापक की हैसियत से हमें बच्चों को लेखन से परिचय बातचीत के एक रूप में देना चाहिए"। जैसे किसी कहानी पर चर्चा करने के बाद उससे कोई नई कहानी बनाने के सुराग़ मिल सकते हैं या फिर कक्षा के बच्चों के किसी विषय या घटना से जुड़े अनुभवों को सुनने के बाद बच्चों को उन्हें लिखने को कहा जा सकता है। बातचीत करने से लेखन के लिए भी ख़ाका मिल जाता है कि क्या-क्या हुआ, क्या-क्या हो सकता है, या फिर क्या-क्या देखा, आदि। किसी चित्र पर बातचीत करके उसके बारे में अपने विचार लिखे जा सकते हैं। किसी मुद्दे पर दूसरों के विचार सुनने और बातचीत करने से नए विचार बनते हैं। कहानी पर कार्य करते हुए दो चरणों में बच्चों को भाषाई अभिव्यक्ति और सोचने, विचारने एवं प्रतिक्रिया देने के अवसर मिले। यह एक तरह का आधार था जहाँ से बच्चों के साथ रचनात्मक अभिव्यक्ति पर कार्य किए जा सकते थे।

कहानी और रचनात्मक अभिव्यक्ति की शुरुआत

अगले चरण में बच्चों को *बरखा* सीरीज़ के पहले स्तर की पुस्तक *छुपन-छुपाई* और *मीठे-मीठे गुलगुले* पढ़ने को दी गई। इन कहानियों में केवल चित्र थे (क्रमिक) लिखित टैक्स्ट को हटा दिया गया था (सॉफ़्ट कॉपी से हटाकर सिर्फ़ चित्रों के प्रिंट लिए थे)। उद्देश्य यह था कि बच्चे समूह में चित्र कथा को देखें, उसपर बात करें और मौलिक कहानी बनाएँ। यहाँ बच्चों से



बात की गई कि उन्हें चित्रों को देखना है, चित्र में घटित कहानी को समझना है और बात करनी है। जो समझ में आए उसके आधार पर पहले समूह में बात करनी है कि चित्रों में क्या हो रहा है और उसके बाद जो उन चित्रों में हो रहा है उसे लिखना भी है।

बच्चों ने चित्रकथा का अवलोकन किया और उसके आधार पर समूह में बात भी की, पर बच्चे निर्देशों को अच्छी तरह नहीं समझ पाए कि आगे किस तरह से कार्य किए जाएँ। फिर से निर्देश दिए गए, साथ-साथ चित्र दिखाते हुए कुछ सवाल पूछे। जैसे—

चित्र में क्या हो रहा है? बच्चों ने बताया कि दो लड़कियाँ हैं। कुछ बच्चों ने पहले यह कहानी पढ़ी थी अतः उन्होंने बताया कि ये रमा और रानी हैं। इस तरह चित्रों को दिखाते हुए मैंने उनसे पूछा कि चित्र में क्या हो रहा है और बच्चे बताते गए। अब यह बात बच्चों को समझ में आई कि चित्र में कुछ दिख रहा है और अलग-अलग चित्रों में कुछ हो रहा है जिससे कहानी आगे बढ़ रही है।

बच्चों ने काम शुरू किया। वे कहानी के चित्रों को देखकर अपनी बात बता रहे थे लेकिन कुछ पक्का नहीं कर पा रहे थे कि आगे कैसे बढ़ें। मैंने उनसे बातचीत की और पूछा कि इनका क्या नाम होगा। कई सुझाव आए, और अन्ततः लड़की का नाम राधिका और लड़के का



नाम गोलू रखा। मैंने चित्र दिखाते हुए पूछा कि क्या हो रहा है। बच्चों ने कहा कि सब 'दुक-दुकाई' खेल रहे हैं। और वे कहानी के बारे में बताते गए।

मैंने पाया कि चित्र के बारे में बताने के लिए कई तरह के वाक्य आते हैं। जैसे– रामजी ने कहा कि सब मिलकर खेलने की सोच रहे हैं।

नीलम ने बताया कि वे सब दुक-दुकाई खेलने के लिए बातें कर रहे हैं और दाम गया है लकी पर।

ख़ैर, जो कहानी बनी उसे सुना गया और मुझे लगा कि बच्चे अब यहाँ से कहानी को पूरा कर लेंगे। मैंने उन्हें कहा कि अब इसी तरह कहानी को लिखना है और जो बताया है उसे ही लिखना है।

अब दूसरी कहानी 'मीठे-मीठे गुलगुले' में भी बच्चों के साथ इसी तरह से बात की।

बच्चों को मिले रचनात्मक अभिव्यक्ति के मौक़े

कहानी शिक्षण की इस प्रक्रिया में बच्चों ने कहानी को समझकर पढ़ने के बाद उससे सम्बन्धित अपने अनुभव, प्रतिक्रिया आदि साझा की। साथ ही बच्चों ने अपनी भाषा को भी शामिल किया। जैसे– चित्रकथा में एक नई मौलिक कहानी का निर्माण करते हुए बच्चे एक ही स्थिति के लिए अलग-अलग वाक्यों का इस्तेमाल कर रहे थे और इस तरह उन्होंने पूरी कहानी भी बनाई। पारुल बत्रा अपने लेख में बताती हैं कि "बच्चे जिस तरह के वाक्य बोलते हैं और जिन शब्दों से दैनिक जीवन में परिचित भी हैं, लेखन की बात आते ही उन्हें दरकिनार कर दिया जाता है। बच्चों को किसी विषय पर अपने विचार बनाने, कहने या लिखने की कोई जगह भाषा शिक्षण की इस विधि में नहीं होती है। लेकिन असल में हम तो पढ़ना-लिखना सीखते ही इसलिए हैं ताकि अपनी बात को व्यवस्थित व सुसंगत ढंग से मौखिक और लिखित रूप में अभिव्यक्त कर लोगों तक पहुँचा सकें।"

उपसंहार

सृजनात्मक भाषाई प्रक्रिया के लिए यह आवश्यक है कि बच्चों के साथ इस तरह के मौक़े बनाए जाएँ। जब बच्चे समूह में या व्यक्तिगत



रूप से सोचें तब उत्तर / समाधान न बताते हुए उनकी सही दिशा में सोचने में मदद की जाए। जैसे– चित्रकथा के अवलोकन उपरान्त जो कहानी में हो रहा है उसके बारे में क्या लिखा जाए, कैसे लिखा जाए, बच्चों ने ही तय किया। इसी तरह बच्चे जब कहानी की घटनाओं पर तर्क-वितर्क कर रहे हों, असहमत हों, तब इस चर्चा को बग़ैर किसी बाहरी दबाव के तय होने देना। जैसे– 'मीठे-मीठे गुलगुले' कहानी पर कार्य करते हुए बच्चों के बीच तार्किक बहस हुई कि गीले आटे से क्या बना होगा और अनुज ने बताया कि आटे में चीनी मिलाकर मिठाई बनेगी। इसपर पुष्पक ने अपने अनुभव से बताया कि आटे से मिठाई नहीं बनती, उसमें तो दूध और मावा लगते हैं। अंशिका ने कहा कि यह मैदा है और इससे लड्डू बनेंगे। इसपर हर्ष ने कहा कि उसकी माँ मैदा की रोटी क्यों बनाती है?

यहाँ यह समझ में आया कि तार्किक प्रक्रिया में चीज़ें ठीक तरह से आगे बढ़ रही थीं, इसके लिए ज़रूरी था कि प्रत्येक बच्चे को उसका अवलोकन और तर्क रखने के मौक़े दिए जाएँ। बच्चे अपना अवलोकन कर रहे थे और एक दूसरे के अवलोकनों को अपने तर्क के माध्यम से काट भी रहे थे, इस तरह यह कार्य आगे बढ़ रहा था।

कहानियों को पढ़ते, सुनते और समझते हुए बच्चे कहानी की संरचनाओं को भी समझने लगे थे। क्योंकि जिस तरह बच्चों के जवाब आ रहे थे उससे लग रहा था कि वे यह समझने लगे हैं कि कहानी में समस्या होती है, कुछ पात्र होते हैं, पात्रों के बीच किसी समस्या को लेकर बातचीत होती है और उसके समाधान की बात होती है। बच्चों ने जिस तरह कहानी के आधार पर अनुमान लगाए, समाधान आदि खोजे, उससे यह समझ में आने लगा था कि कहानी की संरचनाओं को लेकर बच्चों की समझ बनने लगी है।

अब तक इस पूरी प्रक्रिया में यह लग रहा है कि बच्चों को कहानी बनाने, भाषा का इस्तेमाल करने, सोचने के अवसर बनाने हेतु उनके साथ पहले की बातचीत ज़रूरी है। दूसरा कि कहानी बनाने की प्रक्रिया में उनकी बातों को ध्यान से सुनना और जहाँ उन्हें मदद की आवश्यकता है उन्हें सोचने हेतु ऐसे सवाल और बातों पर सोचने में उनकी मदद करना। कहानी पर जब बच्चे काम करने की शुरुआत कर रहे थे तब उन्हें किस तरह से कहानी का अवलोकन करना है, कहानी में क्या हो रहा है उसपर समूह में बात करनी है, कहानी किसके बारे में है, कौन क्या कर रहा है, इन सबपर सोचना पड़ता है, और समूह के सभी बच्चे इसपर सोचते हुए इसका हल निकालते हैं। इस तरह कई जगहों पर बच्चों के अनुमान लगाने, सोचने, और अपने तर्कों को रखने में भाषा का इस्तेमाल करने के मौक़े मिलते हैं।

सन्दर्भ

1. 'लिखना' प्राथमिक कक्षाओं में बच्चों के साथ कुछ अनुभव : पारुल बत्रा दुग्गल
2. प्रो. कृष्ण कुमार, *बच्चे की भाषा और अध्यापक, एक निर्देशिका*, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली
3. 'भाषा शिक्षण के व्यापक उद्देश्य' विषय पर सागर विश्वविद्यालय में प्रोफ़ेसर मनोज कुमार का व्याख्यान।

अनिकेत कुमार ने अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, बेंगलूरु से शिक्षा में स्नातकोत्तर किया है। वे आठ वर्षों से आरम्भिक शिक्षा के क्षेत्र में कार्य कर रहे हैं। तक़रीबन छह वर्षों से अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, सागर, म.प्र. में भाषा के रिसोर्स पर्सन के रूप में काम कर रहे हैं। आपने इससे पहले तीन वर्षों तक आगा खान ग्राम समर्थन कार्यक्रम में रिसोर्स पर्सन के रूप में काम किया है। अनिकेत को शैक्षणिक और सामाजिक प्रक्रियाओं को समझने में गहरी रुचि है।

सम्पर्क : aniket.kumar@azimpremjifoundation.org

गणित शिक्षण में संख्या रेखा की अवधारणा
कभी चटपटी, कभी अटपटी

संदीप त्रिपाठी

गणित में विद्यार्थियों को संख्याओं का शिक्षण आमतौर पर अमूर्त प्रतीकों के रूप में करवाया जाता है। इससे विद्यार्थी प्रक्रिया तो सीख लेते हैं लेकिन उन्हें संख्याओं की समझ बनाने में कठिनाई महसूस होती है। प्रस्तुत लेख में लेखक संख्या रेखा पर अपने काम के अनुभव से बताते हैं कि यदि विद्यार्थी स्वयं मूलभूत संक्रियाओं पर काम करके सीखें तो वे न सिर्फ़ गणितीय अवधारणाओं को बेहतर समझ पाते हैं वरन् समझा भी पाते हैं। गणित की कक्षा में बच्चों के स्वयं सीखने के मौक़े बनाने पर उनमें विषय के प्रति संकोच और डर भी कम होता है। सं.

पृष्ठभूमि

प्रारम्भिक स्तर पर संख्या रेखा की अवधारणा गणित शिक्षण का एक बहुत महत्त्वपूर्ण भाग है। इसके द्वारा बच्चे संख्या क्रम और परिमाण का निरूपण करना और साथ में संख्या व उनपर होने वाली संक्रियाएँ सीखते हैं। गणित की अवधारणाओं के अमूर्त निरूपण में संख्या रेखा की समझ बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यद्यपि कुछ छोटे बच्चों को इन्हें समझने में कठिनाई हो सकती है, किन्तु प्रारम्भिक स्तर पर संख्या रेखा की अवधारणा भविष्य की कठिनाइयों को रोकने, और गणित की अवधारणाओं व बच्चों के ठोस अनुभवों के साथ सम्बन्ध बनाने में मददगार होती है (गियरी, 1993)। वैसे देखा जाए तो संख्या रेखा हमारे रोज़मर्रा के जीवन का एक हिस्सा भी है। हम अनेक पैमानों को पढ़ते समय, यथा– मापन के टेप, थर्मामीटर, वज़न नापने की मशीन, आदि के रूप में इसका उपयोग करते हैं।

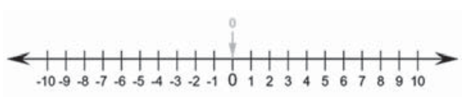
संख्या रेखा का उपयोग विभिन्न गणितीय अवधारणाओं और प्रक्रियाओं के बारे में छात्रों की अवधारणात्मक समझ को जानने के लिए किया जाता है, जैसे कि संख्या अनुक्रमण गतिविधियाँ (विगेल, 1998), गणितीय संक्रियाओं को दिखाने की एक ठोस विधि के रूप में (डेविस और सिम्ट, 2003), परिमेय संख्याओं की निरन्तरता की कल्पना कर पाने में सहायता (डायन्स, 1964), आदि।

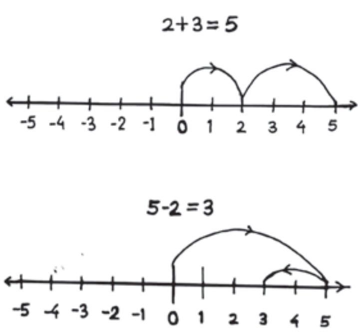
यद्यपि संख्या रेखा छात्रों को गणित की समझ में सहायता कर सकती है, किन्तु कई शोधों से यह संकेत भी मिलता है कि कुछ प्राथमिक छात्रों को संख्या रेखा के उपयोग में कठिनाई का अनुभव होता है (डाइज़मैन एंड लोरी, 2006)। फिर भी कह सकते हैं कि प्राथमिक स्तर पर यह गणित शिक्षण में विद्यार्थियों की समझ को बढ़ाने में मदद करने के साथ-साथ उनका गणित से लगाव भी बढ़ाती है। सामान्यत: शालाओं में विद्यार्थियों को संख्याओं का शिक्षण अमूर्त प्रतीकों के रूप में करवाया जाता है। ऐसे में विद्यार्थी गणितीय प्रक्रिया तो सीख लेते हैं लेकिन उससे सम्बन्धित समझ बनाने में उन्हें बहुत कठिनाई महसूस होती है।

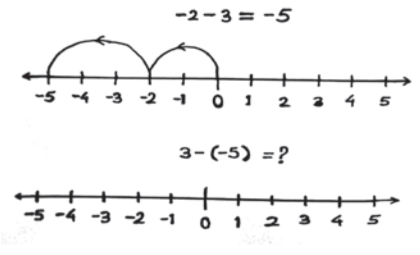
अपने प्रयोग के दौरान मैंने अनुभव किया कि जब बच्चे संख्या रेखा पर स्वयं मूलभूत गणितीय संक्रियाओं का अभ्यास कर रहे थे, तो उनके पास एक ज़्यादा स्पष्ट अवधारणा थी। वे ज़्यादा अच्छे-से गणितीय अवधारणा को न केवल समझ पा रहे थे, बल्कि सहपाठियों के साथ व्यक्त भी कर पा रहे थे। इसके साथ यह भी अनुभव हुआ कि बच्चों के मन में गणित के सवालों के हल को लेकर जो एक झिझक या उत्तर पर भरोसे की कमी एवं डर रहता है, कहीं-न-कहीं जब उन्होंने संख्या रेखा पर स्वयं प्रयोग करके देखे, तो यह काफ़ी हद तक दूर हुआ। साथ ही उन्हें इस तरह से गणित करना ज़्यादा रोमांचक लगा और गणित में उनका ज़्यादा अच्छा जुड़ाव सम्भव हो सका।

बच्चों के साथ अनुभव

संख्या रेखा पर बच्चों की समझ को जानने के लिए मैंने लगभग 40 बच्चों के साथ कुछ प्रयोग किए। यह सभी शासकीय ज्ञानोदय विद्यालय नर्मदापुरम के कक्षा छठवीं के बच्चे थे। इनकी उम्र 11 से 13 वर्ष के बीच थी। सबसे पहले चित्र 1 अनुसार संख्या रेखा बनाई जिसमें दाहिने हाथ की तरफ़ धनात्मक और बाईं तरफ़ ऋणात्मक संख्याओं को अंकित किया। मैंने बच्चों को संख्या रेखा की आधारभूत जानकारी दी और उसपर काम कैसे किया जाता है, यह बताया।







चित्र 1

यह सब बताने के बाद मैंने पहला प्रश्न पूछा, "हम इस संख्या रेखा पर [2 + 3] कैसे करेंगे।"

एक बच्चा बोलने लगा, "सर, पहले शून्य से धनात्मक तरफ़ 2 क़दम चलेंगे फिर 2 के बाद 3 क़दम पुनः उसी दिशा में चलेंगे, इस प्रकार उत्तर 5 आएगा।"

पुनः मैंने अगला सवाल किया, "[5 - 2], इसे कैसे करेंगे।" अधिकांश बच्चे सोचने लगे, लेकिन उनमें से कुछ बच्चों ने ध्यान से प्रश्न को देखा और कहने लगे, "सर, पहले हम धनात्मक 5 की ओर चलेंगे और क्योंकि अगली संख्या ऋणात्मक है अतः हम अब ऋणात्मक संख्याओं की ओर 2 क़दम चलेंगे, इस प्रकार उत्तर 3 आएगा।"

मैंने बच्चों का हौसला बढ़ाया और उन्हें उसी प्रकार दो धनात्मक संख्याओं का जोड़, धनात्मक संख्या में से धनात्मक संख्या घटाना आदि सवाल दिए। अब बच्चे बहुत आसानी से उन सवालों को हल करने लगे।

फिर अगला सवाल, "[-2-3] कैसे करेंगे।" चूँकि बच्चे थोड़ा अभ्यास कर चुके थे तत्काल एक बच्चा आया और वह करके दिखाने लगा। 0 से ऋण तरफ़ पहले वह 2 क़दम चला उसके पश्चात कहने लगा, "अगली संख्या भी ऋणात्मक है अतः पुनः ऋण की ओर आगे बढ़ेंगे", और वह उसी दिशा में 3 क़दम और चला। इस प्रकार उसने बताया कि उत्तर -5 आएगा।

सभी ने तालियों से उसका उत्साहवर्धन किया। इस प्रकार हमने और भी बहुत सारे अभ्यास किए जिनमें सभी बच्चे शामिल हुए।

अब मैंने सवाल किया, “हम [3] – [–5] कैसे करेंगे।” चूँकि बच्चे अब अभ्यस्त हो चुके थे अतः उसमें एक बच्चा आया और वह पहले धनात्मक ओर तीन क़दम चला और वहाँ से वापस ऋणात्मक ओर 5 क़दम चला इस प्रकार उसने उत्तर बताया 2।

इस उत्तर को बताते समय उस बच्चे के चेहरे पर कुछ शंका के बादल मँडरा रहे थे। कक्षा में बैठे हुए बाक़ी बच्चे भी पूर्ण रूप से आश्वस्त नहीं थे, और वह आपस में कुछ खुसर-पुसर कर रहे थे।

मैं सब घटनाएँ देख रहा था। मैंने प्रश्न किया, “क्या हमारा उत्तर 2 सही है?” बच्चे पसोपेश में थे, क्या उत्तर दें, हाँ या नहीं। मैंने वापस फिर वही सवाल किया तो उसमें एक बच्ची कहने लगी, “नहीं सर, इसका उत्तर तो 8 आएगा।”

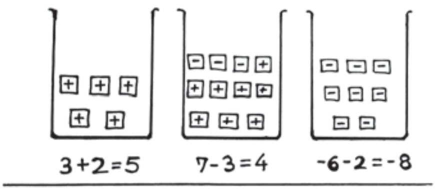
मैंने कहा, “आप संख्या रेखा पर आकर बता सकती हो!” वह भी एक उलझन में थी किन्तु कुछ सोचते हुए हुए वह आई और उसने भी वही प्रक्रिया अपनाई। पहले वह संख्या रेखा पर धनात्मक ओर 3 क़दम चली फिर ऋणात्मक चिह्न देखकर उसने अपना मुँह ऋणात्मक संख्याओं की ओर किया।

लेकिन यहाँ उसके सामने एक और ऋण संख्या आ गई। वह सोचने लगी क्या करना है। सभी बच्चे बड़े ध्यान से उसकी तरफ़ देख रहे थे। मैं फिर पूछने लगा, “अब क्या करेंगे?” लेकिन बच्चे वहाँ अटक गए क्योंकि यहाँ दो बार ऋण चिह्न का उपयोग हो रहा था।

प्रक्रिया के रूप में या जो उन्होंने पूर्व में पढ़ा हुआ था, उसके अनुसार तो उनका उत्तर 8 आ रहा था, लेकिन जो अभी हमने संख्या रेखा के बारे में पढ़ा उसके अनुसार उनका उत्तर 2 आ रहा था।

यह प्रश्न मैंने बच्चों के ऊपर छोड़ दिया कि आप लोग सोचकर आइए कि इसका सही उत्तर क्या हो सकता है। हमारी यह श्रृंखला चलती रही।

मैं देख रहा था कि संख्या रेखा गतिविधि में सहभागिता तो लगभग सभी बच्चों की थी लेकिन शायद वे अभी भी अवधारणा को नहीं समझ पा रहे थे। कुछ बच्चे अभी भी अपने साथियों की नक़ल करते हुए उत्तर देने का प्रयास कर रहे थे। इस समस्या को देखते हुए मैंने एक नया प्रयोग करना प्रारम्भ किया।



चित्र 2

मैंने एक गत्ते के बहुत सारे छोटे-छोटे वर्गाकार टुकड़े कर लिए और चित्र अनुसार उनपर धन और ऋण के चिह्न लगा दिए।

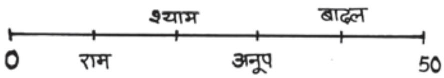
फिर वही क्रिया मैंने प्रारम्भ की और पूछा, “यदि हमें 3 + 2 जोड़ना है तो उत्तर क्या होगा?” बच्चों ने तत्काल 3 धन चिह्न वाले और 2 धन चिह्न वाले टुकड़े उठा लिए और बताया, “सर, उत्तर 5 आएगा।”

फिर अगला प्रश्न “7 में से ऋण 3 करने पर उत्तर क्या आएगा।” सबसे पहले उन्होंने 7 धन चिह्न वाले टुकड़े लिए और फिर 3 ऋण चिह्न वाले टुकड़े लिए। ऋण और धन चिह्न वाले टुकड़ों की जोड़ी बनाने के बाद शेष चार धन चिह्न वाले टुकड़े बचे। उन्होंने बताया, “सर, उत्तर 4 आएगा।”

इस प्रकार, अन्य संख्याओं पर भी हमने प्रयोग किए और मुझे लगा कि संख्या रेखा की अवधारणा को स्पष्ट करने में यह प्रयोग ज़्यादा प्रभावी सिद्ध हो रहा है। इन दोनों गतिविधियों के माध्यम से बच्चे अवधारणात्मक स्तर पर

ज़्यादा आसानी से गणितीय संक्रियाएँ सीखे, और निश्चित रूप से यह प्रयोग पहले वाले की तुलना में बच्चों के लिए ज़्यादा आसान और असरदार रहा। दूसरे प्रयोग के पश्चात संख्या रेखा के बारे में उनकी समझ पहले प्रयोग की अपेक्षा ज़्यादा अच्छी हुई।

चित्र 3 अनुसार मैंने पुनः एक चित्र बनाया और यहाँ पर बच्चों से प्रश्न किया, “बताओ, बादल की निकटतम संख्या क्या होगी?”



चित्र 3

बच्चों ने चित्र को ध्यान से देखा और कहने लगे, “सर, 50 होगी।”

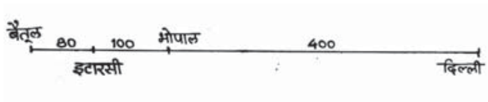
मैंने फिर कन्फ़र्म किया, “क्या सभी सहमत हो?” अधिकतर बच्चे सहमति से ज़ोर-ज़ोर से बोलने लगे, “हाँ सर, 50 होगी।”

अब मैंने पूछा, “राम की निकटतम संख्या क्या हो सकती है?” वे कहने लगे, “सर, 0 होगी।” मैंने कहा, “यह शून्य के नज़दीक तो है लेकिन शून्य तो नहीं है, वह संख्या क्या हो सकती है?” बच्चे अनुमान लगाने लगे और उनमें से कुछ ने कहा, “सर, यह 10 के आसपास हो सकती है।”

गतिविधि को आगे बढ़ाते हुए मैंने अगला प्रश्न किया, “अब बताओ, श्याम के पास की संख्या क्या हो सकती है?” बच्चे कहने लगे, “सर, यह 10 से ज़्यादा होगी और 20 के आसपास हो सकती है।” क्रम को आगे बढ़ाते हुए फिर मैंने अगला सवाल दागा, “अनूप के नज़दीक की संख्या क्या होगी?” बच्चे सोच में पड़ गए क्योंकि अनूप, श्याम के तो पास था लेकिन बादल से भी ज़्यादा दूर नहीं था। वे आपस में चर्चा करते रहे, कभी 30 बोलते कभी 35। अन्तिम रूप से उन्होंने निष्कर्ष निकाला, “सर, यह 30 होनी चाहिए, क्योंकि अनूप, श्याम एवं बादल के लगभग बीच में था।”

अगला प्रश्न किया, “बताइए, बादल की स्थिति अनूप और 50 के बीच में है तो हमारा सम्भावित उत्तर क्या हो सकता है?” बच्चे अनुमान लगाते रहे और फिर उन्होंने जवाब दिया, “यह 40 के लगभग हो सकती है।”

क्योंकि अब बच्चों को बहुत मज़ा आ रहा था और वह पूरी तरीक़े से इसमें रम चुके थे। मैंने उन्हें एक अगला चित्र दिखाया जिसके बारे में कोई जानकारी नहीं दी।



चित्र 4

तख़्ते पर उससे सम्बन्धित एक प्रश्न लिख दिया और बच्चों से कहा, “अब बताइए, बैतूल से दिल्ली के बीच की दूरी क्या होगी?”

एक बच्चे ने तत्काल उत्तर दिया, “सर, 400 किलोमीटर होगी।” कुछ बच्चे फिर से सोचने लगे और कुछ बच्चे दबे स्वर में और कुछ बोलना चाह रहे थे। मैंने उनसे कहा, “फिर से सोचो और बताओ।” बच्चों ने फिर सोचा, कुछ जोड़ किया, और बताया, “सर, बैतूल से दिल्ली के बीच की दूरी 580 किलोमीटर होगी।”

उस बच्चे ने जिसने उत्तर 400 किलोमीटर बताया था, मैंने पूछा, “उत्तर क्या होना चाहिए।” वह बोलने लगा, “580 किलोमीटर होगा।” मैंने पूछा, “फिर आपने क्यों बोला कि 400 किलोमीटर होगा?”, वह कहने लगा, “सर, मैंने ध्यान नहीं दिया और जल्दबाज़ी में बोल दिया।”

मेरा अगला सवाल था, “बैतूल से दिल्ली के बीच की दूरी के लिए हमें क्या करना चाहिए या क्या करना होता है?” उसने बताया, “सर, पहले बैतूल से इटारसी के बीच की दूरी, इटारसी से भोपाल की और फिर भोपाल से दिल्ली के बीच की दूरियाँ, इन सभी को जब हम आपस में जोड़

देंगे तब जाकर बैतूल से दिल्ली के बीच की दूरी निकल आएगी।”

इस प्रकार कभी-कभी जब बच्चे ध्यान नहीं दे पाते हैं या थोड़ी जल्दबाज़ी करते हैं उस स्थिति में भी संख्या रेखा समझने में थोड़ी कठिनाई महसूस होती है।

सत्र के पश्चात कुछ चीज़ों से सम्बन्धित कुछ बातें मेरे मन में आईं उनका विवरण मैं नीचे दे रहा हूँ। पूरी प्रक्रिया के दौरान हमें दो समूहों में बच्चे देखने को मिले। पहला समूह उन बच्चों का था जिन्होंने पहली बार में ही एकदम सही उत्तर दे दिए थे। साथ में इसी समूह में कुछ ऐसे बच्चे भी शामिल थे जिन्होंने थोड़ा प्रयास किया और सही उत्तर बता दिया। और दूसरा समूह ऐसे बच्चों का था जिन्होंने या तो बहुत बाद में उत्तर दिया या वे समझ ही नहीं पाए और दोस्तों की नक़ल कर ही उत्तर बताते रहे।

सफल विद्यार्थियों ने संख्या रेखा का प्रयोग किस प्रकार किया

सफल छात्रों ने संख्या रेखा पर मापन पहलू, विशेष रूप से दूरी, संख्याओं की निकटता या सन्दर्भ बिन्दुओं से सम्बन्धित रणनीतियों का उपयोग किया। उदाहरण के लिए, चित्र 3 के जवाब में, सफल छात्रों ने अपने उत्तरों की व्याख्या करते समय, संख्या रेखा के मापन पहलू पर प्रकाश डाला।

उन्होंने 0 और 50 के बीच की दूरी को देखा और तर्क दिया कि क्योंकि बादल की जगह अनूप और 50 के बीच में है इसलिए बादल का मान 40 के आसपास होना चाहिए। इसी प्रकार राम, श्याम एवं अनूप आदि के लिए भी वे तर्क आधारित अनुमान लगाते रहे।

छात्रों ने जो तरीक़ा अपनाया उसमें उन्होंने दूरी पर भी विचार किया। उदाहरण के लिए, कुछ छात्रों ने समाधान के रूप में बादल की पहचान करने से पहले अन्य व्यक्तियों की स्थिति का अनुमान लगाया। सफल छात्र समझते हैं कि संख्या रेखा एक मापन मॉडल है और इसकी व्याख्या करने के लिए अंकों के बीच की दूरी पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

असफल विद्यार्थियों ने संख्या रेखा का प्रयोग किस प्रकार किया

हमारी गतिविधि में लिए गए 40 छात्रों में से कम-से-कम 15% छात्र संख्या रेखा गतिविधि पर अपेक्षित रूप से सफल नहीं हो पाए। इन छात्रों ने सवाल को हल करने, या उस हल की व्याख्या के दौरान (स्पष्टीकरण त्रुटियाँ) ग़लतियाँ कीं। इनमें समाधान की त्रुटियाँ आम थीं। उनमें दूरी, स्थिति, गिनती या आरेख को ग़लत तरीक़े से पढ़ने में कठिनाइयाँ शामिल थीं। उदाहरण के लिए, चित्र 3 में दिखाए गए आइटम के लिए, असफल छात्रों की एक सामान्य प्रतिक्रिया अज्ञात मूल्य की पहचान करने के लिए केवल गिनती को नियोजित करना थी। उदाहरण के लिए, छात्र ने गिने जाने वाले अंकों के बीच की दूरी के महत्त्व के बारे में कोई जागरूकता नहीं दिखाई।

मैंने क्या सीखा

अपने उत्तर का स्पष्टीकरण छात्रों और उनकी सोच को परिष्कृत करने में मदद कर सकता है। इसके द्वारा वे अवधारणात्मक रूप से ज़्यादा स्पष्टता हासिल कर सकते हैं। इन गतिविधियों के दौरान कई छात्रों को लगा कि उन्होंने प्रश्न को ज़ोर से पढ़ने के बाद सही उत्तर दिया था या वह ज़ोर से पढ़ने के बाद ही प्रश्न की भाषा को समझ पाए थे। ज़ोर से पढ़ने से छात्रों को प्रश्न की सारी जानकारी को समझने में मदद मिली।

उदाहरण के लिए, चित्र 4 में छात्रों को संख्या रेखा पर स्थिति की पहचान करने और फिर गणना करने की आवश्यकता है। कई छात्रों ने अपने उत्तर के रूप में 400 किलोमीटर का चयन करते हुए इस प्रश्न को ग़लत तरीक़े से

पढ़ा। जब उनसे प्रश्न को ज़ोर से पढ़ने और अपने उत्तर की व्याख्या करने के लिए कहा गया, तो उन्हें अपनी त्रुटि का एहसास हुआ और उन्होंने अपने उत्तर को 580 किलोमीटर के सही विकल्प में बदल दिया।

स्पष्टीकरण, छात्रों की स्वयं को सही करने की क्षमता में वृद्धि करने के साथ ही स्वयं के प्रदर्शन में सुधार के लिए एक महत्त्वपूर्ण अवसर प्रदान करता है। सफल छात्रों ने मापन मॉडल के रूप में संख्या रेखा पर ध्यान केन्द्रित किया और दूरी, संख्याओं की निकटता, या सन्दर्भ बिन्दुओं से सम्बन्धित रणनीतियों को नियोजित किया। इसके विपरीत, असफल छात्रों ने ऐसी रणनीतियों का उपयोग किया जो गिनती, प्रश्न को ग़लत तरीक़े से पढ़ने या अनुमान लगाने पर केन्द्रित थीं। स्पष्ट है कि कई छात्रों को संख्या रेखाओं के ज्ञान को विकसित करने के लिए सहायता की आवश्यकता होती है। इस सबके निहितार्थ क्या हैं? हम इस समझ के आधार पर कक्षा शिक्षण के दौरान क्या रणनीति अपना सकते हैं? छात्रों को उनकी सोच को समझाने के लिए कब और कैसे मौक़े दिए जा सकते हैं। व्याख्या करने से छात्रों को समीक्षा करने और, यदि आवश्यक हो, उनकी गणितीय सोच को परिष्कृत करने का अवसर मिलता है। स्पष्टीकरण के दौरान, कुछ छात्र अचानक एक ऐसे क्षण का अनुभव करते हैं जहाँ उन्हें महसूस होता है कि उन्होंने कहाँ ग़लती की और वे उस ग़लती को आसानी से ठीक कर सकते हैं।

सन्दर्भ

1. Diezmann, C. M. & Lowrie, T. (2006). Primary students' knowledge of and errors on number lines. In P. Grootenboer, R. Zevenbergen, & M. Chinnappan (Eds), *Identities, cultures, and learning spaces* (Proceedings of the 29th annual conference of the Mathematics Education Research Group of Australasia). (Vol. 1, pp. 171–178). Adelaide: MERGA.
2. Witzel, B., Mercer, C. D., & Miller, M. D. (2003). Teaching algebra to students with learning difficulties: An investigation of an explicit instruction model. *Learning Disabilities Research and Practice*, 18, 121–131.
3. Geary, D. C. (1993). Mathematical disabilities: Cognitive, neuropsychological, and genetic components. *Psychological Bulletin*, 114, 345–362.
4. Geary, D. C., Hoard, M. K., Nugent, L., & Byrd-Craven, J. (2008). Development of number line representations in children with mathematical learning disability. *Developmental Neuropsychology*, 33, 277–299.

संदीप त्रिपाठी 1998 से मध्य प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों में अध्यापन का कार्य कर रहे हैं। इन्होंने गणित विषय में स्नातकोत्तर के साथ ही बी एड किया है। गणित के अलावा आपने इतिहास एवं समाजशास्त्र में भी स्नातकोत्तर किया है। इनके *चकमक, संदर्भ, स्रोत, पलाश* जैसी शिक्षा से जुड़ी पत्रिकाओं में लेख प्रकाशित हुए हैं। उनके द्वारा गणित और भाषा विषय में शैक्षिक अनुसन्धान के कार्य भी किए जाते हैं। शाहपुर विकासखण्ड में कार्यरत स्वयंसेवी संस्था एकलव्य के साथ मिलकर प्रारम्भिक शिक्षा में सुधार हेतु लम्बे समय तक कार्य किया है। इनकी चार पुस्तकें- *सफलता की सोच, छोटे अनुभव बड़ी जीत, मैं और मेरी दुनिया* और *डिजिटल मार्केटिंग हैक्स* नाम से प्रकाशित हुई हैं।

सम्पर्क : sandip26tripati@gmail.com

ए री सखी, चलो भाषा खेलें!

मुकेश मालवीय

पाठ्यपुस्तकों के पाठों पर कक्षा में नए-नए दिलचस्प अभ्यास बन सकते हैं जिनमें शिक्षक को भी मज़ा आए और बच्चों को भी। बच्चे भाषा से खेलते हुए भाषा की बारीक़ियों को भी समझते चलें, ऐसे उदाहरण प्रस्तुत करता लेख। सं.

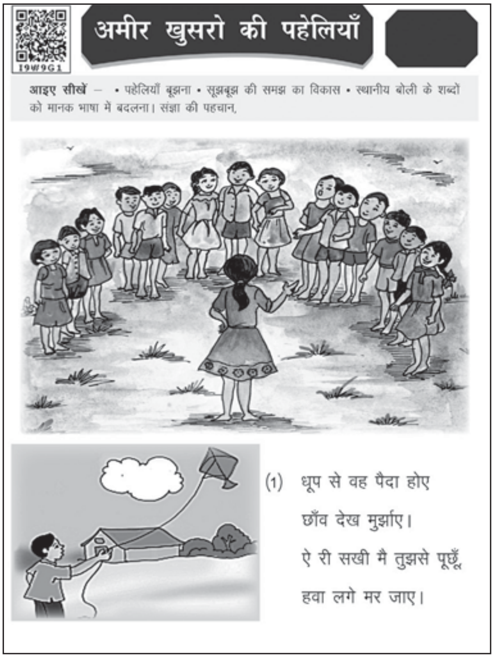
भाषा की पाठ्यपुस्तक के पाठ का स्वरूप या उस पाठ की भाषा, कक्षाओं के स्तरानुसार बदलनी चाहिए, पर यह बात भाषा की पाठ्यपुस्तकों से नदारद है। मसलन, आप कक्षा-3 में किसी महापुरुष की जीवनी जिन शब्दों और वाक्यों के ढाँचे के साथ पढ़ रहे होंगे, लगभग वैसी ही भाषा कक्षा-8 में भी किसी महापुरुष की जीवनी के लिए इस्तेमाल होती दिखेगी। तब क्या अभ्यास के प्रश्नों में कक्षा के अनुरूप कोई अन्तर होता है? मैं कहूँगा कि इसका जवाब भी आमतौर पर नहीं ही है। अन्तर केवल व्याकरण के हिस्सों के एक क्रमिक विभाजन में दिखता है। पाठ के अभ्यास प्रश्नों का पैटर्न हर कक्षा में एक जैसा होता है, जैसे– पाठ के आधार पर जानकारी वाले प्रश्न, वस्तुनिष्ठ प्रश्न, ख़ाली स्थान भरो, सही विकल्प चुनो, सही जोड़ी मिलाओ, सही-ग़लत का चिह्न लगाओ, वर्तनी ठीक करो, आदि। अगर पाठ कविता है तो, इन सवालों में दी गई पंक्तियों का अर्थ बताओ, शब्दों के अर्थ बताओ, जैसे सवाल भी जुड़ जाते हैं। अभ्यास के इन निश्चित क़िस्म के प्रश्नों के उत्तर रटकर बच्चे परीक्षा पास कर लेते हैं। इस तरीक़े से बच्चे भाषा का आनन्द नहीं ले पाते व नए शब्दों और भाषा के नए ढाँचे को लिखित और मौखिक रूप में बरतने की उनकी क्षमता में वृद्धि नहीं हो पाती। मुझे लगता है, इस कारण से भी भाषा की पाठ्यपुस्तक का मौजूदा पाठ्यक्रम बच्चों में मौलिक रूप से सोच और लिख पाने की क्षमता का विकास नहीं कर पा रहा है।

पाठ्यपुस्तक के पाठों का स्वरूप कैसे बदले, इसपर मैं ज़्यादा नहीं कह सकता। कक्षा में मेरे पास काफ़ी आज़ादी है तो मैं अभ्यासों में फेरबदल की कोशिश करता रहता हूँ। चलिए, आलोचनात्मक बातें करने की बजाय, आगे मैं कुछ पाठों के नए अभ्यास यहाँ साझा करना चाहता हूँ। ये अभ्यास मैंने अपनी कक्षा के बच्चों के साथ किए हैं और इनमें भाषा को नई तरह से बरतने के मौक़े बच्चों के लिए सृजित करने की कोशिश की है। मेरी यह समझ प्राशिका (एकलव्य शैक्षिक संस्था का प्रायोगिक प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम) की *खुशी-खुशी* पाठ्यपुस्तक के अनुप्रयोग से बननी शुरू हुई।

मध्यप्रदेश में कक्षा-3 की भाषा की एक पाठ्यपुस्तक में एक पाठ है 'अमीर खुसरो की पहेलियाँ।' पाठ्यपुस्तक अपेक्षा करती है कि तीसरी कक्षा के बच्चे इन पहेलियों को पढ़कर उनके उत्तर बता पाएँ और इन पहेलियों में छिपी जानकारियों के लिए बने सवालों के उत्तर लिखें।

मैंने जब इन पहेलियों को पढ़ा तो मुझे खुसरो की पहेलियों में भाषा का एक नया सौन्दर्य नज़र आया। वाक्यों के इन लुभावने और

सरस ढाँचों का इस्तेमाल करने में मुझे और बच्चों को मज़ा आया।


अमीर खुसरो की पहेलियाँ

19W9G1

आइए सीखें – • पहेलियाँ बूझना • सूझबूझ की समझ का विकास • स्थानीय बोली के शब्दों को मानक भाषा में बदलना। संज्ञा की पहचान,

(1) धूप से वह पैदा होए
छाँव देख मुर्झाए।
ऐ री सखी मै तुझसे पूछूँ
हवा लगे मर जाए।

पाठ्यपुस्तक में दी गई ये पहेलियाँ हैं :

धूप से वह पैदा होए, छाँव देख मुर्झाए।
ए री सखी मैं तुझसे पूछूँ, हवा लगे मर जाए।

एक नार के हैं दो बालक, दोनों एकहि रंग।
एक फिरे एक ठाढ़ा रहे, फिर भी दोनों संग।

एक कहानी मैं कहूँ, तू सुन ले मेरे पूत।
बिना परों वह उड़ गया, बाँध गले में सूत।

आदि कटे तो सबको पाले, मध्य कटे तो सबको मारे।
अन्त कटे तो सबको मीठा, खुसरो वाको आँखों दीठा।

हमने पहले इन पहेलियों के उत्तर ढूँढ़े। अब इन पहेलियों में छिपे उत्तर खोजने के बाद आगे क्या कर सकते हैं? यह लाइन 'ए री सखी मैं तुझसे पूछूँ' कितनी अनूठी है। इसी तरह 'एक कहानी मैं कहूँ, तू सुन ले मेरे पूत' या 'एक नार के हैं दो बालक'। तो हमने इन ढाँचों का उपयोग कर नए वाक्य बनाए, जैसे– 'ए री सखी मैं तुझसे पूछूँ, आज तुमने क्या-क्या खाया', 'ए री सखी मैं तुझसे पूछूँ, आज सपने में क्या-क्या देखा', इस तरह हर बच्चे के पास इस पंक्ति के साथ एक अपना सोचा हुआ सवाल आ जाता है। या एक और उदाहरण देखें : 'एक नार के हैं दो बालक, दोनों एकहि रंग'। यह पंक्ति सुनते ही बच्चे सोच-सोचकर अपनी पंक्तियाँ बताने लगे: 'एक पेड़ के हैं दो पत्ते, दोनों एकहि रंग', और 'एक नदी के दो किनारे, दोनों दूर-दूर'। या फिर यह पंक्ति 'एक कहानी मैं कहूँ, तू सुन ले मेरे पूत', सुनकर बच्चों ने जोड़ा : 'एक कहानी मैं कहूँ, तू सुन ले मेरी दादी' और 'एक कहानी मैं कहूँ, तू सुन ले मेरे भाई'। फिर इन पंक्तियों के बाद भी पंक्तियाँ जुड़ती गईं, जैसे– 'एक कहानी मैं कहूँ, तू सुन ले मेरी दादी / कितना काम करती हो तुम, थोड़ी देर तो सुनो कहानी' आदि।

इसी तरह कुछ मज़ेदार शब्दों को अपने वाक्यों में इस्तेमाल करने की गतिविधि शुरू हुई :

जैसे– 'एक फिरे एक ठाढ़ा रहे' पंक्ति के शब्द 'फिरे' और 'ठाढ़ा' को लेकर वाक्य बनाए गए। 'वह सड़क किनारे खड़ा था', की जगह 'वह सड़क किनारे ठाढ़ा था' हुआ। 'चलो घूमने चलें' की जगह 'चलो फिरने चलें' हो गया। इसी तरह 'दोनों एक ही रंग' वाक्यांश का अपने वाक्यों में इस्तेमाल हुआ, जैसे– 'ककड़ी और करेला दोनों एक ही रंग' और 'कोयल और कौआ दोनों एक ही रंग'। 'एक ही संग' वाक्यांश को लेकर हमें सूझा कि हम इसका इस्तेमाल एक साथ दिखने वाली वस्तुओं के नाम बोलने में कर सकते हैं, जैसे– 'ताला और चाबी दोनों एक ही संग', 'कुर्सी और टेबल दोनों एक ही संग'। अब बच्चों की कल्पनाशीलता अभिव्यक्त होने लगी थी। एक बच्चे ने मज़ाक़ किया : 'दशिया और सुनीता दोनों एक ही संग', 'दादा और दादी दोनों एक ही संग'। फिर हमने एक पहेली में आए शब्द 'सबको' और 'सबने'

(2) एक नार के हैं दो बालक
दोनों एकहि रंग,
एक फिरे एक ठाढ़ा रहे,
फिर भी दोनों संग।।



(3) आदि कटे तो सबको पाले,
मध्य कटे तो सबको मारे।।
अंत कटे से सबको मीठा,
खुसरो वाको आँखो दीठा।।



(4) एक कहानी मैं कहूँ,
तू सुन ले मेरे पूत।
बिना परों वह उड़ गया,
बाँध गले में सूत।।



(5) एक थाल मोती से भरा,
सब के सिर पर औंधा धरा।
चारों ओर वह थाल फिरे,
मोती उससे एक न गिरे।।



को लेकर वाक्य बनाए, जैसे– 'सबने मस्ती की', 'सबको डाँट पड़ी', 'सबने ताली बजाई', 'सबको मज़ा आया', आदि।

एक पहेली का उत्तर पतंग था, तो हमने पतंग बनाने की प्रक्रिया पर बातचीत की। फिर बातचीत इन सवालों व संवादों पर पहुँची कि पतंग कैसे उड़ाएँगे? किसका मन पतंग उड़ाने का करता है? पतंग और धागे के रिश्ते पर तुम क्या सोचते हो? पतंग और हवा एवं पतंग और आसमान को मिलाकर एक-एक बात बोलो।

पतंग वाली पहेली में आई पंक्ति 'बिन परों वह उड़ गया' के आधार पर भी हमने वाक्य बनाए। हमारे वाक्य थे :

'बिना पैर वह चल गया', 'बिना नाक वह सूँघ गया', 'बिना हाथ वह लिख गया', आदि।

खुसरो की ही एक और पहेली थी :

एक थाल मोती से भरा, सबके सिर पर औंधा धरा।

चारों ओर वह थाल फिरे, मोती उससे एक न गिरे।।

इस पहेली का उत्तर है, रात के आसमान में तारे। तो तारों की तुलना मोतियों से कैसे हो सकती है, या रूपक के ज़रिए कोई बात कैसे कही जाए, इस प्रश्न पर हमारी कक्षा में बातचीत हुई। हमने सोचा कि कुछ बातें रूपक का सहारा लेकर करें। हमने एक वाक्य चुना– मुझे तुमसे दोस्ती करनी है। इसे दूसरे शब्दों में कैसे कहा जाए? बहुत देर तक जब किसी को कोई वाक्य नहीं सूझा तो फिर हमने दोस्ती पर थोड़ी बातचीत की। दोस्ती होती है तो क्या होता है? एक बच्ची ने कहा कि हम उसके साथ बैठते हैं। तब मैंने पूछा कि क्या यह वाक्य ठीक होगा कि 'मुझे तुम्हारे पास बैठना है।' सबने 'हाँ' कहा। फिर एक बच्चे ने कहा कि मुझे तुम्हारा टिफ़िन खाना है। एक ने कहा कि मुझे तुमसे दो (दो उंगली उठाकर) करनी है। फिर एक ने कहा कि मुझे तुमसे हाथ मिलाना है।

हमने फिर वाक्य बदला। मैंने कहा कि 'ख़ूब अँधेरी रात थी', वाक्य को हमें कहना है, पर 'अँधेरा' शब्द उसमें नहीं आना चाहिए। बच्चों ने थोड़ा उकसाने पर कहना शुरू किया– आधी रात थी, डराने वाली रात थी, रात ऐसी थी जैसे आँख बन्द करके चल रहे हों, आदि।

इस तरह खुसरो की पहेलियों का पाठ हमारी कक्षा में दो-तीन दिन चला और हमने ख़ूब मज़े किए। मैंने स्कूल से घर जाते बच्चों के मुँह से सुना– 'ए री सखी मैं तुझसे पूछूँ, मैं तेरे घर चलूँ क्या?'

मुकेश मालवीय पिछले दो दशक से भी ज़्यादा समय से स्रोत शिक्षक के रूप में सरकारी और ग़ैर-सरकारी भूमिकाओं में सक्रिय हैं। कक्षा अनुभवों को लेकर सतत लिखते रहते हैं। वर्तमान में अनुसूचित जाति विकास विभाग के शासकीय आवासीय ज्ञानोदय विद्यालय, होशंगाबाद (मध्य प्रदेश) में शिक्षक पद पर कार्यरत हैं।

सम्पर्क : mukeshmalviya15@gmail.com

सीखने की बागडोर सीखने वाले के हाथ हो

हृदय कान्त दीवान

गणित से बच्चों को डर लगता है, कई शिक्षक और अभिभावक भी गणित से डरते हैं। लेख कहता है कि गणित से डरने की नहीं, बल्कि गणित करने की ज़रूरत है। सेवा-पूर्व व सेवारत शिक्षक प्रशिक्षणों में व अन्य ऐसे मंचों पर शिक्षकों के साथ सिर्फ़ सवालों को हल करने के सूत्र, चरण व शॉर्टकट आदि पर ज़ोर होता है, और यही फिर कक्षा में बच्चों के साथ होता है, यह गणित करना नहीं है। गणित करने का मतलब है सवालों को ख़ुद हल करना, सवालों को हल करने की सम्भावित प्रक्रियाएँ सोच पाना, उनको उपयोग में लेना और जान पाना कि कहाँ दिक़्क़त है। साथ-ही-साथ गणित के दर्शन और उसकी प्रकृति की भी समझ बना पाना। सं.

परिचय

गणित शिक्षण के लिए शिक्षकों की तैयारी करते समय यह सवाल महत्त्वपूर्ण है कि इस तरह के प्रयासों के प्रमुख हिस्से क्या हों। प्रशिक्षणों में आए शिक्षकों की अकसर यह माँग और अपेक्षा होती है कि स्रोत समूह उन्हें कक्षा में सीधे-सीधे, जस-की-तस लागू होने वाली गतिविधियाँ / वर्कशीट / सामग्री दे दें। ऐसी सामग्री जो सीखने-सिखाने को सरल व निश्चित क्रम में ढला हुआ बना दे। आग्रह यह होता है कि उन्हें ऐसे गुर सिखा दिए जाएँ, जिनसे उनकी कक्षा में विद्यार्थी आसानी से सीख जाएँ। इसमें न तो उन्हें और न ही बच्चों को ज़्यादा दिमाग़ खपाना पड़े। दूसरे शब्दों में, बग़ैर ज़्यादा मशक़्क़त के और कम मेहनत से सीखना हो पाए। इस अपेक्षा में बहुत कुछ शामिल है। कुछ उदाहरण हैं, संक्रियाएँ करने के लिए सूत्र व एल्गोरिदम, यथा– ‘प्लस-प्लस’ प्लस होता है और ‘माइनस-माइनस’ प्लस; कुछ हद से ज्यादा सामान्यीकरण, ज़्यादा अंक वाली संख्या बड़ी होती है; चरणवार नियम जैसे संख्या जोड़ने व घटाने में एक संख्या के ऊपर एक लिखकर स्तम्भवार ‘हासिल-उधार’ का ध्यान रख जोड़ सकते हैं; वर्गमूल में दो-दो के जोड़े बनाकर आगे बढ़ते हैं; आदि-आदि।

भिन्नात्मक व दशमलव संख्याओं को लेकर की जाने वाली संक्रियाओं के लिए बहुत-से ऐसे ही सूत्रनुमा कथन बने हुए हैं। इसी तरह इबारती सवाल हल करने के लिए कुछ संकेत शब्दों को पहचानने व वाक्यांश ढूँढ़ने के तरीक़े, जिनसे उन सवालों को बिना पूरा समझे ही हल कर लिया जाए। ऐसे सूत्र जिनको सिर्फ़ याद करके और इस्तेमाल करके ही विद्यार्थियों की सवाल हल करने की तैयारी हो जाए। सामान्यत: गणित की कक्षाओं में यही होता है और यही गणित शिक्षण का लक्ष्य समझा जाता है। अत: वैसी ही माँग व सामग्री की अपेक्षा गणित शिक्षकों की तैयारी के दौरान भी रहती है। कुछ ऐसे सूत्रनुमा कथनों की ईजाद अथवा खोज व आदान-प्रदान, जिनके इस्तेमाल से शिक्षक बच्चों को सवाल हल

करने के 'शॉर्टकट' सिखा पाएँ। स्कूल की कक्षा के स्तर पर भी और शिक्षकों के प्रशिक्षणों में भी ज़ोर गतिविधियों, सामग्री, सूत्र, परिभाषाओं, शॉर्टकट व सिद्ध करने की प्रक्रियाएँ, आदि याद करने व करवाने के तरीक़ों पर ही होता है।

इन सभी को महत्त्वपूर्ण मानने में गणित के अर्थ, उसे सीखने के अर्थ, सिखाने-सीखने के ढंग, उसमें सीखने वाले की भूमिका के बारे में जो समझ झलकती है वह शोध, अनुभव व नीति दस्तावेज़ों में व्यक्त समझ से बहुत अलग है। ज़ाहिर है कि गणित की कक्षाओं को सार्थक बनाने हेतु इन सब पहलुओं पर शिक्षकों के साथ काम करने की ज़रूरत है। नीति दस्तावेज़ों व शोध द्वारा चाहे गए गणित शिक्षण की राह में एक बड़ी बाधा शिक्षक की समझ व सामग्री के प्रकार की है।



चित्र : प्रशान्त सोनी

शिक्षकों की तैयारी

कक्षा में क्या होगा, उसपर सामग्री रचने वालों व पढ़ाने वालों की गणित की अवधारणाओं की समझ, गणित की प्रवृत्ति की समझ व गणितीय क्षमता का प्रभाव पड़ता है। अकसर शिक्षकों की तैयारी यह मानकर की जाती है कि भावी शिक्षकों अथवा कार्यरत शिक्षकों ने गणित की अवधारणाएँ सीख ली हैं और कार्यरत व्यक्ति तो काफ़ी समय से पढ़ा भी रहे हैं, अत: न सिर्फ़ पढ़ाए जाने वाले गणित को अच्छे से जानते हैं वरन् उन्हें अपनी गणितीय क्षमता में विश्वास भी है। किन्तु शिक्षकों के साथ किए कार्य व उनकी क्षमताओं को समझने के लिए किए गए परीक्षणों व अध्ययनों में यह स्पष्टत: दिखता है कि वे न सिर्फ़ गणित की अवधारणाएँ और सवाल समझने में अकसर ख़ुद को अक्षम पाते हैं बल्कि गणित से घबराते हैं व अपने अज्ञान को छिपाने का प्रयास करते हैं। शिक्षकों के समूह अकसर सामान्य यात्रा भत्ता प्रपत्र आदि को भरने के लिए भी अपने में से कुछ शिक्षक साथियों पर निर्भर होते हैं। प्रशिक्षणों में दिए गए वर्कशीट आधारित कार्यों को करते समय अधिकांश शिक्षक दूसरों के प्रयास से नक़ल कर उतारने को बेबस हैं। वे इन्तज़ार करते रहते हैं कि उन्हें ऐसा मौक़ा कब मिलेगा या फिर वे अपने द्वारा किए गए कार्य को सुगमकर्ता को प्रस्तुत ही नहीं करते। इस प्रयास में अकसर उनके लिए यह तय करना भी मुश्किल हो जाता है कि आसपास बैठे व्यक्तियों में से सही तरह से कौन सवाल हल कर रहा है। वे अपने रिस्पोंस में अलग-अलग जवाब लिख देते हैं। और उनमें से ज़्यादातर कई बार बेहतर जवाब को काटकर ऊट-पटाँग जवाब ही लिखा छोड़ देते हैं। इससे यह स्पष्ट समझ आता है कि न सिर्फ़ गणित पढ़ाने की तैयारी करवाते समय शिक्षकों को उनकी गणितीय क्षमता बढ़ाने के लिए समय व मौक़े देने की ज़रूरत है, वरन् यह मौक़े ऐसे होने चाहिए जिनमें सीखने वाला स्वयं सीखने व करने को प्रोत्साहित हो। साथ ही गणित के प्रति उसका डर व हिचक ख़त्म हो। ज़ाहिर है कि तीन-चार दिन के प्रशिक्षण में यह हासिल नहीं किया जा सकता।

विद्यार्थी गणित सीख सकते हैं

दूसरा महत्त्वपूर्ण पहलू है कि शिक्षकों को अपने विद्यार्थियों की समझ व क्षमता पर विश्वास है, अथवा नहीं। यह भी महत्त्वपूर्ण है कि शिक्षकों

को अपनी कक्षा का रास्ता तय करने व अपनी कक्षा के स्तरानुसार आकलन करने की कितनी छूट है। स्कूल की आन्तरिक परीक्षाओं को छोड़ दें तो माध्यमिक कक्षाओं में विद्यार्थियों का आकलन बोर्ड द्वारा बनाए प्रश्न पत्र के आधार पर किया जाता है। इसके लिए विद्यार्थियों के जवाबों को जाँचने का काम भी उनके शिक्षक नहीं, वरन् बाह्य परीक्षक करते हैं। शिक्षकों के साथ हुई औपचारिक व अनौपचारिक बातचीत में उन्होंने बच्चों की इन व्यापक स्तर पर की जाने वाली परीक्षाओं की तैयारी करवाने के तरीक़ों का ख़ुलासा किया। उन्होंने स्कूल की आन्तरिक परीक्षाओं में आकलन की प्रक्रिया के बारे में भी बताया। दोनों ही इस मान्यता पर आधारित थे कि उनकी कक्षा के बच्चे उस कक्षा के लिए निर्धारित गणित को नहीं सीख सकते। उनकी पूर्व कक्षाओं में तैयारी ठीक से नहीं हुई है, अत: उनमें से अधिकांश के लिए परीक्षा पास करना भी मुश्किल है। उन्हें परीक्षा में पास करवाने के लिए कुछेक सवालों को याद करवाना पड़ेगा। आन्तरिक परीक्षा में वे कुछ सवालों को चुनकर उनका हल बोर्ड पर लिखकर बता देते हैं और अपने विद्यार्थियों से यही अपेक्षा करते हैं कि वे इनको देख लें व परीक्षा के दौरान लिख दें। उन्होंने कहा कि यह तो वे सरलता से कर पाते हैं क्योंकि प्रश्न पत्र में क्या देना है यह उनपर ही है। हालाँकि उन्होंने यह भी कहा कि इसके बावजूद बहुत-से बच्चे उन सवालों को भी नहीं कर पाते। इसलिए ज़ाहिर है कि बोर्ड की परीक्षा में उन्हें दिक़्क़त आती ही है।



चित्र : प्रशान्त सोनी

परीक्षा की तैयारी की रणनीति यही है कि पुराने प्रश्न पत्रों व ब्लूप्रिंट के आधार पर अलग-अलग गाइड व गैस पेपर में से छाँटकर कुछ सवाल ढूँढ़े जाएँ व उनके हल बच्चों को तैयारी के दौरान लिखवा दिए जाएँ। इन 10-12 सवालों में से अगर तीन-चार भी आ गए और उनमें से उन्होंने एक-दो भी पूरे और सही कर दिए तो बच्चों को इतने अंक मिल जाएँगे कि वे और कुछ नहीं तो कृपांक लेकर ही पास हो जाएँगे। यह रणनीति तैयारी शुरू होने से पहले ही अजीब से पराजय बोध से ग्रसित है। वह अधिकांश बच्चों को यही बताती है कि वे गणित सीखने के क़ाबिल नहीं हैं, बस अधिक-से-अधिक किसी तरह पास होने की ही उम्मीद कर सकते हैं। इसके लिए उन्हें सवालों के हल रटने की आवश्यकता है। गैस व मॉडल पेपर की यह रणनीति गणित में अपेक्षाकृत ज़्यादा परिपक्व विद्यार्थियों को भी यही समझाती है कि गणित सीखना मात्र कुछेक प्रश्नों के हल को सीखना है। अवधारणाओं को समझना व नए सवालों को हल कर पाना उसका हिस्सा नहीं है। इसीलिए धीरे-धीरे परीक्षाओं में दिए जा सकने वाले प्रश्नों का दायरा भी निर्धारित पाठ्यपुस्तक के अभ्यासों व हूबहू उसी तरह के सवालों तक सीमित हो जाता है। गणित विषय से डर के कारण उसका सीखने-सिखाने का ढंग ही नहीं, सीखने वालों से प्रत्यक्ष अपेक्षा (यानी पाठ्यक्रम व पाठ्यपुस्तक से यथार्थ में अपेक्षित उद्देश्य) भी इतनी सीमित हो जाती है कि बोर्ड परीक्षा ही नहीं, हर परीक्षा के लिए निर्धारित ब्लूप्रिंट के आधार पर ही सीमित प्रश्नों के सेट में से कुछ को पूछ लिया जाता है। यही कारण है कि गणित के प्रशिक्षणों में ऐसे तरीक़े सिखाए जाने

की माँग होती है जिनसे शिक्षक सवालों को हल करने के सरल तरीक़े बच्चों को बता पाएँ।

गणित सिखाने के बारे में व्यापक रूप से पाई जाने वाली इस समझ के परिणामस्वरूप गणित की परीक्षाओं में शुरू में अच्छा करने वाले विद्यार्थी भी धीरे-धीरे गणित से विमुख हो जाते हैं। न सिर्फ़ स्नातक वरन् आगे गणित पढ़ते समय अच्छे संस्थानों में चयनित होकर गए हुए इच्छुक विद्यार्थियों में भी गणित के प्रति डर होता है व वे गणित को सवाल हल करने का ढंग मात्र मानते हैं। उसकी प्रकृति के बारे में भी उनकी समझ अधूरी होती है, अतः उनके लिए गणित में कुछ नया करना मुश्किल हो जाता है।



चित्र : प्रशान्त सोनी

किसी भी विषय को सीखने का बुनियादी मक़सद है उस विषय में नया सीख पाना व ऐसा ज्ञान रच पाना जो आपको सीधे-सीधे पढ़ाया अथवा बताया नहीं गया है। गणित के सन्दर्भ में इनको समझ पाना व इनके उदाहरण ढूँढ़ पाना सबसे सरल है। यहाँ इसका प्रमाण होगा, सीखने वाले का नए ढंग के सवाल हल कर पाना और नए चुनौती वाले सवाल सोच पाना। यह दोनों ही गणित सीखने की शुरुआत से शामिल न होने से, गणित सीखने का मक़सद और गणित का अर्थ ही गड़बड़ा जाता है।

दस्तावेज़ों में गणित शिक्षण

हालाँकि गणित शिक्षण के बारे में उपलब्ध आकांक्षिक / अपेक्षित समझ को नीति दस्तावेज़ों में अहम स्थान मिला है। इनके बारे में सतही तौर पर बात भी बहुत होती है किन्तु उनके निहितार्थ का व्यवहारिक स्वरूप, समझ की मंशा को नकारता है। उदाहरण के लिए, दस्तावेज़ों व शोध में यह महत्त्वपूर्ण माना गया है कि गणित शिक्षण बच्चे के सन्दर्भ व अनुभव दायरे से जुड़ा होना चाहिए, गणित सीखने का भाषा से सम्बन्ध है, बच्चों को स्वयं सवाल हल करने का मौक़ा मिलना चाहिए, आदि। किन्तु इन पहलुओं पर सीखने व इनके निहितार्थ तय करने में गणित विषय की, सीखने-सिखाने की प्रक्रिया व सीखने वालों की प्रकृति व प्रवृत्ति को वैकल्पिक ढंग से समझ पाना आवश्यक है। इन पहलुओं को वास्तव में महत्त्व मिले व उपरोक्त लक्ष्य सचेत संज्ञान में आएँ, इसके लिए बहुत-से मसलों, यथा– गणित की प्रकृति, भाषा-गणित अन्तर्सम्बन्ध, गणित का मूर्त से अमूर्त और अमूर्त से मूर्त उदाहरणों की ओर बढ़ने का उपक्रम व उसके निहितार्थ, गणित की आवश्यक अवधारणाओं पर शिक्षकों में समझ, आदि पर काम करने की आवश्यकता है। शिक्षकों की तैयारी का फ़ोकस इन बिन्दुओं पर होना चाहिए। शिक्षकों के साथ अन्तःक्रिया से उनमें विभिन्न प्रकार के गणितीय कथन रचने व जाँचने और अलग-अलग स्तर के सवाल व समस्याएँ हल करने और बना पाने का आत्मविश्वास आने की ज़रूरत है। इस आत्मविश्वास को लेकर ही वह विद्यार्थियों के डर को दूर कर पाएँगे और उनके सोचने, समझने व सवाल हल करने के तरीक़ों, उनमें छिपी समझ और तर्क पहचान कर उन्हें अपनी कमज़ोरियों से जूझने के लिए तैयार कर पाएँगे।

इस प्रकार की तैयारी के मौक़े रचने के लिए एक ओर तो ऊपर वर्णित समझ पर

सहमति व विश्वास चाहिए और इसके लिए आवश्यक समय व स्रोतों की उपलब्धता होनी चाहिए। दूसरी ओर, ऐसे प्रशिक्षकों की ज़रूरत है जो स्वयं यह कर पाएँ व शिक्षकों की इसके लिए तैयारी भी करवा पाएँ। ऊपर दिए पहलुओं को देखने पर यह समझ आता है कि यहाँ याद करने के सरल तरीक़ों, सामग्री, सूत्रों अथवा कलनों से परिचय का महत्त्व छोड़ उनके साथ गणित के दर्शनशास्त्र, समाजशास्त्र व गणित के इंसानी विकास की प्रक्रिया से सम्बन्ध, आदि पर भी संवादात्मक कार्य होना चाहिए। कक्षा में खुला संवाद होने पर ही छिपी हुई शंकाएँ व डर सामने आएँगे और उनपर किसी हद तक निराकरण सम्बन्धी विमर्श भी होगा। यह कहना, कि ऐसे किया जाए, सरल है किन्तु रोचक रूप में इसे कक्षाओं में सम्भव बना पाना कठिन है और इसके लिए शिक्षक की तैयारी ज़रूरी है। ऐसी तैयारी जिसके आधार पर वह ऊपर दिए सभी काम करवा पाए।

यह साफ़ है कि प्रशिक्षणों में गणित के दर्शनशास्त्र व समाजशास्त्र, और गणित की बुनियादी अवधारणाओं व उनके साथ जुड़े सवालों को हल करना, दोनों पर कार्य किया जाए। तात्पर्य यह है कि गणित सिखाने के तरीक़ों व सामग्री पर बात करने से पहले यह आवश्यक है कि गणित शिक्षा से सम्बन्धित दार्शनिक, सामाजिक व उसे सीखने की समझ के बारे में चर्चा हो, ताकि शिक्षकों में एक बुनियादी समझ बने जिसके आधार पर वे अपनी समझ को लगातार परख पाएँ और गणित व इसे सीखने-सिखाने की प्रक्रियाओं के बारे में अपनी एक स्पष्ट सचेत धारणा बना पाएँ। गणित व उसके शिक्षण के बारे में यह समझ व धारणा ही उनके शैक्षिक निर्णयों का आधार होगी। वे तभी सभी तरीक़ों व सामग्री के जंजाल को खँगालकर अपनी आवश्यकता व रुचि के अनुसार शिक्षण के तरीक़ों का चयन कर पाएँगे और उन्हें उसी तरह अथवा परिवर्तन कर सही व स्वतंत्र ढंग से इस्तेमाल कर पाएँगे। किन्तु अभी शिक्षक की तैयारी में अकसर सैद्धान्तिक पढ़ाई व उसमें भी शिक्षा के दर्शनशास्त्र अथवा शुद्ध दर्शनशास्त्र को अनुपयोगी व कठिन माना जाता है। यह न सिर्फ़ सीखने वाले शिक्षकों द्वारा माना जाता है अपितु जैसा हमने कहा, प्रशिक्षकों व कार्यक्रमों की रचना करने वालों द्वारा भी यही माना जाता है।



चित्र : प्रशान्त सोनी

इसके अलावा सेवा-पूर्व प्रशिक्षणों में जहाँ दोनों को स्थान दिया भी जाता है, वहाँ इन्हें शामिल करने का ढंग, इनको पढ़ाने का परिप्रेक्ष्य, आदि गणित की शिक्षा और शिक्षक के बारे में समझ बनाने में मदद नहीं करते। इस तरह के कार्यक्रमों में स्कूल के अध्यापन विषयों की अवधारणाओं के ढाँचे की रचना व अवधारणाओं की समझ में कमज़ोरी के कारण उनके साथ सिखाने के तरीक़ों पर किया गया कार्य बेमानी है और उससे भावी शिक्षक को कोई लाभ नहीं होता, वास्तव में नुक़सान ही हो सकता है। चूँकि उन्हें यह अहसास मिलता है कि शिक्षण की तैयारी में महत्त्वपूर्ण सिर्फ़ प्रस्तुतिकरण का ढंग है न कि अवधारणाओं व गणित की प्रकृति और सीखने की प्रक्रिया की गहरी समझ। सेवा-पूर्व प्रशिक्षणों के स्वरूप व उनके फ़ोकस के कारण अपनी पढ़ाई के दौरान परीक्षा की दृष्टि से पढ़े गए विषयों को पढ़ा पाने के लिए आवश्यक व्यापक व गहरी समझ तक ले जाने का प्रयास नहीं होता।

हालाँकि शिक्षक बनने की पूर्व तैयारी में स्कूल व कक्षा अनुभव आवश्यक है, उसे नज़रअन्दाज़ नहीं कर सकते। किन्तु उतना ही आवश्यक है विषय की अवधारणाओं, उसकी प्रकृति व उसके समाज और संस्कृति के साथ सम्बन्ध को अध्यापन की दृष्टि से खँगाला जाए। चाहे शिक्षक स्नातक हो अथवा स्नातकोत्तर, स्कूल की कक्षाओं में पढ़ाई जाने वाली गणितीय अवधारणाओं के प्रति उसकी समझ पर अध्यापन की दृष्टि से कार्य होना आवश्यक है। पर यह न तो शिक्षक की पूर्व तैयारी, न ही सेवारत शिक्षक प्रशिक्षण का हिस्सा बन पाता है।

अवधारणाओं पर समझ व सवाल हल करने के आत्मविश्वास में कमी के कारण शिक्षक यह समझ नहीं बना पाते कि उस टॉपिक में बच्चे को किस-किस अवधारणा से गुज़रने के मौक़े देने होंगे। वे बच्चों के प्रयासों और उनमें आ रहे अनपेक्षित उत्तरों को समझ पाने का उद्यम भी नहीं कर पाते। उनके लिए एक ढंग व एक एप्रोच जिससे वे वाक़िफ़ हैं, वही सही है और बाक़ी सारी ग़लत हैं। इसके कारण पूरी कक्षा सवालों को स्वयं हल करने से हिचकिचाने लगती है। शिक्षक व नए सीखने वाले विद्यार्थी उसी तरह से सवाल करने को बाध्य हैं जैसा उन्होंने देखा है। न वे स्वयं कोई और ढंग सोच सकते हैं और न ही उनमें यह आत्मविश्वास है कि दूसरे ढंग से किए गए सवाल की गुणवत्ता को वे परख सकें। इसलिए पढ़ाते समय शिक्षक कक्षा में कुछ नया सीखने का मौक़ा भी नहीं बना पाते, चूँकि वे बच्चों के 'ग़लत' उत्तरों पर मनन कर उनका तार्किक आधार भी नहीं समझ पाते और न ही उसकी ज़रूरत को महसूस करते हैं।

आगे की राह

इस सबका निहितार्थ यही है कि गणित शिक्षकों के प्रशिक्षण में उनके द्वारा पढ़ाई जाने वाली विषयवस्तु (अवधारणाएँ, अन्तर्सम्बन्ध व अलग-अलग ढंग के सवाल, आदि) पर बहुत अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। इसके अलावा गणित के सिद्धान्तों की समझ व गणित की प्रकृति से भी जूझने के मौक़े चाहिए। गणित व उसकी अवधारणाओं को कुछ हद तक बेहतर समझ पाना ही प्रशिक्षण का मक़सद हो सकता है। शार्टकट कलन, सवाल समझे बिना हल करने के प्रयास के लिए गुर, आदि शिक्षक की तैयारी अथवा विद्यार्थी के शिक्षण का हिस्सा नहीं होने चाहिए। ज़ाहिर है इस तरह के प्रशिक्षण चलती-फिरती एक-दो दिन की अन्त:क्रिया में नहीं हो सकते। इसके लिए लम्बा समय, ठोस मेहनत व सक्षम प्रशिक्षकों की ज़रूरत है। आवश्यक है कि शिक्षक व भावी शिक्षक तैयारी के दौरान गणित की किताबें पढ़ें, पाठ्यपुस्तकें भी पढ़ें, उनके अभ्यास करें व उनपर चर्चा करें। वे पुस्तक की सारी अवधारणाओं को उनको सीखने में आने वाली अड़चनों व भटकावों के बारे में सोच पाएँ व बच्चों के व्यवहार से, उनके द्वारा किए गए कार्य, आदि से उन्हें पहचान पाएँ।

गणित पढ़े हुए एक युवा ने इस विषय पर हुई बातचीत में अपने अनुभव बताते हुए कहा कि शिक्षा व्यवस्था में एक ढाँचागत स्तरीकरण है और इसमें विद्यार्थी सबसे नीचे हैं। बच्चों के सीख पाने का पूरा जिम्मा शिक्षा व्यवस्था ने शिक्षक पर थोप दिया है। इसमें कक्षाकार्य व अध्ययन में सक्रिय भागीदारी बनाने व रुचि बनाए रखने में विद्यार्थियों से कोई माँग नहीं है। और न ही पाठ्यक्रम, पाठ्यपुस्तक, आकलन व्यवस्था बनाने वाले व शिक्षा के ढाँचे को संचालित कर रहे लोगों से कुछ ऐसी स्पष्ट अपेक्षाएँ हैं जिनके कारण उन्हें बच्चों के सीखने अथवा न सीखने के लिए ज़िम्मेदार ठहराया जा सके, यह बोझा तो शिक्षक के सिर पर ही है। गणित सीखने के लिए आवश्यक है कि सीखने की बागडोर कुछ हद तक सीखने वाले के हाथ हो।

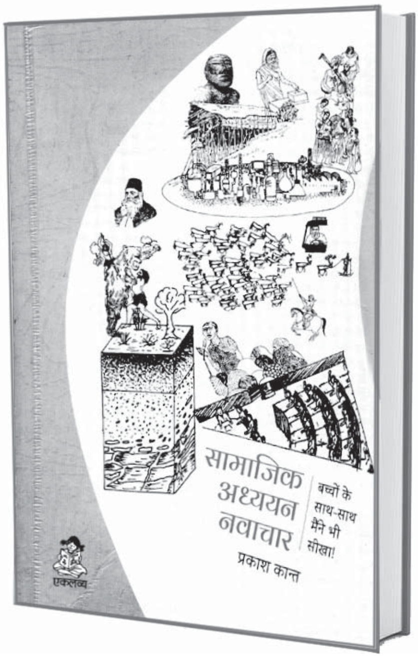
ह्रदय कान्त दीवान शिक्षा के क्षेत्र में पिछले चार दशक से कार्य कर रहे हैं। वे राज्य के शिक्षकीय ढाँचों में शैक्षिक नवाचार और परिवर्तन के प्रयासों से सम्बद्ध रहे हैं। एकलव्य के फ़ाउण्डिंग सदस्य रहे हैं। वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय के अनुवाद पहल कार्यक्रम का नेतृत्व कर रहे है।

सम्पर्क : hardy@azimpremjifoundation.org

सामाजिक अध्ययन नवाचार
बच्चों के साथ-साथ मैंने भी सीखा

अंजना त्रिवेदी

शिक्षा के क्षेत्र में पिछले चार दशकों से कार्यरत 'एकलव्य संस्था' ने 1983 में 'सामाजिक अध्ययन नवाचार कार्यक्रम' की शुरुआत की। इसके अन्तर्गत माध्यमिक कक्षाओं में सामाजिक अध्ययन विषय के शिक्षण के लिए किताबें विकसित की गईं और शिक्षकों का सतत प्रशिक्षण किया गया। इसी कार्यक्रम से एक शिक्षक के तौर पर जुड़े प्रकाश कान्त ने अपने अनुभवों को एक किताब की शक्ल दी है। बच्चों के साथ सामाजिक अध्ययन जैसे विषय को रोचक और प्रायोगिक तरीक़े से सीखने-सिखाने का यह पठनीय दस्तावेज़ है। *सामाजिक अध्ययन नवाचार : बच्चों के साथ-साथ मैंने भी सीखा* शीर्षक से 2021 में आई इस किताब के विभिन्न पहलुओं पर अंजना त्रिवेदी ने चर्चा की है। सं.



सामाजिक अध्ययन नवाचार

बच्चों के साथ-साथ मैंने भी सीखा

लेखक : प्रकाश कान्त

एकलव्य फ़ाउण्डेशन

यदि शिक्षक को अपने अध्यापन कार्य में रुचि और बच्चों के प्रति प्रेम व फ़िक्र हो तो वह बच्चों को दुनिया की सैर करवाते हुए विषय-अवधारणा में आनन्ददायी गोते लगवा सकता है और विषय के प्रति अटूट प्रेम और खोजबीन की ललक पैदा कर सकता है। शिक्षक के विशेष प्रयास से बच्चे अन्तरिक्ष की रोमांचकारी सैर पर निकल जाते हैं, उनमें समुद्र की गहराइयों को नापने की जिजीविषा पैदा हो सकती है और वे ग्लोब से विश्व की यात्रा भी करने लग सकते हैं।

शिक्षक ही शिक्षा के केन्द्र में होता है। शिक्षक अक्ष है यह समझना ज़रूरी है, क्योंकि तभी शिक्षक अपने चारों ओर बेहतरी के लिए प्रयास कर सकते हैं। सरकारी स्कूल और शिक्षक के बारे में हम सब जानते ही हैं कि सरकारी कार्यों के दबाव, संसाधनों की कमी और बच्चों की पारिवारिक पृष्ठभूमि और चुनौतियों से शैक्षणिक कार्यों में बाधा आती है। लेकिन जब कभी शिक्षक बच्चों में ऐसी जिज्ञासा और तर्कशीलता पैदा कर दें कि खोजबीन में बच्चों की रातों की नींद ग़ायब हो जाए तब बच्चे अपने गाँव की दशा और दिशा से देश-दुनिया की दशा और दिशा

लेन-देन का सिलसिला चला आ रहा है। इसके कई तरीके और रीति रिवाज़ हैं। तुम कोई एक उदाहरण दो जहां लेन-देन बिना पैसों के होता है?



ज्वार के बदले आम

की समझ बना पाते हैं। एक शिक्षक कैसे अपने स्कूल के वातावरण को बदल सकता है वह 'मानकुण्ड स्कूल' के बच्चों की आँखों में देखा जा सकता था।

एकलव्य फ़ाउण्डेशन से प्रकाशित *सामाजिक अध्ययन नवाचार* किताब के लेखक प्रकाश कान्त हैं। एक शिक्षक के अपने कैरियर विकास और बनी-बनाई परिपाटियों को तोड़कर नवाचार अपनाते हुए एक जीवन्त और सार्थक कक्षा शिक्षण की तस्वीर पेश करती है यह किताब।

किताब के आमुख में रश्मि पालीवाल लिखती हैं कि एकलव्य के 'सामाजिक अध्ययन नवाचार कार्यक्रम' में प्रकाश कान्त को शिक्षकों की शिक्षा और बच्चों की शिक्षा, दोनों में निहित अलोकतांत्रिक परिपाटियों का पुनरावलोकन करने का मौक़ा मिला। प्रकाश बताते हैं कि कैसे एक शिक्षक के नाते वे महसूस कर पाए कि उन परिपाटियों की जकड़न से हटा जा सकता है, जीवन्त और सक्रिय हुआ जा सकता है। "नवाचार को लागू करने का अर्थ यह नहीं होता है कि शिक्षक एक समान रूप से तय विधियों को ठीक तरह से क्रियान्वित कर दे, बल्कि यह होता है कि एक विचारशीलकर्ता के तौर पर वो अपने उद्देश्यों को तय करे, अपने छात्रों की समझ का पता लगाए, बच्चों की मदद के रास्ते खोजे, उन तरीक़ों को आज़माकर देखे, व्यवहारिक कठिनाइयों का सामना करे, उनसे पार पाए।" रश्मिजी आमुख में आगे लिखती हैं, "लिखना सम्प्रेषण करना होता है, बता देना नहीं– इस तथ्य की कई ख़ूबसूरत अभिव्यक्तियाँ किताब में जगह-जगह पढ़ने को मिल जाती हैं।"

कई बार किताब पढ़ते हुए ऐसा लगता है कि शिक्षक कई सत्रों में सामाजिक अध्ययन के कौशलों को विकसित करने के लिए सूक्ष्म विश्लेषण करते हैं। उनकी पैनी नज़र से बच्चे किसी विषय-वस्तु को कैसे समझ सकते हैं, इसके लिए कई तरह के प्रयास करते हैं। माध्यमिक स्कूल के शिक्षक बच्चों के साथ कितने स्तरों पर कार्य और मूल्यांकन करते हैं, इसके कई सारे उदाहरण प्रकाशजी अपनी पुस्तक में रखते हैं।

सामाजिक अध्ययन नवाचार किताब 19 अध्यायों में है। हर अध्याय में लेखक एक अवधारणा को खोलते चलते हैं। वह किताब में बहुत ही सुन्दर तरीक़े से बयान करते हैं कि कभी-कभी कैसे किसी विषय की एक अवधारणा

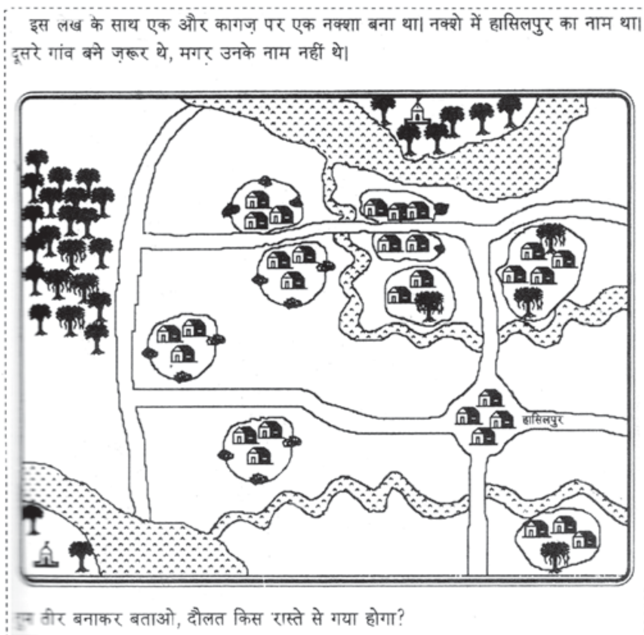
को खोलने के प्रयास में दूसरी अवधारणा पर टिक कर काम करना पड़ता है, बिना इस भय के कि कक्षा का समय समाप्त हो रहा है या फिर परीक्षा में तो यह दो नम्बर का ही प्रश्न आने वाला है। लेखक इस किताब में शिक्षा और परीक्षा के सवाल पर कई सारी मान्यताओं को तोड़ते हैं और बच्चों की कामचलाऊ पढ़ाई के ख़िलाफ़ जाते हुए बच्चों की अवधारणा पर ठोस काम करने के जीवन्त कक्षाओं के विस्तृत उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। वे कहते हैं कि ठोस और गम्भीर काम का ही नतीजा होता है कि बच्चे इस विषय को माध्यमिक कक्षाओं के बाद भी आगे पढ़ते हैं, और पढ़ना चाहते हैं।

प्रकाश कान्त अपनी इस किताब में लिखते हैं, "एकलव्य द्वारा प्रकाशित सामाजिक अध्ययन नवाचार की पुस्तकों के कई पाठ मुझे इस बात की गुंजाइश देते थे कि मैं बच्चों को उनके आज के सवालों-समस्याओं से जोड़ूँ, उनपर बात करूँ। इस सिलसिले में मैंने पाया कि सिंचाई एक बड़ा मुद्दा है। कक्षा 7 के लिए बनी किताब में 'हरित क्रान्ति' से सम्बन्धित पाठ ने इस मुद्दे पर बात करने की गुंजाइश दी। एक अहम प्रश्न यह था कि इस क्रान्ति से असल फ़ायदा किसे हुआ। यह 'ग़रीबी' वाले पाठ से भी जुड़ता था। कक्षा के बहुत सारे बच्चे भूमिहीन या छोटी जोत के किसान परिवार से थे। उनके अनुभव और उनकी बातें कक्षा के लिए असल बातें थीं। ख़ास चीज़ यह रही कि बच्चे इस बात को समझ पाए। उनके भीतर छठी कक्षा में पढ़े 'किसान और मज़दूर' पाठ के गंगू जैसे छोटे, रामू जैसे मझोले और हरनारायण जैसे बड़े किसान का सन्दर्भ था। बस कड़ियाँ जोड़ने की ज़रूरत थी।"

जाति के सवाल पर शिक्षक का असहज होना आज भी इस विषय को कक्षा में बेहतर तरीक़े से खोलने और पढ़ाने में बाधक बनता है। समाजशास्त्री और सामाजिक अध्ययन पुस्तकों के लेखक सी एन सुब्रह्मण्यम (सुब्बू) जैसे लोगों के तर्क का हवाला देते हुए लेखक कहते हैं, "बच्चे जब तक समस्या को ठीक से जानेंगे और समझेंगे नहीं– तब तक उसे ख़त्म करने के लिए कैसे तैयार हो पाएँगे।"

सामाजिक अध्ययन नवाचार किताब के हर पृष्ठ पर शिक्षक के द्वारा स्कूल में की गई मेहनत का रंग, बच्चों की आँखों में पढ़ने की लालसा, और पालक की नज़रों में शिक्षक के प्रति सम्मान दिखाई देता है।

सामाजिक विज्ञान विषय तब और महत्त्वपूर्ण हो जाता है जब वह हमारे रोज़ाना के जीवन से ताल्लुक रखता हो। लेखक के अनुसार, "पाठ्यक्रम में यह विषय विराट स्तर पर एक समावेशी विषय होता है। इस विषय को सामान्य तरीक़े से पढ़ाना आसान है किन्तु बच्चा रुचि ले और इस विषय के प्रति आकर्षित हो, इसके लिए कई तरह की क़वायद करनी होती है। 'नक़्शे और पैमाने– आओ मानचित्र बनाएँ' अध्याय में



कक्षा छठीं के भूगोल खण्ड के पाठ "दिशाएँ" का एक पन्ना

दिए गए मानचित्र की ही तरह तय किया गया कि माचिस की एक तीली को एक स्केल के बराबर मानकर हर समूह नक़्शा बनाएगा। अगर कमरे की लम्बाई 15 फ़ीट है तो 15 तीलियाँ और चौड़ाई 10 फ़ीट है तो 10 तीलियाँ रखी जानी हैं। लेकिन दिक़्क़त भी थी। कक्षा बड़ी थी। क़रीबन 70 बच्चों की। इनमें छात्राएँ ही 25 के आसपास थीं। तक़रीबन 16-17 समूह बने थे। मानचित्र कक्षा के फ़र्श पर नहीं बन सकते थे, इसके लिए सारे समूहों को स्कूल के मैदान में ले जाना पड़ा। मानचित्र बनाने में दूसरी दिक़्क़त हवा की आ रही थी। तीलियाँ उड़ी जा रही थीं। मैदान भी समतल न था। जैसे-तैसे नक़्शे ठीक-ठाक बन ही गए। बच्चे इतना जान गए कि किसी निश्चित आधार पर बड़ी चीज़ को छोटा करके कैसे बनाया जा सकता है।''



कक्षा सातवीं के नागरिकशास्त्र खण्ड के पाठ "उद्योग" से लिया गया एक चित्र

शिक्षक लिखते हैं, ''मैंने बार-बार पैमाने सम्बन्धी गतिविधि तो करवाई ही, इसके अलावा मासिक टेस्ट, तिमाही, छःमाही और वार्षिक परीक्षाओं में पैमाने सम्बन्धी प्रश्न कई तरह से पूछे– जितनी ज़्यादा तरह से पूछे जा सकते थे, उतने अलग तरीक़ों से अलग-अलग नाप और पैमाने देकर उनसे अलग-अलग तरह के कमरों के मानचित्र बनवाए– दो दरवाजे वाले, आमने-सामने दरवाज़े वाले, उत्तर-दक्षिण लम्बाई वाले, पूर्व-पश्चिम वाले। इन सबका लाभ भी हुआ। बच्चे न सिर्फ़ मानचित्र पढ़ना बल्कि बनाना भी काफ़ी हद तक सीख पाए।''

कक्षा में इस तरह के कामों से बच्चों की अवधारणा इतनी मज़बूत हो जाती है कि बच्चे उसे कभी नहीं भूल सकते।

किताब में दिखतीं शिक्षक की उलझनें

शिक्षक अपने अनुभव के आधार पर लिखते हैं कि पृथ्वी ही नहीं, चाँद, सूरज वग़ैरह भी गोल हैं। चाँद और सूरज तक तो बात ठीक है किन्तु पृथ्वी गोल है यह बात बच्चे नहीं समझ पाते हैं। पृथ्वी के गोल होने की बात बच्चों को जमती नहीं है। लेखक इसको एक उदाहरण से बताते हैं कि मैंने ग्लोब की तरह पृथ्वी के भी गोल होने की बात कही। बच्चे आपस में बुदबुदाने लगे, उनके चेहरे के भाव शिक्षक ने पढ़ते ही ग्लोब और नक़्शे से समझाने का प्रयास किया। मुश्किल अवधारणा को सरलीकृत या आसान बनाना सम्भव नहीं हो पाता है। ऐसे में आवश्यक है दिक़्क़तों के हल तलाशना।''

हल तब तक तलाशना जब तक बच्चों के चेहरे पर सन्तुष्टि के भाव नहीं आ जाएँ। खेत समतल हैं, तो हम जहाँ रहते हैं वह गोल कैसे हो सकती है? पृथ्वी किसपर टिकी है? ऐसे अनेक प्रश्न तभी बच्चों के मन में आते हैं जब अवधारणाओं को समझाने का प्रयास किया जाए। तभी बच्चे आपके और नज़दीक आकर पूछ सकने की हिम्मत कर सकते हैं, ''तमारे कैसे मालम मास्साब?'' (तुम्हें कैसे पता मास्टर साब?)। बच्चों के ऐसे प्रश्नों के माध्यम से कक्षा में शिक्षक का सत्ता वर्चस्व भी टूटता है और शिक्षक एवं विद्यार्थी के बीच सीखने की दूरी भी ख़त्म होती है।

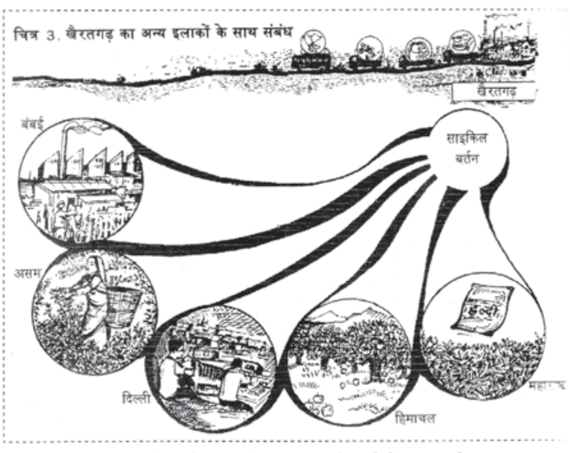
ग्लोब को तो हम घुमाते हैं, पृथ्वी को कौन घुमाता है? पृथ्वी घूमती क्यों है? पूर्व से पश्चिम क्यों नहीं घूमती? पृथ्वी कब तक घूमेगी? कब से घूम रही है? बच्चों के ऐसे सवाल शिक्षक के पसीने छुड़वा सकते हैं यदि पढ़ाई प्रकाश कान्त की कक्षा जैसी हो तो। बच्चे इन सवालों तक तभी पहुँच सकते हैं जब उनके सामने शिक्षक एक अवधारणा पर गहराई से चर्चा कर रहा हो।

आमतौर पर सामाजिक अध्ययन के शिक्षक इतने सारे बिन्दुओं पर चर्चा करते ही नहीं हैं। पिछले दस सालों से स्कूल विज़िट में देखती हूँ कि शिक्षक यह कहकर पल्ला झाड़ देते हैं कि यह अवधारणा तो आगे की कक्षाओं का मामला है। अभी तुम्हारी उम्र नहीं है यह सब समझने की। अभी काम की विषयवस्तु को पढ़ लो। सवाल ख़ूब करते हो। मैंने महसूस किया है कि सामाजिक अध्ययन के शिक्षक भी पृथ्वी की उत्पत्ति पर सवाल करने पर इसे भगवान की देन बताकर पल्ला झाड़ लेते हैं। प्रकाश कान्त ने अपनी कक्षा में सौरमण्डल से अपनी छोटी-सी शुरुआत की। ग्रहों-उपग्रहों की उत्पत्ति और ग्रहों के सूर्य का चक्कर लगाने के बारे में बताया। बच्चों ने अपनी पिछली क्लास में नील आर्मस्ट्रांग के चन्द्रमा पर उतरने और वहाँ से चित्र भेजने के बारे में पढ़ा था, उनकी याद दिलाई।

शिक्षक का बच्चों के स्तर पर जाकर समझाना प्रकाश सर ही कर सकते हैं। पृथ्वी की उम्र 454 करोड़ वर्ष है या सौरमण्डल का उद्भव क़रीब 46 हजार लाख वर्ष पहले हुआ था, यह सुनकर उनके दिमाग़ में इतनी लम्बी समयावधि का चित्र स्पष्ट नहीं होता। इसी प्रकार, ग्रहों की आपसी और सूर्य से उनकी अलग-अलग दूरियाँ तो उनकी कल्पना से ही बाहर हैं। ऐसी तकनीकी स्थिति में शिक्षक ने अपने स्तर पर रास्ते निकालते हुए लिखा है, "सौर परिवार के चित्र में ग्रहों की सूर्य और एक दूसरे से दूरियों को पास, ज़्यादा पास, दूर, ज़्यादा दूर वग़ैरह जैसी शब्दावली में सीमित कर समझ लेते हैं। मुझे लगता है, इस स्तर पर बच्चों से ज़्यादा उम्मीद नहीं की जानी चाहिए। संख्याएँ अपनी जगह। यूँ भी, समय या दूरी के मामले में संख्याओं के स्थूल बोध तक सीमित रहकर भी उनका काम चल जाता है।"

'देसी ट्रेसिंग पद्धति' अध्याय में लेखक लिखते हैं, "यह तरीक़ा ट्रेसिंग पेपर की मदद से ट्रेस करने या ट्रेसिंग टेबल पर ट्रेस करने से अलग था। और ग्रामीण बच्चों के लिहाज़ से आसान और सस्ता भी! कपास के फ़ाहे या कपड़े के छोटे-से टुकड़े पर घासलेट (मिट्टी का तेल या केरोसिन) डाला। इससे काग़ज़ पारदर्शी हो जाता और नक़्शे या चित्र पर रखकर पेन्सिल से ट्रेस कर लिया जाता।"

'अँधेरे-उजले गलियारे, सुरंगें और तहख़ाने और उनसे गुज़रते बच्चे' इतिहास के इस अध्याय में प्रकाश लिखते हैं, "इतिहास शुरू से ही राजसत्ता-केन्द्रित रहा। जन की सत्ता, जन की भूमिका उससे बेदख़ल रही। राजा, उसका ख़ानदान, वंश, यश, जय-पराजय और कामकाज, यही इतिहास था। कभी जानने की कोशिश ही नहीं की गई कि उस समय के साधारण लोग क्या-क्या कर रहे थे? इतिहास लेखन के इस जनविरोधी



कक्षा छठवीं के नागरिकशास्त्र के पाठ "एक दूसरे पर निर्भर" का एक चित्र

रवैए से बौद्धिक वर्ग को काफ़ी शिकायत रही। मुझे ख़ुद लगता था कि इतिहास इस तरह से क्यों नहीं लिखा जाना चाहिए कि अलग-अलग समय में लोग किस तरह से रहते थे, उनका सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक जीवन कैसा था, उनकी सोच और व्यवहार में किस प्रकार के परिवर्तन आते थे?''

इस किताब में अपनी असहमति को दर्ज करते हुए प्रकाश लिखते हैं, ''भारतीय इतिहास को हमेशा उत्तर की तरफ़ से देखा जाना ठीक नहीं रहा। भले ही शुरुआत में और काफ़ी लम्बे समय तक राजनीतिक घटनाओं का केन्द्र मुख्यतः उत्तर भारत रहा लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि दक्षिण और उत्तर-पूर्व में कुछ हो ही नहीं रहा था, और जो कुछ भी हो रहा था वह सिर्फ़ उत्तर में ही!''



कक्षा आठवीं के इतिहास खण्ड के पाठ "अँग्रेज शासन में उद्योग और मज़दूर" से लिया गया एक चित्र

'पुरानी चीज़ों, किताबों और इमारतों से आतीं इतिहास की आवाज़ें' अध्याय में प्रकाश लिखते हैं कि इसके तहत कराए गए एक प्रोजेक्ट कार्य के दौरान बच्चे अपने घरों की चीज़ों को किस प्रकार खोजकर लेकर आए। ''सर, म्हारे घरे पुरानी पेटी में किताब थी!'' एक बच्ची ने किताब देते हुए कहा। वह 1956 की छपी हुई हिन्दी की किताब थी। एक पाठ में लिखा था, ''नाना ने नानी को खींचा। नानी ने मुनिया को खींचा। मूली ज़मीन से बाहर आ गई...''

''50-60 साल पहले लोग अपनी दूसरी-तीसरी की पाठ्यपुस्तकों में क्या पढ़ते थे, चित्रों से पता चल सकता है कि वे कपड़े हमारे जैसे ही पहनते थे या दूसरी तरह के, लेन-देन के लिए जो पैसे इस्तेमाल होते थे वे अभी जैसे थे या अलग तरह के, वग़ैरह।''

बच्चों ने किस तरह से अपने गाँव मानकुण्ड का इतिहास पता किया : चूँकि शिक्षक यहाँ के स्थाई निवासी नहीं थे इसलिए उन्होंने वहाँ के प्रधानाचार्य और भृत्य से इस गाँव के इतिहास की जो जानकारी बच्चे लेकर आए, उसके प्रमाण जानने का प्रयास किया।

'बच्चे बतौर भावी नागरिक और नागरिक शास्त्र' पाठ में शिक्षक ने अपनी कक्षा में किए गए नवाचारों का उल्लेख करते हुए लिखा कि बच्चों से छोटा-मोटा मैदानी कार्य करवाते हुए, गाँव के सरपंच को बुलाकर उनसे कक्षा में बच्चों की बातचीत करवाई गई। इतिहास के पाठों से गुज़रते हुए बच्चों ने इतना तो जान लिया था कि मनुष्य ने शिकार युग से लेकर आज तक जो कुछ भी हासिल किया है, वह सामूहिक प्रयासों से ही किया गया है। आज सामूहिकता की वैसी ज़रूरत भले न महसूस होती हो लेकिन परस्पर निर्भरता की तो रहती ही है। बैंक के लोगों के साथ सम्बन्ध पर बातचीत की गई। बैंक खाते कितने प्रकार के होते हैं, पैसे कितनी तरह से जमा किए जा सकते हैं, कितनी तरह का ब्याज मिलता है, बैंक ऋण की अदायगी किस तरह से की जाती है, आदि।

'ग़रीबी और रहमान के फ़कीर पिता का सवाल' अध्याय भी काफ़ी दिलचस्प है। मैंने कक्षा की शुरुआत इसी पाठ से की तब मेरी नज़र अचानक रहमान पर चली गई थी। रहमान के पिता फ़कीर थे। ग़रीबी रेखा के नीचे के परिवारों

का सर्वे करते समय निर्धारित मानकों के कारण उनका परिवार हम शिक्षकों द्वारा ग़रीबी रेखा के ऊपर बता दिया गया था। और कुछ लोगों के साथ भी ऐसा हुआ था जो बिना किसी सर्वे के वैसे ही न केवल ग़रीब लगते थे बल्कि थे ही, लेकिन सर्वे में ग़रीब नहीं रह गए थे। तहसील कार्यालय से प्रमाणित होकर आने के बाद जब पंचायत में ग़रीबी रेखा के नीचे आने वाले परिवारों की सूची जारी हुई थी तब सूची के नाम देखकर लोगों में नाराज़गी फैल गई थी।

इस नाराज़गी की वजह से परिवार के लोग स्कूल आ गए। रहमान के पिता ने पूछा, "माड़ सा'ब, सही-सही बताना क्या मैं आपको अमीर लगता हूँ!" उनकी फ़कीर आँखों में निरीहता और कातरता थी।

शिक्षक लिखते हैं, "यह सारा उलटफेर उस साल ग़रीबी पता करने की पद्धति बदल दिए जाने से हुआ था। इसके पहले जब भी इस तरह के सर्वे हुए थे उनमें परिवारों की माली हालत, आमदनी, ख़र्च इत्यादि के आधार पर ग़रीबी का निर्धारण होता था। कुछ कॉलम अतिरिक्त रूप से जोड़े गए थे। ख़ासकर ख़र्चे के। जैसे– महीने में कितना तेल लगता है, कितना आटा-दाल, चाय-शक्कर, इलाज पर कितना ख़र्चा, इस तरह के दीगर ख़र्च। ज़ाहिर है, ज़्यादातर लोगों द्वारा ख़र्चा बहुत ज़्यादा बताया गया, आमदनी कम।" वैसे स्कूली किताब और पाठ्यक्रम में छोटे बच्चों को किसी सरकारी योजना या कार्यक्रम की सिर्फ़ सैद्धान्तिक जानकारी दी जाए, नकारात्मक पक्षों की बात न की जाए! लेकिन इन पुस्तकों में सकारात्मक और नकारात्मक दोनों पक्षों की बात इस मंशा से कही गई कि बच्चों में स्वस्थ एवं सन्तुलित आलोचनात्मक दृष्टिकोण विकसित हो सके और वे अपने आसपास की चीज़ों पर नज़र रखना सीख सकें।

प्रकाश कहते हैं कि सामाजिक अध्ययन के नवाचार भले ही बन्द हो गए हों किन्तु नवाचार के माध्यम से विषय की अवधारणाओं को समझने और बच्चों को समझाने के प्रयोग मील के पत्थर साबित हुए हैं।

प्रकाश कान्त की यह किताब उनके तीन दशकों के स्कूली शिक्षण अनुभवों की डायरी है। यह डायरी उन सबके लिए उपयोगी है जो इस विषय को बहुत आसान, अनुपयोगी विषय समझते हैं और यह धारणा रखते हैं कि इसमें तो कभी कोई फ़ेल हो ही नहीं सकता फिर क्यों इतनी मेहनत करना। पर अच्छी शिक्षा में विषय से लगाव बनाने और उसकी पड़ताल करने का रास्ता कितनी क़वायदों से गुज़रता है, यह किताब पढ़कर समझ आता है।

अफ़सोस है कि हमारे राज्य में ऐसे स्कूल कम ही मिलेंगे, जहाँ सामाजिक अध्ययन विषय के कौशलों– तर्कशीलता, विश्लेषणात्मक पहल, आलोचनात्मक चिन्तन, अभिव्यक्ति के मौक़े और प्रश्न पूछने की आज़ादी दी जाए।

यह किताब सामाजिक अध्ययन के शिक्षकों और शिक्षक-प्रशिक्षकों व शोधार्थियों के लिए एक अमूल्य दस्तावेज़ है।

अंजना त्रिवेदी विगत ढाई दशकों से सामाजिक क्षेत्र में सक्रिय हैं। शिक्षण-प्रशिक्षण के साथ ही पत्र-पत्रिकाओं के लिए सतत लेखन रहा है। महिला स्वास्थ्य, शिक्षा एवं नागरिक अधिकार इनके प्रमुख विषय रहे हैं। अंजना ने पिछले दस सालों तक अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, भोपाल, मध्यप्रदेश में सामाजिक विज्ञान स्रोत व्यक्ति के रूप में काम किया है। वर्तमान में शिक्षा के क्षेत्र में स्वतंत्र रूप से बतौर सलाहकार कार्य कर रही हैं।

सम्पर्क : trivedi20anjana@gmail.com

बेहतर शिक्षक वह है जिसका बच्चों के साथ मानवीय रिश्ता और जुड़ाव हो

शिक्षिका इंदु पंवार के साथ मीमांशा की बातचीत





मीमांशा : नमस्ते इंदुजी, अपने बारे में कुछ बताएँ।

इंदु : नमस्ते मीमांशा, मैं राजकीय प्राथमिक विद्यालय गिरगाँव में प्रधानाध्यापिका हूँ। मेरा जन्म पौड़ी गढ़वाल के एक क़स्बे देवप्रयाग में हुआ। बचपन से ही मुझे पढ़ने का ख़ूब शौक़ रहा। मेरी प्रारम्भिक शिक्षा गाँव के ही राजकीय प्राथमिक विद्यालय, खड़खोला में हुई। मेरे प्रेरणास्रोत मेरे पिताजी रहे हैं। वे इंटरमीडिएट कॉलेज धिंडवाड़ा में प्रधानाचार्य थे। मेरी माँ बीरा देवी एक गृहिणी थीं और हमेशा पढ़ाई के लिए प्रेरित करती रहती थीं। मैंने अपने विद्यार्थी जीवन में स्वयं ही पढ़ाई की, कभी-कभार भाई भी मदद करते थे। कक्षा 6 से 12 तक मेरी शिक्षा धिंडवाड़ा में मेरे पिताजी के निर्देशन में हुई। स्नातक एवं स्नातकोत्तर की पढ़ाई पौड़ी डिग्री कॉलेज से हुई। बीटीसी करने के बाद मेरी प्राथमिक विद्यालय, बिरसनी कोट में सहायक अध्यापिका के पद पर नियुक्ति हुई।

मीमांशा : आप कई वर्षों से शिक्षक के तौर पर अध्यापन कार्य कर रही हैं। शिक्षक के रूप में कैसा महसूस करती हैं ?

इंदु : मुझे अपने शिक्षण कार्य से बहुत प्रेम है। शिक्षिका होने पर मैं गर्व करती हूँ। इस पेशे में बच्चों के प्रति दायित्व व आनन्द की मिलीजुली अनुभूति होती है। मैं कहीं भी रहूँ, मेरी प्राथमिकताओं में मेरा विद्यालय और ख़्यालों में बच्चे आते रहते हैं। लगातार सोचती हूँ किस बच्चे के साथ क्या नया करूँ ताकि हर बच्चा सीखने के निर्धारित स्तर को प्राप्त कर पाए। प्रत्येक बच्चे के अभिभावकों से भी बराबर सम्पर्क बनाए रखती हूँ और सच तो ये है कि उनके द्वारा मिलने वाला आदर व प्रेम मुझमें कार्य करने के लिए ऊर्जा का संचार करता है।

मीमांशा : आपने बातचीत में बताया कि आपको बचपन से ही पढ़ने-लिखने का शौक़ हैं, और निरन्तर पढ़ती-लिखती रहती हैं। किस प्रकार की

पुस्तकें / सामग्री पढ़ना पसन्द करती हैं और स्वयं के पढ़ने के लिए समय कैसे निकाल पाती हैं ?

इंदु : यदि हम अपने मन में किसी कार्य को करने की ठान लें तो वह हमारा जुनून बन जाता है, और इसके लिए फिर समय निकालने जैसी बात नहीं रह जाती। जब भी अकेली रहती हूँ, पुस्तकें मेरे साथ होती हैं। अकसर विद्यालय से आने के बाद अपने पढ़ने के लिए समय निकालती हूँ। शुरुआत में जब मैंने पढ़ना शुरू किया तो पारिवारिक और शासकीय व्यस्तताओं के चलते घर-परिवार से कुछ दिक़्क़तें आईं, किन्तु कुछ समय के बाद सभी दिक़्क़तें ठीक हो गईं। अब घर के सदस्य भी मेरी पढ़ाई के रुटीन को समझ गए हैं और मेरी पढ़ने की प्रक्रिया को प्रोत्साहित करते हैं।



किताबें हमें जीवनभर सिखाती रहती हैं, यह बात मैं अपने घर एवं विद्यालय के बच्चों को भी बताती हूँ। हमें बच्चों को ही नहीं सिखाना अपितु स्वयं भी सीखना है, और विचारों एवं अभिव्यक्तियों को पुख़्ता करना है। इन सभी बातों का ध्यान रखते हुए मैं पढ़ने-लिखने का प्रयास करती हूँ। मुझे ऐसी कहानियाँ व लेख पढ़ना पसन्द हैं जो बच्चों और स्कूल से सम्बन्धित हों। जैसे– गिजू भाई बधेका की पुस्तकें, *बच्चे की भाषा और अध्यापक, तोत्तोचान,* आदि।

मीमांशा : एक शिक्षक के पेशे के लिए पढ़ना-लिखना क्यों व कितना ज़रूरी है ? यह शिक्षण में कैसे मदद करता है ?

इंदु : जैसे कि मैंने बताया, मेरा निरन्तर प्रयास रहता है कि मैं कुछ नया पढ़ूँ जिससे मेरे शिक्षण में मदद मिल पाए और बच्चों के सीखने का स्तर और बेहतर हो सके। कई बार हमारे विचार स्थिर हो जाते हैं, मन में बात आती है कि यह काम नहीं हो सकता किन्तु जब हम पुस्तकें पढ़ते हैं तो हमारे विचारों की स्थिरता टूटती है। विचारों को आगे ले जाने, उनमें सन्तुलन बनाने में पुस्तकें हमारी मदद करती हैं। एक शिक्षक को पढ़ना-लिखना इसलिए भी ज़रूरी है क्योंकि बच्चे कई बार ऐसे सवाल पूछते हैं जिनका जवाब हमारे पास नहीं होता। बच्चों की विभिन्न अपेक्षाओं, सवालों को पूरा करने के लिए एक शिक्षक को पढ़ते-लिखते रहने की आवश्यकता होती है, और शिक्षा एक ऐसा विषय है जिसमें निरन्तर परिवर्तन होता रहता है। उस सकारात्मक परिवर्तन को समझने, स्वीकारने एवं बच्चों के साथ बेहतर शिक्षण प्रक्रिया किस प्रकार से की जाए, आदि के लिए भी पढ़ना आवश्यक है। एक उदाहरण के रूप में इसे बताना चाहूँगी कि पढ़ना-लिखना शिक्षण में कैसे मदद करता है– पहले मैं स्वयं पढ़ती थी उसके बाद लगा कि यह पढ़ना-लिखना बच्चों तक भी जाना चाहिए। इसके बाद मैंने रीडिंग कॉर्नर में ‘किताबें जो हमने पढ़ीं’ नाम से बच्चों के साथ काम किया, जिसमें प्रत्येक बच्चा अपनी पढ़ी हुई कहानी हमें सुनाता और अन्य बच्चे कहानी सुनने के बाद उसपर सवाल-जवाब करते। फिर मैंने इन विचारों को विस्तार देने के लिए बच्चों के साथ डायरी लेखन पर कार्य किया जिसमें बच्चे अपने अनुभवों को डायरी में लिखते हैं। लगातार ऐसा करने से बच्चों में कहानियाँ सुनने और किताबें पढ़ने के प्रति रुझान देखने को मिला है।

मीमांशा : अपने इस पढ़ने-लिखने के शौक़ को आप विद्यालय के बच्चों में कैसे देखना चाहती हैं ?

इंदु : जैसे मैं ख़ुद पढ़ने-लिखने का शौक़ रखती हूँ वैसे ही चाहती हूँ कि बच्चे भी पढ़ने-लिखने का शौक़ रखें, किन्तु शौक़ पैदा करने



कभी-कभी दोनों के बीच तालमेल बैठा पाना मुश्किल हो जाता है। विभागीय कार्य अधिकतर घर में ही करती हूँ। विद्यालय में मेरा पूरा फ़ोकस अकादमिक कार्य पर रहता है। यदि कोई सूचना बहुत ज़रूरी और तुरन्त माँगी गई हो, तो उसे उसी समय तैयार कर भेजना पड़ता है, इससे अकादमिक कार्य में बाधा उत्पन्न हो जाती है। मैं विद्यालय में कभी भी डाक बनाने का कार्य नहीं करती हूँ। विद्यालय के सभी कार्यों में मेरी साथी शिक्षिका मंजु रावतजी का बहुत सहयोग रहता है। विद्यालय बेहतर चले, बच्चे अपने स्तरानुसार सीखें, इसके लिए प्राथमिकता होती है कि मैं अकादमिक प्रक्रिया में अधिक-से-अधिक सम्मिलित रहूँ।

के लिए सर्वप्रथम बच्चों में पुस्तकों के प्रति दिलचस्पी जगानी होगी। इसके लिए मैं बच्चों को स्वतंत्र छोड़ देती हूँ ताकि वह पुस्तक के अन्दर देखने की कोशिश करें, फिर उन्हें बाल साहित्य की कहानियाँ या कविताएँ सुनाती हूँ। मैं कोशिश करती हूँ बच्चों को नई-नई अच्छी किताबें पढ़ने को दूँ जिससे उनमें पढ़ने के प्रति रुचि पैदा हो। जिन बच्चों को अभी पढ़ना नहीं आता उनको चित्र कहानी की किताबें देती हूँ वह चित्र देखकर मौखिक रूप से कहानी बताते हैं। इससे बच्चे की अभिव्यक्ति का विकास हो रहा है। धीरे-धीरे जब उनको अक्षरों व शब्दों की तरफ़ लेकर जाएँगे तो उनको लिखने-पढ़ने में आसानी होगी। इस प्रयास से मेरे सभी बच्चे रीडिंग कॉर्नर में तरह-तरह की पुस्तकें पढ़ते हैं, कुछ अपने घर ले जाते हैं। लिखने के लिए अपने अनुभवों को डायरी में दर्ज करते हैं। डायरी देखकर बच्चे लिखने की तरफ़ प्रोत्साहित हुए। मैंने डायरी छपवाकर उसमें बच्चों की फ़ोटो लगाईं, जिसे बच्चे बार-बार देखते हैं।

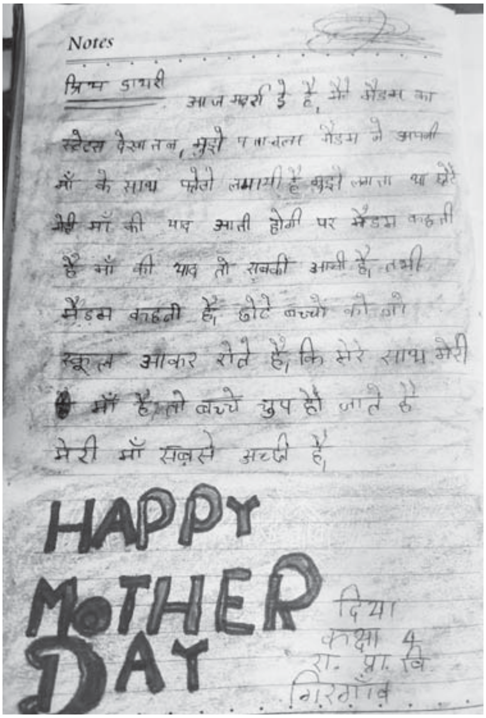
मीमांशा : विद्यालय की प्रधानाध्यापिका होने के नाते आपके मुख्य दायित्व क्या हैं ? विद्यालय बेहतर तरीक़े से चले, इसके लिए क्या प्राथमिकताएँ देखती हैं ?

इंदु : एक अकादमिक ज़िम्मेदारी है और दूसरी विभागीय सूचनाओं एवं डेटा से सम्बन्धित।

मीमांशा : यह कैसे सुनिश्चित करती हैं कि विद्यालय की व्यवस्था / प्रक्रिया सुचारु रूप से चले ? जैसे— विद्यालय में अच्छी पढ़ाई-लिखाई, विद्यालय प्रक्रियाओं में समुदाय एवं सहयोगी अध्यापकों की भूमिका, विद्यालय विकास योजना, आदि।

इंदु : शुरुआत में स्कूल के बेहतर संचालन के लिए मेरे द्वारा योजना बनाई जाती है। इसे बनाने के बाद मैं साथी शिक्षिका से उसे साझा करती हूँ। उनके इनपुट आने के बाद योजना में ज़रूरत अनुसार परिवर्तन कर उसे लागू किया जाता है। जैसे— बच्चों के स्तरानुसार समूह बनाना, अभी वर्तमान में बच्चों के साथ किस स्तर पर कार्य करने की ज़रूरत है, किस कार्य पर अधिक फ़ोकस करें ताकि बच्चे बेहतर सीखें और हम समय पर पाठ्यक्रम पूरा कर पाएँ। केवल पाठ्यक्रम पूरा करना हमारा उद्देश्य नहीं होता, इसमें मुख्य मक़सद रहता है कि बच्चे सीखने के प्रतिफल प्राप्त कर सकें।

रही समुदाय की भूमिका, तो उनके साथ निरन्तर बैठकें होती रहती हैं, बराबर सम्पर्क में रहा जाता है। विद्यालय जाने का रास्ता गाँव के बीच से होने के कारण बच्चों के अभिभावकों से



बातचीत हो जाती है। यदि कोई बच्चा विद्यालय नहीं आता है तो उनके घर फ़ोन से सम्पर्क किया जाता है, कभी-कभी बच्चों को लेने उनके घर भी जाते हैं। मैंने इससे पहले अपनी बातचीत में नहीं बताया कि मैं जहाँ से विद्यालय जाती हूँ वहाँ से घुमन्तू परिवार के 8 बच्चों को साथ लेकर जाती हूँ। यह मेरी दिनचर्या है, रोज़ उनके अभिभावकों के साथ सम्पर्क में रहती हूँ। विद्यालय संचालन की इस पूरी प्रक्रिया में सहयोगी शिक्षिका का मुझे निरन्तर सहयोग मिला है। हम मिलकर सभी कार्य कर पाते हैं। हाँ, इन सभी कामों में मुश्किलें तो आती हैं, उसके लिए भी मिलकर रास्ते निकालते हैं। कई बार कुछ मुश्किलें हल नहीं भी होती हैं।

मीमांशा : पिछले कुछ सालों में आपके द्वारा किए गए कुछ नए व महत्त्वपूर्ण प्रयासों के बारे में बताइए?

इंदु : पहले मैंने स्वयं के विचारों को लिखना शुरू किया। फिर बच्चों के साथ भी इसका प्रयोग किया जिसमें मैंने विद्यालय में 'डायरी बोलती है' कार्यक्रम की शुरुआत और प्रभावी संचालन किया। आज बच्चे डायरी लिखते हैं, अपने विचारों एवं अनुभवों को दर्ज करते हैं। इसके साथ ही बच्चों के लिए पोडियम का निर्माण किया। पोडियम का इस्तेमाल करके बोलने में बच्चे आनन्द का अनुभव करते हैं। बच्चों के लिए बास्केटबॉल खेलने की सुविधा मुहैया कराई, इसमें वे बहुत ही आनन्द ले रहे हैं। घुमन्तू परिवारों के 8 बच्चों का अपने विद्यालय में नामांकन और विद्यालय तक उनके आवागमन के ख़र्च का वहन। उनके लिए आवश्यकतानुसार कपड़े, अन्न, आदि की व्यवस्था की गई। समुदाय के योगदान से संसाधनों की व्यवस्था की पहल की गई। चुनौतियों के बावजूद काफ़ी हद तक सफल भी हो पाई हूँ। सीखने-सिखाने की प्रक्रियाओं में टीएलएम को तरजीह दी। टीएलएम के अधिक उपयोग से बच्चों की पढ़ने में रुचि बढ़ने लगी है। शिक्षण में 'बाल शोध शिक्षण विधि' के प्रयोग को बढ़ाया, जो अधिक समय की माँग करती है। इन सभी प्रक्रियाओं से मेरे बच्चों के सीखने के स्तर में सकारात्मक बदलाव आया है। बदलाव की एक वजह यह भी दिखती है कि कोविड काल के चलते मेरा बच्चों के अभिभावकों से अधिक मिलना-जुलना हुआ, जिससे उनके सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक सन्दर्भ भी समझ में आए और मुझे अपनी ज़िम्मेदारी का अहसास और अधिक दृढ़ता से हुआ।

मीमांशा : इस साल आप पढ़ने-पढ़ाने में और क्या नए प्रयास करने का सोच रही हैं?

इंदु : इस साल मुख्यतः विद्यालय स्तर पर बाल सेमिनार के आयोजन की योजना बनाई है। उम्मीद है कि आसपास के विद्यालयों के बच्चे भी इसमें प्रतिभाग करेंगे। कोविड काल के दौरान बच्चों की पढ़ाई में हुए नुक़सान को पूरा करने के लिए योजनाएँ 'विद्या सेतु' के आधार पर तैयार की गईं, यानी विषयवार शिक्षक मार्गदर्शिकाओं के अनुसार पठन-पाठन करना। यह सुनिश्चित करना कि हर बच्चा अपनी वर्तमान कक्षा के अनुसार अपेक्षित अधिगम

दक्षताओं को प्राप्त करे। शिक्षण प्रक्रियाओं में स्वयं एवं बच्चों के द्वारा निर्मित शिक्षण अधिगम सामग्री का उपयोग करना। नियमित शिक्षण के साथ-साथ कुछ सहगामी क्रियाओं को सीखना, जैसे– फ़ोटोग्राफ़ी, कम्प्यूटर की जानकारी, बाल डायरी का विस्तारीकरण, लर्निंग कार्नर का बेहतर उपयोग, आदि।

मीमांशा : बच्चों के साथ बतौर शिक्षक आप कैसे जुड़ी हैं?

इंदु : मुझे लगता है कि यह कोई अलग से की जाने वाली बात नहीं है। ये एक शिक्षक के तौर पर हमारे अन्दर रची-बसी होनी चाहिए। बच्चों के साथ जुड़ाव बनाने के लिए किसी प्रक्रिया की ज़रूरत नहीं, बल्कि ये कुछ प्रक्रियाओं का परिणाम है। हम बच्चों के साथ जब भी बात करें तो संवेदनशील हों, और उनकी ज़रूरतों व मुश्किलों को समझें। बच्चों की इच्छाओं और भावनाओं का आदर करना एक महत्त्वपूर्ण बात है। शिक्षण के दौरान अकसर देखती हूँ, बहुत बार होता है कि मैं गणित पर बच्चों के साथ काम करना चाहती हूँ, लेकिन बच्चे कहते हैं आज हमको कहानी पढ़नी है। मैं ऐसे में अपनी इच्छाओं को उनके ऊपर बिलकुल भी प्रभावी नहीं होने देती और जैसी उनकी इच्छा होती है उसी अनुसार शिक्षण करती हूँ। कभी बच्चे कहते हैं कि हमको किसी ख़ास खेल को खेलना है तो उनकी इच्छाओं का ख़्याल रखते हैं। हाँ, यह बात बिलकुल नहीं कि हमेशा ही करना है और सभी इच्छाओं के लिए करना है। एक बात ये भी है कि मैं बच्चों के पारिवारिक सन्दर्भों को भी समझने का प्रयास करती हूँ ताकि उनके साथ भावनात्मक रूप से जुड़ पाऊँ।

मीमांशा : आप बच्चों में लोकतांत्रिक मूल्यों को स्थापित करने के लिए क्या प्रयास करती हैं?

इंदु : मेरा निरन्तर प्रयास रहता है कि बच्चों को विद्यालय की सभी प्रक्रियाओं में शामिल करूँ और उन्हें भी स्कूली निर्णयों में भागीदारी करने का मौक़ा दूँ। स्कूल लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं के



लिए जगह बनें, इसके लिए मैं अपने विद्यालय में इन प्रक्रियाओं का आयोजन करती हूँ :

1. बच्चों द्वारा प्रार्थना सभा का आयोजन, जिसमें बच्चे ख़ुद निर्णय लेते हैं कि प्रार्थना सभा में क्या-क्या होगा और कौन करेगा।
2. रीडिंग कार्नर चलाने की ज़िम्मेदारी व इसका प्रबन्धन बच्चे आपस में मिलजुलकर करते हैं।
3. विद्यालय प्रांगण की देखरेख बच्चे ख़ुद तय करते हैं कि कौन किस भाग की देखरेख करेगा।
4. हर कार्य में बालक-बालिकाओं की बराबर भागीदारी।
5. बच्चों की आम बैठक में बच्चे मिलकर तय करते हैं कि स्कूल में क्या व्यवस्था और संसाधन होने चाहिए। जैसे– बच्चों ने फ़ोटोग्राफ़ी सीखने की इच्छा ज़ाहिर की और हमने उसपर काम किया।

मीमांशा : अपने शिक्षण कार्य व स्कूल संचालन के दौरान आपको किस तरह की चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, और इनका समाधान कैसे करती हैं?

इंदु : सबसे बड़ी चुनौती तब होती है जब हम शिक्षण कार्य कर रहे हों और अचानक कोई विभागीय कार्य आ जाए जिसे तुरन्त करके

भेजना पड़ता है। उस समय यह हो जाता है कि हम बच्चों को देखें या विभागीय कार्य करें। कोई प्रशिक्षण आ जाता है तब समस्या होती है कि यदि 10 दिन के लिए अपने बच्चों को छोड़ती हूँ तो उनके सीखने के स्तर में अन्तर आएगा। इसके लिए हम स्वयं से ही समाधान निकालते हैं, जैसे– योजना के तौर पर उन्हें पाँच दिन के लिए कोई टास्क दे देना, या ट्रेनिंग के बाद वापस विद्यालय आने पर उनपर अतिरिक्त ध्यान और समय देना। सहयोगी अध्यापिका को बताती हूँ कि मैंने बच्चों को फलाँ प्रकार का टास्क दिया है, आप इनके टास्क को देखते रहना। इसके अलावा, जिन बच्चों को मैं अपने साथ (घुमन्तू परिवार) विद्यालय लेकर जाती हूँ, क्योंकि उन्होंने इसके पहले तक स्कूल नहीं देखा था और वह ऐसे वातावरण में नहीं रहे हैं, जहाँ अन्य बच्चों जैसा रोज़ नहाना, समय पर उठना, स्कूल के कपड़े पहनकर स्कूल आना, आदि होता है, इन सब प्रक्रियाओं में उन्हें ढालने के लिए उनके अभिभावकों को शिक्षा का महत्त्व बताना मेरे लिए शुरुआत में बहुत बड़ी और कठिन चुनौती थी। किन्तु धीरे-धीरे इसपर कार्य हो रहा है, बच्चे अब पढ़ने के लिए नहाकर और सफ़ाई के साथ निरन्तर विद्यालय आते हैं। शुरुआत में ये बच्चे विद्यालय में अपना समूह बना लेते थे और गाँव के बच्चे अलग, धीरे-धीरे इसपर भी काम किया। अब सब साथ में खेलते हैं और एक साथ कक्षा में बैठते हैं। राजस्थान से आए बच्चों के साथ रिश्ता बनाने के लिए मैं उनकी भाषा सीख रही हूँ, उनके अभिभावकों से कुछ-कुछ शब्द उनकी भाषा में बोलती हूँ ताकि निरन्तर सम्पर्क बना रह सके।

मीमांशा : **आपकी नज़र में बेहतर शिक्षक कैसा होना चाहिए ?**

इंदु : मुझे लगता है, बेहतर शिक्षक वह है जिसका बच्चों के साथ मानवीय रिश्ता हो और वह सबसे पहले बच्चों से जुड़े। जब तक हम बच्चों से मानवीय रिश्ते क़ायम नहीं करेंगे तब तक उनको कुछ भी नहीं सिखा सकते हैं। साथ



ही शिक्षक को विषय और उसे पढ़ाने की अच्छी जानकारी व समझ होनी चाहिए। इसके साथ ही प्राथमिक स्कूल के शिक्षक को धैर्यवान भी होना चाहिए। मुझे लगता है जिस शिक्षक में ये गुण हैं वह एक बेहतर शिक्षक है।

मीमांशा : **किसी विषय या पाठ को पढ़ाने के लिए आप किस तरह की तैयारी करती हैं ?**

इंदु : मेरा उद्देश्य रहता है कि किसी पाठ या विषयवस्तु को पढ़ाते समय बच्चों को अधिक-से-अधिक मूर्त चीज़ें या सामग्री दिखाकर शिक्षण कार्य करूँ, क्योंकि मैं सोचती हूँ कि वे कुछ करके सीखें, सीखने के दौरान ख़ूब सोचें व प्रश्न पूछें। कोई भी पाठ पढ़ाने से पहले उस पाठ को ध्यान से पढ़ती हूँ, मनन करती हूँ, और आवश्यक तैयारी करती हूँ। क्या-क्या टीएलएम की आवश्यकता मुझे पड़ेगी, इसको बनाने या जुटाने की कोशिश करती हूँ। साथ ही अधिक-से-अधिक बच्चों के सन्दर्भ और अनुभव कैसे उस पाठ को पढ़ाने में सम्मिलित हों, इसपर विशेष रूप से कार्य करती हूँ। और पढ़ाने के बाद सोचती हूँ कि मुझे अपने शिक्षण कार्य में कितनी सफलता मिली, बच्चे



कितना सीख पाए, और मेरे पढ़ाने में कहाँ व क्या कमी रह गई।

मीमांशा : जैसा कि आपने बताया, स्कूल में दो शिक्षिकाएँ हैं और काफ़ी बच्चे हैं। आप बच्चों को पढ़ाती भी हैं और स्कूल संचालन की जिम्मेदारी भी निभाती हैं, यह सब कैसे हो पाता है ?

इंदु : साथी शिक्षिका के साथ बेहतर सम्बन्ध हैं और वह निरन्तर मुझे प्रोत्साहित व समय-समय पर सहयोग करती हैं। यदि कोई कार्य विभाग से सम्बन्धित आया और उन्होंने देख लिया तो वह स्वयं उस कार्य को कर लेती हैं। मुझे कभी भी बोलने की ज़रूरत महसूस नहीं होती। यह सहयोग ही बहुत बड़ी बात है। मुझे हमेशा प्रोत्साहित करते रहने के लिए भी अपनी सहयोगी शिक्षिका मंजु रावत का धन्यवाद करना चाहती हूँ। हमारा समुदाय भी काफ़ी अच्छा है, उससे कभी भी किसी तरह की शिकायत नहीं मिलती है। समुदाय के लोग समय-समय पर अपना सहयोग देते रहते हैं। इस तरह बच्चों के शिक्षण के साथ-साथ विद्यालय संचालन की ज़िम्मेदारी निभाई जाती है। शिक्षा का अधिकार सभी बच्चों को है, और यह अधिकार उन्हें मिलना चाहिए। इसके लिए यदि हम अपनी पेशेवर ज़िम्मेदारी से प्रयास करते हैं और इन प्रयासों से किसी बच्चे का वर्तमान और भविष्य सँवरता है तो एक शिक्षक के लिए इससे बड़ा उपहार कुछ नहीं हो सकता है।

मीमांशा : इंदुजी, इस बातचीत के लिए आपने समय निकाला इसके लिए आभार।

इंदु पंवार वर्तमान मे पौड़ी जनपद के राजकीय प्राथमिक विद्यालय गिरगांव में प्रधानाध्यापिका हैं। उन्होंने शुरूआती लगभग 7 वर्ष तक सहायक अध्यापिका के तौर पर प्राथमिक स्तर के सभी विषयों में शिक्षण किया है। वर्ष 2004 से प्रधानाध्यापिका पद पर नियुक्ति के उपरान्त भी आपने कक्षा शिक्षण को हमेशा ही अपने कार्य के केन्द्र में रखा है। वे हमेशा यह सोचती रहती हैं कि अपनी शिक्षण प्रक्रियाओं को और अधिक व्यवस्थित और प्रभावी कैसे बनाया जा सकता है। पत्र-पत्रिकाओं में शिक्षा और सामाजिक मुद्दों पर लेख लिखती रहती हैं।

सम्पर्क : indupanwar195@gmail.com

मीमांशा गोदियाल विगत 7 वर्षों से अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन में कार्यरत हैं। वर्तमान में उत्तराखण्ड के पौड़ी ज़िले में काम कर रही हैं। हिन्दी विषय में कार्य करने के साथ-साथ अन्य विषयों को सीखने एवं समझने के प्रयासों में जुटी हैं।

सम्पर्क : meemansha.godiyal@azimpremjifoundation.org

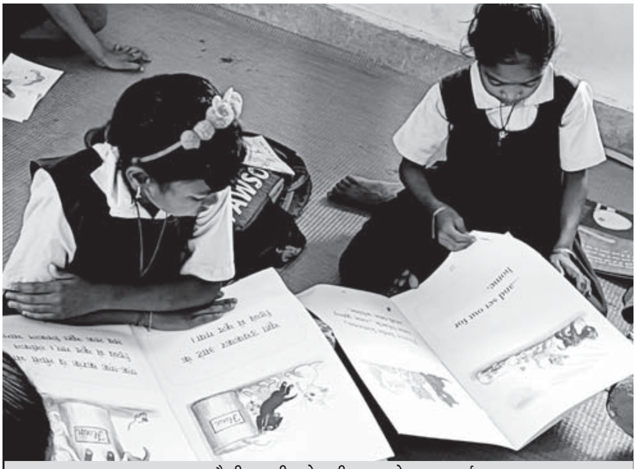
स्कूलबन्दी के दौर में सीखने की क्षति
चुनौतियाँ और भरपाई की कोशिशें

इस अंक के लिए संवाद का विषय है 'इस वर्ष स्कूल में सीखने के विभिन्न स्तरों पर चुनौतियाँ व सम्भव उपाय'। इस संवाद में हमारे साथ दीप्ति सिंह राठौर हैं। दीप्ति, छत्तीसगढ़ के एक माध्यमिक स्कूल में शिक्षिका हैं। दो साथी अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन से हैं, कैलाश कांडपाल और रुद्रेश एस.। कैलाश कांडपाल, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, झारखण्ड के राज्य प्रमुख हैं और रुद्रेश अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, कर्नाटक के राज्य प्रमुख हैं। *पाठशाला भीतर और बाहर* समूह के साथी गुरबचन सिंह, हृदय कान्त दीवान और रजनी भी इस संवाद का हिस्सा हैं। सं.

रजनी : सभी को नमस्ते। *पाठशाला* के इस अंक के लिए संवाद का विषय है– 'इस वर्ष स्कूल में सीखने के विभिन्न स्तरों पर चुनौतियाँ व सम्भव उपाय'।

हम सभी जानते हैं कि कोरोना के कारण हुई लम्बी तालाबन्दी के दौरान शिक्षण संस्थान बन्द रहे। इसका प्रभाव बच्चों के सीखने पर पड़ा है और इस दिशा में किए गए अध्ययन भी यह इंगित करते हैं कि बच्चे सभी विषयों में बहुत कुछ भूल गए हैं, माने सीखने की क्षति हुई है। यह भूलना / क्षति सभी स्तरों पर हुई है; प्राथमिक, माध्यमिक और सेकेंडरी स्तर पर भी। इस संवाद के ज़रिए सीखने में हुई क्षति और इससे सम्बन्धित पहलुओं को समझने की कोशिश है। सीखने की क्षति का क्या तात्पर्य है? विषयों के सन्दर्भ में इसे कैसे समझें? प्राथमिक, माध्यमिक और सेकेंडरी स्तर पर बच्चों को सीखने में किस तरह की दिक़्क़तें आ रही हैं। बच्चों को आमतौर पर सीखने में जो दिक़्क़तें आती हैं क्या ये उनसे ये फ़र्क़ हैं? किन मायनों में फ़र्क़ हैं? सीखने के स्तर में बेहतरी की दिशा में क्या प्रयास किए जा रहे हैं? इन प्रयासों से शिक्षकों और बच्चों को किस-किस तरह की मदद मिल रही है? इन प्रयासों में क्या ख़ास है? क्या ऐसे प्रयास नियमित और निरन्तर होने चाहिए?

बातचीत की शुरुआत मैं इस सवाल से करना चाहूँगी : सीखने की क्षति से क्या आशय है और हम इसे कैसे समझते हैं? दीप्ति आपसे शुरू करते हैं।



अजय सैनी, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, खुरई

दीप्ति : मेरी समझ है कि सीखने की क्षति को पाठ्यपुस्तकों व पढ़ाई के साथ-साथ अन्य बहुत-से क्षेत्रों में देख सकते हैं। कोरोना की वजह से बच्चे लगभग अठारह महीने से स्कूल से दूर रहे। उनकी पढ़ाई-लिखाई पर निश्चित तौर से असर हुआ ही है। बार-बार हर प्रशिक्षण, हर बैठक में यही बात निकलकर आ रही है कि जो सीखा था बच्चे वो भूल गए और आगामी सत्र में जो सीखना था वो सीख ही नहीं पाए। ये एक तरीक़े से लर्निंग लॉस हुआ, लेकिन मैं इस तरीक़े से भी देखती हूँ कि जब स्कूल खुले तो बच्चे काफ़ी उद्दण्ड हो चुके थे, स्कूल में एडजस्ट नहीं हो पा रहे थे, रुक नहीं पा रहे थे, स्टेबल नहीं हो पा रहे थे और आज भी कुछ-कुछ ऐसा ही है। ये भी एक तरह का लर्निंग लॉस ही है। अगस्त-सितम्बर में जब स्कूल खुले, तब बच्चों के स्कूल से जुड़ाव, स्कूल में सामंजस्य को लेकर बहुत दिक़्क़तें हुईं। पिछले साल की तुलना में इस साल मैं ज़्यादा अच्छा महसूस कर रही हूँ। अब बच्चे कुछ स्टेबल हुए हैं और पढ़ाई की तरफ़ उनका ध्यान भी लग रहा है जो बीते साल बिलकुल भी देखने को नहीं मिला था, तो मैं इस तरह से लर्निंग लॉस को देख पा रही हूँ।

मेरी समझ है कि सीखने की क्षति को पाठ्यपुस्तकों व पढ़ाई के साथ-साथ अन्य बहुत-से क्षेत्रों में देख सकते हैं। कोरोना की वजह से बच्चे लगभग अठारह महीने स्कूल से दूर रहे। उनकी पढ़ाई-लिखाई पर निश्चित तौर से असर हुआ ही है। बार-बार हर प्रशिक्षण, हर बैठक में यही बात निकलकर आ रही है कि जो सीखा था बच्चे वो भूल गए और आगामी सत्र में जो सीखना था वो सीख ही नहीं पाए।

हृदय कान्त दीवान : दीप्ति, आप कह रही हैं अभी परिस्थिति बेहतर हुई है। क्या स्कूल की जो निरन्तरता बनी है उससे बच्चों में स्कूल में टिक कर बैठने, कक्षा में ध्यान केन्द्रित कर पाने जैसी आदतें वापस आ गई हैं?

दीप्ति : बहुत कुछ ठीक हुआ है। लगातार स्कूल आने से बच्चे स्कूल से जुड़ने लगे हैं। पर उनका जुड़ाव शिक्षकों व अभी वे बच्चों के साथ काम कैसे कर रहे हैं, उसपर भी निर्भर करता है।

रजनी : रुद्रेश, आपके विचार जानना चाहेंगे।

रुद्रेश : दो पहलू हैं, सीखने में पीछे रहना और सीखने में क्षति होना। इन पदों को हम अकसर अदल-बदल कर उपयोग करते हैं। पर ये दोनों अलग-अलग हैं। पढ़ाई में पीछे रहना, यह कोविड से पहले भी होता रहा, पहले भी ऐसी स्थितियाँ थीं और अभी भी यह होता है। लेकिन कोविड के कारण जो परिस्थितियाँ बनीं उनमें सीखने की क्षति हुई है।

क्योंकि वे बच्चे जो सीखने में पीछे नहीं थे, वे भी जो पढ़ा था उसमें से बहुत कुछ या सबकुछ भूल गए हैं। इसे इस दृष्टि से भी देख सकते हैं कि दो साल में जो सीखने के अवसर मिलने थे, वो नहीं मिले, इस वजह से भी क्षति हुई है।

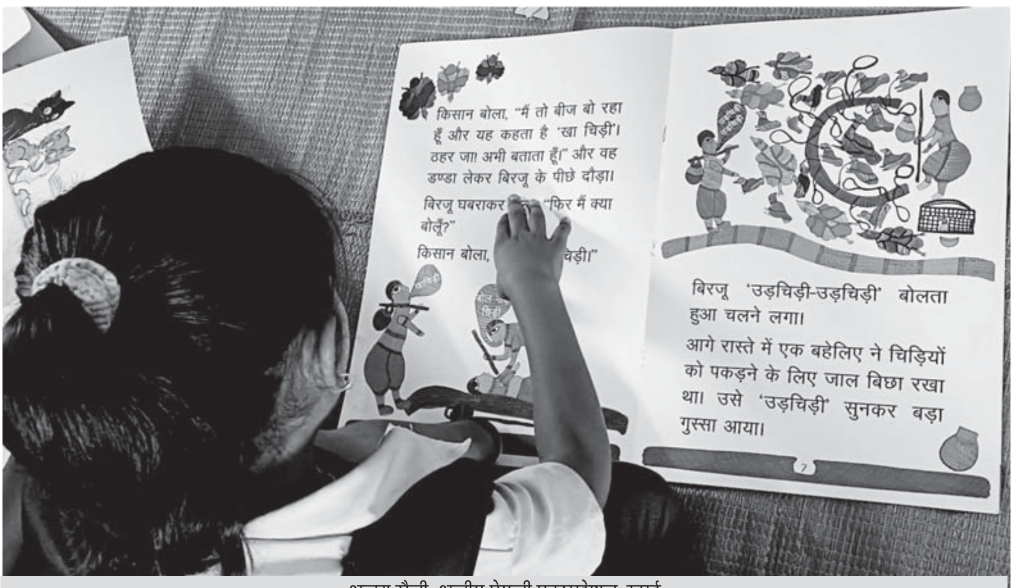
रजनी : शुक्रिया रुद्रेश। प्राथमिक और माध्यमिक स्तर जहाँ आप पढ़ाती भी हैं, उस स्तर पर किस तरह की सीखने की क्षति हुई है? यदि आप विषयों के उदाहरण देकर बता सकें।

दीप्ति : प्राथमिक स्कूल के शिक्षकों से हुई मेरी बातचीत के आधार पर, ख़ासकर कक्षा 3 और 4 के सन्दर्भ में, मैं कहूँगी कि पहली-दूसरी का बच्चा आज की तारीख़ में सीधे तीसरी-चौथी कक्षा में आ चुका है। इसका मतलब पहली-दूसरी कक्षा में जो चीज़ें उसे सीख लेनी चाहिए थीं उसने नहीं सीखी हैं, माने बुनियादी अवधारणाओं पर काम नहीं हुआ है। और वहीं

तीसरी का बच्चा पाँचवीं में आ गया है लेकिन तीसरी की अवधारणाओं को भी नहीं कर पा रहा है। माध्यमिक स्तर पर मेरा व्यक्तिगत अनुभव यह रहा कि कोरोना काल के तुरन्त बाद बच्चे जब कक्षा 6 में आए तब स्थिति बहुत ख़राब थी, अभी भी ज़्यादा अच्छी तो नहीं है लेकिन कुछ बेहतर है। विषय के उदाहरण दूँ तो, हिन्दी में बच्चों को अक्षर पहचानने में भी दिक़्क़त हो रही है। कुछ बच्चे अक्षर पहचानकर धीरे-धीरे शब्द पढ़ पा रहे हैं, लेकिन वाक्यों की संरचना करने में उन्हें दिक़्क़त है। पैराग्राफ़ राइटिंग या पैराग्राफ़ पढ़ने की बात करें तो दस में से एक या दो बच्चे ही पैराग्राफ़ या वाक्य पढ़ पा रहे हैं, वो भी थोड़ा रुक-रुक कर। मेरे विद्यालय में चालीस बच्चे हैं, बड़ी मुश्किल से पन्द्रह बच्चे ही हिन्दी पढ़ पाने में सक्षम हुए, किन्तु वो भी वाक्य को बहुत ज़्यादा नहीं समझ पा रहे थे। गणित में बच्चे संख्याओं को तो पहचान पा रहे थे लेकिन इकाई, दहाई या विस्तृत रूप में लिखना नहीं कर पा रहे थे।

रजनी : रुद्रेश, प्राथमिक और माध्यमिक स्तर पर बच्चे विषयों में क्या भूल गए हैं, इसपर आपके क्या अवलोकन रहे हैं?

रुद्रेश : हर विषय में अलग-अलग तरह की क्षति हुई है। मैं दीप्तिजी से पूरी तरह सहमत हूँ। प्राथमिक स्तर पर, कक्षा एक से तीन तक बच्चे स्कूल में नहीं आए। अभी-अभी लगभग दो महीने पहले से ही नियमित पढ़ाई शुरू हुई है। जो बच्चे स्कूल आए ही नहीं यह कह सकते है कि उनकी तो क्षति नहीं हुई। लेकिन इनके साथ अभी शुरू से ही काम करना है और दो साल का, तीन साल का, जो पाठ्यक्रम उनको सीखना है उसको अब एक साल में सिखाना है, यह बड़ी चुनौती है। कक्षा 4 और 5 में सीखने की क्षति का प्रभाव ज़्यादा महसूस होता है क्योंकि जो बच्चे अभी कक्षा 4 और 5 में हैं, स्कूल बन्द होने के वक़्त कक्षा 2 या 3 में थे। उस समय में उनकी बुनियादी कॉम्पीटेंसी पूरी नहीं हुई। फिर एक लम्बा अन्तराल हुआ तो भूल जाना स्वाभाविक है। कक्षा 4 और 5 में किया गया हालिया आकलन भी दर्शाता है कि लगभग 60 से 70 फ़ीसदी विद्यार्थी लिखने-पढ़ने और संख्या की बुनियादी क्षमताओं को भूल चुके हैं। सिर्फ़ 20-30 फ़ीसदी बच्चे ही, वो भी कुछेक स्कूलों में, कक्षा के अनुरूप कर पा रहे हैं। बुनियादी क्षमताओं को भूलना ज़्यादा भी है और गम्भीर भी, इसलिए इसपर ज़्यादा फ़ोकस की ज़रूरत है।



अजय सैनी, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, खुरई

माध्यमिक स्तर पर यह समस्या और गहरी हो गई है। जो बच्चे लिखने-पढ़ने और संख्या की बुनियादी क्षमता के लिए संघर्ष कर रहे थे, वो समस्या तो है ही, बल्कि यह और गहरी हो गई है, क्योंकि जो बच्चा ग्रेड एप्रोप्रीएट था, स्कूल बन्द होने के समय उसका ज़्यादा लर्निंग लॉस नहीं हुआ। उसे ज़्यादा सीखने का अवसर नहीं मिला इसलिए जो पिछले दो साल में एक्सपेक्टेड लर्निंग आउटकम अचीव करना था वो उसने नहीं किया क्योंकि अवसर नहीं मिला, वो भी एक चुनौती है। मसलन, जो विद्यार्थी अभी कक्षा आठ में है, उसके लिए विज्ञान कक्षा 6 में शुरू हुआ। कक्षा 6 में उसे विज्ञान का कोई एक्सपोज़र भी नहीं मिला और कक्षा 7 में भी नहीं। अभी वो कक्षा 8 में है। अब विज्ञान की जो कॉम्पीटेंसी उसे कक्षा 8 में सीखनी है वो नहीं सीख सकता है क्योंकि बुनियादी विज्ञान पढ़ने का उसको अवसर ही नहीं मिला और गणित में भी ऐसा ही है। जब वो कक्षा 8 में है तो कक्षा 6,7 और 8 प्रोग्रेशन में हैं और लर्निंग आउटकम एवं कॉन्सेप्ट अभी सिक्वेंस में हैं। जब उनके पास पहले के कॉन्सेप्ट सीखने का अवसर नहीं है या सीखने में असमर्थ हैं तो वे वर्तमान कक्षा 8 का कॉन्सेप्ट नहीं सीख सकते हैं क्योंकि वो बेसिक नहीं सीख पाए हैं, ये चुनौतियाँ हैं।

रजनी : कैलाशजी, दो प्रश्न हैं– सीखने की क्षति से क्या समझते हैं और विभिन्न विषयों के सन्दर्भ में इसे कैसे समझते हैं?

कैलाश : हमारी औपचारिक शिक्षा में एक तय करिकुलम के तहत बच्चे पढ़ते हैं। कोविड की वजह से जो परिस्थितियाँ बनीं, उनमें एक यह थी कि कुछ बच्चे पढ़ना-लिखना और संख्याओं को समझने लगे थे, लेकिन किसी अवधारणा पर आगे नहीं बढ़ पाए। दूसरा, बच्चों के पास पढ़ने-लिखने की बुनियादी क्षमताएँ ही नहीं थीं। ये क्षमताएँ प्रस्थान बिन्दु हैं और बच्चे को सीखने में आत्मनिर्भर भी बनाती हैं।

रजनी : दो साल की पाठ्यचर्या / विषयवस्तु को एक साल में कैसे सिखाएँगे? क्या ये सिखाना जायज़ भी है? और अगर ये करना ही है तो क्या तरीक़े होंगे, किस तरह की बातचीत करनी होगी?

हमारी औपचारिक शिक्षा में एक तय करिकुलम के तहत बच्चे पढ़ते हैं। कोविड की वजह से जो परिस्थितियाँ बनीं, उनमें एक यह थी कि कुछ बच्चे पढ़ना–लिखना और संख्याओं को समझने लगे थे, लेकिन किसी अवधारणा पर आगे नहीं बढ़ पाए। दूसरा, बच्चों के पास पढ़ने–लिखने की बुनियादी क्षमताएँ ही नहीं थीं। ये क्षमताएँ प्रस्थान बिन्दु हैं और बच्चे को सीखने में आत्मनिर्भर भी बनाती हैं।

दीप्ति : एक साल में हर बच्चे को उसके अपेक्षित स्तर तक ले जा पाएँगे ऐसा तो नहीं कह सकती, लेकिन एक हद तक उनके स्तर को बेहतर करने का प्रयास किया जा सकता है ताकि वो अधिकतम काम कर पाएँ। मैं अपनी कक्षा का उदाहरण लूँ तो बच्चे स्कूल आएँ, स्कूल में रहें इसलिए हमने दो दिन का एक कैम्प रखा। उसमें कई प्रतियोगिताएँ, खेलकूद और खाने-पीने की व्यवस्था भी थी। बाल दीवार पत्रिका, कहानी कहना आदि पर काम करने से बच्चे नियमित होने लगे और सीखने में भी उनकी प्रगति दिखाई दे रही है। अभी मैं बच्चों के साथ पढ़ना सीखने पर काम कर रही हूँ। छत्तीसगढ़ में पिछले साल एक योजना के तहत काफ़ी पुस्तकें मिडिल स्कूलों को मिलीं। अभी मैं उनको किताबें पढ़ने के लिए देती हूँ, पढ़ने के बाद हर बच्चा अपनी समझ को ख़ुद प्रेजेंट करता है। ज़ाहिर-सी बात है, यदि बच्चा पढ़ना सीख रहा है तो

वो उसमें लिखी हुई चीज़ों को भी अपने अनुसार बोल पाएगा। मुझे यह भी पता चला कि कितने बच्चे पढ़ पाने में सक्षम हैं और मुझे किनपर व किस तरह का काम करने की आवश्यकता है।

रजनी : रुद्रेश, दो साल के विषय को एक साल में कैसे सिखाएँ?

रुद्रेश : दो साल और यह साल, कुल मिलाकर तीन साल का पाठ्यक्रम एक साल में पूरा करना है। यह चुनौतीपूर्ण है, और जो तरीक़े हम अपनाते आए हैं उनसे कर्नाटक में जो किया गया है वह बताना चाहूँगा। यहाँ एक रिफ़र्बिश्ड करिकुलम बनाया गया है। इसे बनाने का एक मुख्य आधार था उन अवधारणाओं और कौशलों को जगह देना जो सीखने के लिए अत्यन्त ज़रूरी हैं। जैसे– बुनियादी पढ़ने-लिखने की क्षमताओं, संख्या की समझ, आदि पर काम करना। और यह हर कक्षा में होना था। ऐसे प्रयास अन्य राज्यों में भी हुए हैं।

कैलाश : मेरा मानना है कि जो क्षति हुई है उसकी पूरी भरपाई एक साल में नहीं की जा सकती। हाँ, इसे कम करने की कोशिश की जा सकती है, लेकिन कितनी भरपाई हो पाएगी इसमें भी संशय ही है। रिफ़र्बिश्ड करिकुलम क्या है, इसका क्या विचार है, ये मेरी समझ से बाहर है। ये तो डैमेज कंट्रोल जैसा लगता है। कोई डैमेज हो चुका अब आप उस डैमेज को कैसे कम कर सकते हो। लेकिन ये तो सम्भव ही नहीं है कि तीन वर्षों का सीखना एक साल में पूरा हो जाए, और वैसे ही हो पाए जैसा यह तीन साल में होता। जो काम राज्य सरकारें कर रही हैं उससे शायद इस क्षति को मिनिमाइज़ कर पाएँगे, तब भी ये कितना हो पाएगा और कितना नहीं, ये चैलेंजिंग है। फिर रिफ़र्बिश्ड करिकुलम को टीचर्स कितना आत्मसात कर पाते हैं यह भी सवाल है।



पारुल बत्रा, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन

रजनी : अभी तक की बातचीत से जो दो-तीन बिन्दु आए हैं कि फ़ोकस फ़ाउण्डेशनल लिटरेसी और न्युमेरेसी पर होना चाहिए।

प्राथमिक स्तर पर पढ़ाने-लिखाने का काम करेंगे तो यह समाज में और अभिभावकों की जो अपेक्षाएँ हैं उससे भी मेल खाएगा। लेकिन उच्च माध्यमिक और सेकेंडरी लेवल पर पढ़ना-लिखना सीखने-सिखाने और गणित की बुनियादी अवधारणाओं की समझ बनाने के लिए कैसे समय निकालें और कैसे उस करिकुलम में उसको एडजस्ट करें?

कैलाश : फ़ाउण्डेशनल लिटरेसी और न्युमेरेसी प्राइमरी में तो वैसे ही कोर्स का इन्टीग्रल पार्ट हैं। अपर प्राइमरी और सेकेंडरी में दो आस्पेक्ट्स होते हैं, एक तो फ़ाउण्डेशनल लिटरेसी और न्युमेरेसी का है और साथ में दूसरी अवधारणाएँ हैं जिनके माध्यम से पढ़ने-लिखने की शुरुआत भी होती है और पढ़ने-लिखने से यह अवधारणाएँ समझ भी आती हैं। क्योंकि जब पढ़ना सीखेगा तब ही वो कॉन्सेप्ट समझेगा। भाषा कॉन्सेप्ट में गुँथी हुई होती है। मेरा प्रस्ताव ये है कि अपर प्राइमरी और सेकेंडरी लेवल में भी बुनियाद यही है। एक बार अगर आपको पढ़ना आ गया तो आपकी यात्रा शुरू हो जाती है फिर आप रुकते नहीं हो। अपर

प्राइमरी है, सेकेंडरी है, उसमें जो मुद्दा है वो जिसको मैं सनातन कहूँगा जो पहले से ही है और अभी भी है। इसको नज़रअन्दाज़ नहीं करना चाहिए, कोई स्टूडेंट ऐसा है जिसके पास फ़ाउण्डेशनल लिटरेसी, न्युमेरेसी नहीं है तो उसपर आपको पहले काम करना ही पड़ेगा क्योंकि उसको करे बग़ैर आगे बढ़ा ही नहीं जा सकता है। अगर उसको फ़िज़िक्स समझनी है, विज्ञान का कोई विषय समझना है, तो भाषा भी समझनी होगी गणित भी समझनी होगी।

रजनी : रुद्रेश, इस पर आपके विचार क्या है?

रुद्रेश : उच्च प्राथमिक कक्षाओं में भी 30 फ़ीसदी बच्चे तो ऐसे होते ही हैं जिन्हें बुनियादी गणितीय अवधारणाएँ और पढ़ना-लिखना नहीं आता। हमने पाया कि कुछ शिक्षकों ने ऐसे बच्चों के साथ काम करने के लिए स्कूल के बाद कुछ समय रखा है। कुछ शिक्षक कक्षा में ही बच्चों के लिए अलग-अलग तरह की गतिविधियाँ कर रहे हैं ताकि वे पढ़ना सीख पाएँ। मुझे लगता है कि इन बुनियादी दक्षताओं को सीखने में बच्चों को यदि 6-7 महीने भी लगे तो वह समय हमें देना चाहिए क्योंकि तभी वे आगे सीख पाएँगे। इसके अलावा, हर स्तर पर कक्षाओं में ऐसे तरीक़े हम काम लें जिनमें बच्चे ज़्यादा-से-ज़्यादा गतिविधियों, चर्चाओं में शामिल हों, भाग लें, सोचें। क्योंकि इन दो सालों में बच्चों की पढ़ाई-लिखाई में दिलचस्पी कम हुई है, कक्षा में ध्यान केन्द्रित करने की आदत भी खो-सी गई है।

रजनी : शुक्रिया रुद्रेश। दीप्ति, आप उच्च प्राथमिक शिक्षा स्तर पर बच्चों के साथ कैसे काम हो, इसपर कुछ जोड़ना चाहेंगी?

दीप्ति : हर विषय में, चाहे वो गणित हो, सामाजिक विज्ञान या विज्ञान, भाषा तो होती ही है। अतः बच्चों के साथ पढ़ने-लिखने पर काम करना तो बेहद ज़रूरी है। अगर बच्चा पढ़ना सीख गया है तो वो सबकुछ कवर कर लेगा, ऐसा मेरा मानना है। वे कुछ बच्चे जो पढ़ना जारी रख पाए थे, ऑनलाइन क्लास के ज़रिए या परिवार के सदस्यों के ज़रिए, और ऐसा करके जो पढ़ना सीख गए थे, भूले नहीं थे कुछ जल्दी सीख पा रहे हैं। जो बिलकुल ध्यान नहीं दे पाए, कहीं नहीं जुड़ पाए उनका स्तर अलग है। हम तीन साल का करिकुलम पूरा नहीं कर पाएँगे, लेकिन भाषा, ख़ासकर पढ़ना सिखाने, को ध्यान रखना होगा ताकि वो धीरे-धीरे ख़ुद पढ़कर समझने की ओर आगे बढ़ें।

बच्चे स्कूल आएँ, स्कूल में रहें इसलिए हमने दो दिन का एक कैम्प रखा। उसमें कई प्रतियोगिताएँ, खेलकूद और खाने-पीने की व्यवस्था भी थी। बाल दीवार पत्रिका, कहानी कहना आदि पर काम करने से बच्चे नियमित होने लगे और सीखने में भी उनकी प्रगति दिखाई दे रही है। अभी मैं बच्चों के साथ पढ़ना सीखने पर काम कर रही हूँ।

रजनी : सरकार द्वारा लर्निंग लॉस की पूर्ति के लिए कई कार्यक्रम शुरू किए गए हैं, संक्षिप्त में इनके बारे में बताएँ, और यह भी कि इन कार्यक्रमों में फ़ाउण्डेशनल लिटरेसी व न्युमेरेसी के लिए कितनी जगह है?

रुद्रेश : कर्नाटक सरकार ने 'कलिके क्षेत्र' नाम का कार्यक्रम शुरू किया है। इसमें तीन भाग हैं : एक पढ़ने-लिखने की बुनियादी क्षमता, दूसरा पिछले दो साल के मुख्य अधिगम प्रतिफल, और तीसरा मौजूदा वर्ष के मुख्य अधिगम प्रतिफल। शायद इन तीनों पर काम करने से अगले वर्ष



अजय सैनी, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, खुरई

बच्चा कक्षा के स्तर के अनुरूप पहुँच सके। यह भी कि हर कक्षा के हिसाब से फ़ोकस में कुछ अन्तर भी है, यानी कक्षा एक से तीन में बुनियादी पढ़ने-लिखने और संख्या ज्ञान पर फ़ोकस है। कक्षा 4 और 5 में इसके साथ-साथ ज़रूरी अधिगम प्रतिफलों को भी रखा गया है। 2-3 महीने तक पढ़ने-लिखने पर ज़्यादा ज़ोर और फिर पढ़ने-लिखने के साथ-साथ चिह्नित अधिगम प्रतिफलों पर काम। कक्षा 6 से 8 में भी कुछ ऐसा ही है। इसमें भी शुरुआत में पढ़ने-लिखने पर ही फ़ोकस है। बच्चों के लिए वर्कशीट और शिक्षकों के लिए मैनुअल भी बनाया गया है।

रजनी : दीप्तिजी, छत्तीसगढ़ के सन्दर्भ में क्या हुआ है?

दीप्ति : छत्तीसगढ़ में 'नवा जतन प्रोग्राम' चल रहा है। इसमें सबसे पहले बच्चों का आकलन करना है, इस काम का मुख्य उद्देश्य बच्चों के स्तर को जानना है। जैसे– हिन्दी भाषा में कुछ बच्चे अभी अक्षर ज्ञान पर हैं यानी कुछ अक्षर पहचान लेते हैं, लेकिन शब्दों को तोड़-तोड़ कर पढ़ रहे हैं। कुछ बच्चे वाक्य को, अनुच्छेद को समझ पाते हैं। इसी तरह गणित में हमने पाया कि बच्चों को संख्या का ज्ञान है, एक अंक और दो अंकों का जोड़कर पा रहे हैं, आदि। दूसरा फ़ोकस है कि कक्षा में पीयर लर्निंग हो, समूह काम हो और बच्चे एक दूसरे से सीखें। पीयर लर्निंग पर छत्तीसगढ़ प्रशासन ने एक आदेश भी जारी किया है कि पीयर लर्निंग और ग्रुप लर्निंग प्रत्येक स्कूल को करनी ही है, क्योंकि इसका लाभ मिल ही रहा है। हालाँकि, हर शिक्षक अकेले ही इसको कर ले ऐसा सम्भव नहीं, क्योंकि बहुत-से स्कूलों में बच्चों के अनुपात में शिक्षकों की संख्या बहुत कम है। वहाँ शायद दिक़्क़त हो। लेकिन यदि 20-25 बच्चे हैं कक्षा में तो शिक्षक 5-5 के 4-5 समूह बनाकर काम कर सकते हैं। और हाँ, पाठ्यपुस्तक पूरा करवाने के बजाय, पढ़ने-लिखने और अन्य ज़रूरी सीखने के प्रतिफलों पर ध्यान देना होगा।

रजनी : कैलाशजी, इन प्रयासों को लेकर आपके विचार।

कैलाश : कर्नाटक की तर्ज़ पर उत्तराखंड में 'विद्या सेतु' नामक कार्यक्रम चल रहा है। इसमें शिक्षकों के लिए मैनुअल भी है, बच्चों के लिए वर्कशीट भी, और यह हर विषय के लिए बनाई गई हैं। इन सबको काम में कैसे लेना है इसपर शिक्षकों के प्रशिक्षण भी हुए हैं। इसकी रणनीति ऐसी बनी है कि पूरे सत्र में इसके अनुसार ही काम होगा, आकलन, मूल्यांकन सब इसी आधार

पर होंगे। और यह सामग्री, जिसे रिफ़र्बिश्ड करिकुलम कह रहे हैं, पाठ्यपुस्तकों को ध्यान में रखकर बनाई गई है तो बच्चे और शिक्षक इससे जुड़ भी पाएँगे। यहाँ भी फ़ाउण्डेशनल लिटरेसी व न्युमेरेसी पर ज़ोर है। बच्चे को अगर पढ़ना-लिखना ही नहीं आए तो उसके लिए हमें क्या करना है, इस तरह की बातचीत भी इसमें है। अभी पूरे देश में 'निपुण भारत' कार्यक्रम चल रहा है। यह भी फ़ाउण्डेशनल लिटरेसी व न्युमेरेसी से ही सम्बन्धित है।

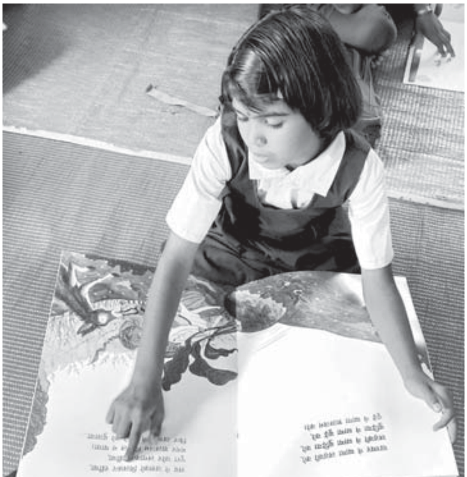
हृदय कान्त दीवान : दो सवाल हैं। दीप्ति ने रेखांकित किया कि अगर पढ़ना आ गया, बुनियादी गणित आ गई तो आगे की चीज़ करने में उसको बहुत दिक़्क़त नहीं होगी। ये बात *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* भी कहती है। लेकिन जब भी हम बुनियादी भाषा क्षमता और संख्या क्षमता की बात करते हैं तो यह बहुत स्पष्ट नहीं होता कि उसमें क्या-क्या शामिल है? जो करिकुलम बने हैं, जब शिक्षकों के साथ बात कर रहे हैं, इनमें इस विषय पर चर्चा हो पा रही है या नहीं? दूसरा, ये जो करिकुलम बने हैं इनको लागू करने में सबसे बड़ी चुनौतियाँ क्या आप लोगों को दिखाई देती हैं? ये हो पाएगा या नहीं हो पाएगा, हो पा रहा या नहीं, और नहीं तो क्यों?

कैलाश : मेरा मानना है कि पढ़ने-लिखने और संख्या ज्ञान की बुनियादी क्षमताओं की बात सीखने-सिखाने की प्रक्रिया पर चर्चा के बग़ैर नहीं हो सकती। प्रक्रिया से आशय है भाषा और गणित सिखाने की शुरुआत किस ढंग से हो? इससे पहले यह तो होना ही होगा कि हम समझ लें कि बच्चे को क्या-क्या आता है? बच्चे की समझ और तब आगे की पूरी प्रक्रिया के बारे में विचार करता हूँ तो कुछ चुनौतियाँ हैं। एक ओर तो सीखने-सिखाने की प्रक्रिया की हर शिक्षक की अपनी समझ है। दूसरा यह भी कि हर कक्षा, और फिर हर स्तर के हिसाब से भी यह प्रक्रिया फ़र्क़ होगी। शिक्षणशास्त्र की समझ तो यही कहती है कि बच्चे भाषा को टुकड़े-टुकड़े में नहीं सीखते। वे भाषा की समग्र समझ बनाते हैं, और तब उनके साथ अक्षर, मात्रा, शब्द, वाक्य आदि में से जिसपर भी हम काम करना चाहें, कर सकते हैं। लेकिन इसमें भी कई दुविधाएँ सामने आ जाती हैं। क्योंकि कोई कहता है, और मानता भी है कि अक्षर से शुरू करना ज़रूरी है या बारहखड़ी ज़रूरी है। लेकिन मेरा मानना है कि भाषा मौखिक होती है, माने भाषा का मसला बोलने का मसला है, और बच्चे बोलना, अपनी बात कहना सीख जाते हैं। वे अक्षर और बारहखड़ी नहीं बोलते, लम्बे-लम्बे वाक्य बोलते हैं। पहली बात यह है कि पढ़ाने वाले सीखने की प्रक्रिया और सीखने के मसौदे को कैसे समझते हैं? और तब कक्षा में कैसे पढ़ाते हैं? दूसरी चुनौती मुझे ज़्यादा बड़ी लगती है, वह यह कि शिक्षकों को यह बातें व प्रक्रिया के मुख्य पहलू समझ आएँ। इसके लिए कई कोशिशें हुईं और हो भी रही हैं, लेकिन कितने शिक्षक इसे आत्मसात कर पाए हैं इसपर प्रश्न चिह्न है। कुछ शिक्षक समझे भी हैं, लेकिन कुछ अन्य अभी भी इसकी सराहना नहीं कर पाते। वे यह मानकर ही चल रहे हैं कि बच्चों का न सीख पाना एक सनातन समस्या है, और यह बनी रहेगी। और क़रीब से देखें तो शिक्षक ही नहीं, पूरे शिक्षा तंत्र को यह सनातन समस्या लगती है। मुझे लगता है जब हम अलग-अलग तरीक़ों से इसपर काम करेंगे तो कुछ बदलाव तो होगा ही। मसलन, यदि एनसीईआरटी व डाइट को बाध्य कर दें कि स्कूल में आकलन रिफ़र्बिश्ड करिकुलम के आधार पर ही होगा तो डाइट व स्कूल दोनों में ही बदलाव आ सकता है।

रुद्रेश : आज भी विद्यालयों में भाषा सिखाने की प्रक्रिया पारम्परिक ही है, और ये सभी राज्यों में है। यहाँ कर्नाटक में 'नली कली' कार्यक्रम के तहत फ़ोनिक तरीक़ा अपनाया जाता है। अब यह तरीक़ा उच्च प्राथमिक और सेकेंडरी स्तर के बच्चों के साथ तो काम में नहीं ले सकते, क्योंकि उनकी क्षमता कहीं अधिक है। वैसे मुझे लगता है प्राथमिक स्तर पर भी अधिक ही होती है। ख़ूब सारी कहानियाँ, कविताएँ सुनकर-सुनाकर बच्चे ज़्यादा सीखते हैं, लेकिन उनके साथ इनपर ज़्यादा-से-ज़्यादा बात हो पाए यह एक चुनौती है। अभी रिफ़र्बिश्ड करिकुलम में भी ज़ोर वर्ण,

ध्वनि, शब्द, वाक्य सिखाने पर ही है। चुनौती यह भी है कि रिफ़र्बिश्ड करिकुलम को शिक्षक वैसे ही समझ पाएँ जैसे इसे बनाया गया है। वे इसकी अप्रोच को, मूल को समझ पाएँ। एक साझा समझ बने, इसके लिए कार्यशालाएँ हुईं, लेकिन कितना समझा गया यह प्रश्न है। दी गई वर्कशीट करवाना, गतिविधियाँ करवाना, अधिगम प्रतिफल को ध्यान में रखना, यह चुनौतियाँ हैं। बच्चे ख़ुद वर्कशीट करें, लेकिन वो एक दूसरे की देखकर कर रहे हैं और शिक्षक मैनुअल नहीं पढ़ रहे। यह भी चुनौती है कि बनाई गई सामग्री शिक्षकों और बच्चों तक पहुँच ही नहीं पा रही।

दीप्ति : छत्तीसगढ़ में नवाजतन कार्यक्रम चल रहा है। लेकिन नवाजतन की ट्रेनिंग को कितने टीचर्स ने गम्भीरता से लिया, कितनों ने वहाँ उस ट्रेनिंग को सुना और उनकी उन चीज़ों को लेकर कितनी समझ बनी, अभी हमारे यहाँ भी इसको लेकर क्लस्टर मीटिंग चल रही हैं। नवाजतन की चीज़ों को क्लस्टर के रूप में किया जा रहा था ताकि हर माह इसकी बैठक हो सके और पर्सनली टीचर को उस सब्जेक्ट को लेकर गाइड, मतलब सपोर्ट, किया जा सके यदि किसी तरीक़े से कोई ट्रेनिंग छूट जाए तो। पढ़ाने का तरीक़ा भी काफ़ी समय से परम्परागत चल रहा है कि जब तक बच्चा अक्षर नहीं समझेगा वो शब्दों को कैसे समझेगा? लेकिन मैं भी इस बात से सहमत हूँ कि भाषा की शुरुआत बोलने से ही होती है। इसमें कहीं अलग-अलग वर्णों और बारहखड़ी की कोई भूमिका नहीं होती। लेकिन स्कूल में शुरुआत अक्षरों से, शब्दों से ही होती है। यह मानने में काफ़ी दिक़्क़त होती है, इसके बावजूद कि वो बच्चे को तमाम सन्दर्भों में भाषा का उपयोग करते हुए देखते हैं, तब भी सीखना अक्षर और मात्रा ही होता है, यह सबसे बड़ी चुनौती है। कई प्रशिक्षणों में शिक्षक पूछते हैं कि बच्चे को अक्षर ज्ञान नहीं है तो शब्द कैसे सिखाएँ? लेकिन इस बात पर किसी का ध्यान नहीं जाता कि वह शब्द क्या पूरे-पूरे वाक्य बोलता है। क्या उन्हीं पर उसका ध्यान नहीं दिलाया जा सकता? हम शिक्षकों को अपना नज़रिया बदलना होगा और यह सम्भव भी है।


अजय सैनी, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, खुरई

रजनी : शुक्रिया दीप्ति।

गुरबचन : मेरा सवाल यह है कि शिक्षक की तैयारी को इन परिस्थितियों और सन्दर्भ में कैसे देखते हैं?

कैलाश : शिक्षक की तैयारी के सन्दर्भ को दो तरीक़ों से देखा जा सकता है। रिफ़र्बिश्ड करिकुलम बनाया गया है, साथ ही शिक्षक मैनुअल भी, और इसपर शिक्षकों से बात भी हुई है। इसके क्रियान्वयन की प्रक्रिया में यह ध्यान रखा गया है कि बुनियादी बिन्दुओं पर अलग-अलग तरह से बात हो। समूह बने हैं, और उनमें सभी कार्यकर्ता, डाइट के सदस्य, डीईओ, सीईओ, शिक्षक सभी जुड़े हैं। पहले मल्टीपल डायरेक्शन से जो बातें आती थीं वे अलग-अलग होती थीं, तो अब एक-सी बात जा रही होगी। तो एक तो सिनर्जी को एन्श्योर करने की कोशिश की हमने। इसके अलावा, अलग-अलग मंचों पर महीने में 2-3 बार वेबिनार सत्र भी आयोजित कर रहे हैं। साथ ही यह तय किया कि जितनी भी गतिविधियाँ होंगी, एक्टिविटी रिकवरी ऑफ़ लर्निंग लॉस और रिफ़र्बिश्ड करिकुलम से जुड़ी होंगी। ये दो तरीक़ों से है एक तो एडवोकेसी और दूसरा ये मंच बनाए हैं।

पाठक चश्मा

पाठकों के विचार



जाति के बारे में बच्चों का नज़रिया, ऋषभ कुमार मिश्र, अंक 12

लेख में बच्चों से बातचीत के आधार पर यह बात पुख़्ता हो रही है कि जाति बच्चे के लिए एक विशेष पहचान बन जाती है। स्कूल में बच्चे का व्यवहार, उसकी सक्रियता, आत्मविश्वास और पहलक़दमी उसकी जाति से काफ़ी हद तक प्रभावित हो रही है, यह इस लेख में भी दिखता है और मैं स्कूलों में किए अपने अनुभवों से भी यह बात कह सकता हूँ। इस लेख के आधार पर भी यह बात सामने आती है कि स्कूल या शिक्षा का बेहतर समाज बनाने के उद्देश्य पर काम करना अभी बाक़ी है। यह लेख हमें एक अन्दाज़ा देता है कि किशोरावस्था के दौरान ही जब जातिगत अस्मिता इतनी मज़बूत हो रही होती है, और इस समय इसको जाँचने-परखने के कोई मौक़े नहीं प्रदान किए जाते तो इन परिस्थितियों में विकसित हुए युवा इस विचार के साथ किस हद तक परिपक्व हो जाएँगे। स्कूल में भी बच्चों में वही धारणाएँ बच्चों की बातचीत से झलकती हैं जो समाज में एक सामान्य सोच से प्रकट होती हैं कि जातियों की वजह से आरक्षण और आरक्षण की वजह से कुछ जाति के बच्चों को पढ़ाई अथवा नौकरी में नुक़सान होता है। तो यह एक बड़ा सवाल है कि स्कूल जैसी संस्था फिर क्या कर रही है? जबकि इन संस्थाओं का काम है कि बच्चों में समानता और बराबरी जैसे संवैधानिक मूल्यों को विकसित करे। नहीं तो इस विभेद से ग्रस्त समाज को आसानी से बाँटा और बरगलाया जा सकता है। इन परिस्थितियों में हमारा यह एक महत्त्वपूर्ण काम बनता है कि हम बच्चों और अध्यापकों के साथ इन संवेदनशील मुद्दों पर काम करें।

भीम सिंह, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, रुद्र प्रयाग, उत्तराखंड

यह लेख इस बात को बहुत स्पष्टता से उभारता है कि बच्चे जातियों के विषय में क्या सोचते हैं, और कैसे? लेख इस विचार की पड़ताल करता है कि सामाजिक अस्मिता के एक चर के रूप में बच्चे जाति को कैसे समझते हैं? जाति से जुड़े कई आयामों को ऋषभ कुमार ने अपने प्रश्नों में शामिल किया है, जैसे– जातीय भेदभाव, जातियों में शुद्धता और विशिष्टता का बोध, श्रेष्ठता और हीनता का द्वन्द्व आदि। इन सभी आयामों से जुड़े प्रश्नों पर बच्चों ने अपनी राय रखी है। इनको पढ़ते हुए लगता है कि ऋषभ कुमार यदि बड़ों से भी इन मुद्दों पर बात करेंगे तो प्रतिक्रियाएँ लगभग ऐसी ही होंगी। एक बार मैं कक्षा 7 के बच्चों से इस कविता पर बातचीत कर रहा था जिसमें बच्चों ने बताया कि उनका मन तो करता है कि वे किसी घुमन्तू परिवार के बच्चे को अपने साथ खेलने दें, लेकिन घरवाले मना करते हैं कि इनके साथ नहीं खेलना है। कुछ दिन पहले एक विद्यालय में बच्चों ने इसलिए खाना खाने से मना कर दिया क्योंकि वहाँ भोजन माता अनुसूचित जाति से थीं। ऐसे अनेक उदाहरण हम रोज़ देखते-सुनते हैं और यह लेख उसी बात को पुन: उभारकर सामने रखता है। इस लेख को पढ़ते हुए कुछ और बिन्दु उभरते हैं, जैसे– ऋषभ कुमार ने प्रश्नावली का ज़िक्र तो किया है लेकिन लेख में वह सही से उभर नहीं पाती और न ही प्रक्रिया ठीक से उभरती

दिखाई देती है कि बच्चों के साथ बातचीत किस तरह हुई। प्रश्नों को यदि स्पष्ट रूप से लिखा जाता और उनपर बच्चों से हुई बातचीत को भी जस-का-तस लिखा जाता तो पाठक के पास यह अवसर होता कि ऋषभ कुमार के विश्लेषण को पढ़ने के साथ-साथ वह स्वयं भी उसका विश्लेषण कर पाए। उदाहरण के लिए, श्रेष्ठता और हीनता के द्वन्द्व को समझने के लिए ऋषभ कुमार एक जगह बच्चों से पूछते हैं कि अनुसूचित जाति के किसी व्यक्ति के पास सरकारी नौकरी, घर, गाड़ी है तो क्या वह व्यक्ति जाति-आधारित पायदान में ऊपर पहुँच सकता है? इसके जवाब में बच्चे निश्चयात्मक उत्तर देते हैं, 'नहीं'। मुझे लगता है, बच्चों के उत्तर निश्चयात्मक होंगे या नहीं यह इस बात पर काफ़ी निर्भर करता है कि प्रश्न किस तरह से पूछा गया है। दरअसल यह पूरा मसला स्वयं की पड़ताल करने जैसा है, इसलिए प्रश्नों और बातचीत की प्रक्रिया को किसी वस्तुनिष्ठ कसौटी से गुज़रना चाहिए जो लेखक और पाठक दोनों ही से यह प्रश्न कर पाए कि जातीय अस्मिता के वाहक के रूप में वे स्वयं कहाँ खड़े हैं?

अमित कुमार, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, कोटद्वार, उत्तराखंड

लेख पढ़ते हुए दो घटनाएँ एकदम से ताज़ा हो आईं। पहली मेरे बचपन से जुड़ी, और दूसरी बच्चों के साथ जाति से जुड़ी एक चर्चा के दौरान की। मैं जब बहुत छोटा था अन्दाज़न 4 या 5 साल का, तब अपने दोस्त के साथ खेलते हुए उसके घर गया था। हमारे दोनों ही परिवारों के बीच रिश्ते बहुत अच्छे थे और एक दूसरे के घर आना-जाना भी था। फिर भी जातिवाद की दीवार का दोनों ही परिवारों में पालन होता था। शाम का समय था और ठण्ड के दिन थे। मैं अपने दोस्त के साथ खेलते हुए उसके घर के अन्दर चूल्हे के पास जाकर बैठ गया और दोस्त की दादी मेरा हाथ पकड़कर मुझे बाहर ले आई थीं। मेरी माँ ने कभी कहा था, "अपन उनके चूल्हे की तरफ़ नहीं जाते।" बहुत बाद में समझ आया कि उसके पीछे की वजह जातिवाद थी। मैं लेखक की इस बात से इत्तफ़ाक़ रखता हूँ कि स्कूल में न दिखने वाली पाठ्यचर्या भी इस विभेद को बनाए रखने का काम करती है और इसको क़ायम भी रखती है। समाज में सकारात्मक बदलाव के लिए ये बहुत ज़रूरी है कि इन सब मुद्दों पर बच्चों के साथ चर्चा सत्र आयोजित किए जाएँ।

एक सकारात्मक नज़रिए के साथ लेख प्रकाशित करने के लिए टीम और लेखक दोनों का तहेदिल से आभार।

महेश झरबड़े, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, गोगावाँ, खरगोन, मध्य प्रदेश

मातृभाषा और गणित शिक्षण, सुधीर श्रीवास्तव, अंक 12

सच में शिक्षण किसी भी विषय का हो, भाषा उसमें एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। फिर गणित विषय जिसकी कि प्रकृति भी अमूर्त होती है और बच्चों के मस्तिष्क में इसकी अमूर्तता के कारण एक भय और नीरसता पैदा हो जाती है अगर विषय को रुचिपूर्ण न बनाया जाए। इसके लिए मातृभाषा एक महत्त्वपूर्ण और सरल तरीक़ा है। इसमें शिक्षक ने बच्चों के साथ जिस अन्दाज़ से काम किया वह क़ाबिले तारीफ़ है क्योंकि विद्यालय में रोज़ शिक्षण करने वाले शिक्षकों की निराशा को बच्चों के सीखने को लेकर दूर करने का प्रयास किया गया है। सबसे पहले उनसे कन्टेन्ट से सम्बन्धित उनकी मातृभाषा में बातचीत को स्थान देकर उनके आत्मविश्वास को बढ़ावा दिया गया है। बच्चों को वृत्त की अवधारणा तक ले जाने के लिए मातृभाषा में बातचीत करते हुए उनकी परिवेशीय वस्तुओं को सीखने का साधन बनाया गया या यूँ कहें एक वातावरण का निर्माण उन बच्चों के अनुभवों से जोड़ते हुए किया गया है। यही अनुभव उनको सीखने के प्रति प्रेरित करते चले जा रहे थे। उनको सीखना बोझ नहीं लग रहा था और अन्त में बच्चे वृत्त और गोले में स्वयं अन्तर

कर पा रहे थे। द्विविमीय और त्रिविमीय आकृतियों को समझने में भी उन्होंने कठिनाई महसूस नहीं की। मैं भी अपने कक्षा शिक्षण में बच्चों के साथ मातृभाषा का प्रयोग करती हूँ। समझने में आसानी हो इसके लिए मेरा मानना है कि हमें अपनी कक्षा के बच्चों की मातृभाषा को समझने की भी पूरी कोशिश करनी चाहिए और उनकी भाषा को सीखने में भी रुचि लेनी चाहिए।

इन्दु पंवार, प्रधान अध्यापिका, राजकीय प्राथमिक विद्यालय, गिरगाँव, पौड़ी गढ़वाल, उत्तराखंड

आरम्भिक भाषा शिक्षण : बातचीत एवं चित्रों की उपयोगिता, हुमा नाज़ सिद्दीकी, अंक 10



लेख बहुत ही सारगर्भित लगा। मैं लेखिका की इस बात से सहमत हूँ कि बच्चा कम-से-कम एक भाषा तो जानता ही है, जिससे हम उसकी भाषा को महत्त्व देकर, बातचीत करके, उसके अनुभवों, विचारों को शामिल करते हुए भाषा शिक्षण की एक अच्छी शुरुआत कर सकते हैं। लेख में उदाहरणों द्वारा भाषा सम्बन्धी चुनौतियों को समझने के पश्चात उनपर काम करने हेतु बच्चों के साथ बातचीत, चित्र बनाना, अभिव्यक्त करना, कविता सुनाना, गाना व कविता चार्ट के साथ काम करना बहुत ही आनन्ददायक व सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में बेहतरीन प्रयास लगा। मैंने एक शिक्षक के तौर पर यह महसूस किया है कि हम में से अधिकतर बच्चों को समझने से अधिक उन्हें समझाने या सिखाने का प्रयास करते हैं। बच्चों को स्वतंत्र अभिव्यक्ति के मौक़े प्रदान करके एक शिक्षक अपनी शिक्षण प्रक्रिया को बेहतर बना सकता है। बच्चे जब बेझिझक होकर अपने अनुभवों एवं विचारों को सबके सम्मुख व्यक्त करने लगते हैं, वास्तव में भाषा का यही कार्य है।

पूनम भट्ट, प्रधानाध्यापिका, राजकीय प्राथमिक विद्यालय जिजली, चम्बा, टिहरी गढ़वाल, उत्तराखंड

कहानी और फ़िल्मों की जुगलबन्दी से मानवीय मूल्यों को सींचना, मंजु श्रीमाली, अंक 12

यह आलेख लेखिका द्वारा '13 नवम्बर - विश्व दयालुता दिवस' पर बच्चों के साथ दयालुता पर किए गए संवाद व गतिविधियों पर उनके अनुभवों का दस्तावेज़ है। जहाँ एक ओर बच्चे विभिन्न गतिविधियों में तो उत्साह से प्रतिभाग करते हैं वहीं दूसरी ओर लेखन गतिविधियों में प्रतिभाग करने से हिचकते हैं।

दयालुता दिवस पर कहानी लेखन की गतिविधि के दौरान कुछ बच्चों ने मौलिक कहानियों को भी लिपिबद्ध किया जो कि उनके अनुभवों पर आधारित थीं। कहानी की उपज शुरुआती दौर में अपने अनुभवों पर ही आधारित होती है। कहानी लेखन के इस आरम्भिक चरण में बच्चा केवल कहानी लिखना ही नहीं सीख रहा होते हैं अपितु लिखित भाषा भी सीख रहा होता है जिसमें शब्दों का निर्माण, वाक्यों की संरचना, घटना का प्रवाह, इत्यादि सभी शामिल होता है। लेख को आगे बढ़ाते हुए लेखिका इन अनुभवों के साथ फ़िल्म स्क्रीनिंग के अनुभवों को भी जोड़ती हैं व मूल्यों, विविधताओं और विविध सामाजिक विभेदों पर बच्चों व वयस्कों के अनुभवों को साझा करती हैं।

हालाँकि इस लेख का अन्त काफ़ी आशाओं के साथ किया गया है जहाँ पर लेखिका लिखती हैं कि मानवीय मूल्यों का सन्देश बच्चों तक पहुँचा और इन मानवीय व संवैधानिक मूल्यों का विकास बच्चों में होगा। किन्तु यदि इस प्रकार के संवादों की निरन्तरता बच्चों व वयस्कों के साथ न रही तो ये भी अर्थहीन हो जाते हैं।

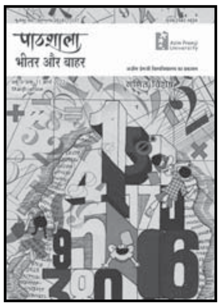
रजनीश, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, रुद्र प्रयाग, उत्तराखंड



शिक्षिका का कार्य काफ़ी सराहनीय लगा। हमारे देश की शिक्षा का उद्देश्य भले ही बच्चों को एक बेहतर नागरिक बनाना हो लेकिन सामाजिक बन्दिशों की वजह से पाठ्य सामग्री में ऐसी विषय वस्तु शामिल नहीं की जाती जिससे बच्चों में बेहतर नागरिक बनने के कौशल प्रस्थापित हो सकें। शिक्षिका ने जिन मुद्दों को छेड़ा है शायद ही कोई शिक्षक अपनी कक्षा में बात करता होगा। इसके लिए शिक्षिका बधाई की पात्र हैं। पूरा आलेख पढ़ने के बाद मेरा यही विचार बनता है कि मानवीय मूल्यों की समझ हमें बच्चों में प्राथमिक कक्षाओं से विकसित करने का प्रयास करना चाहिए। इसके कई तरीक़े हो सकते हैं। कुछेक तो शिक्षिका ने इस आलेख में भी सुझाए हैं। अगर हर शिक्षक अपनी कक्षाओं में बच्चों को ऐसी चुनिन्दा कहानियाँ सुनाए और चर्चा करे तो यक़ीनन बच्चों में यह मूल्य प्रस्थापित किए जा सकते हैं। शिक्षिका ने बताया कि 11वीं के छात्र / छात्राएँ कहानी लिखने में जद्दोजहद कर रहे थे, इससे साफ़ ज़ाहिर होता है कि उन्हें कभी भी कहानी सुनने या पढ़ने का मौक़ा ही नहीं मिला। इसलिए शिक्षक और स्कूल दोनों का यह दायित्व है कि वे बच्चों को मौक़े उपलब्ध करवाएँ।

निखिल मेश्राम, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, महेश्वर, मध्य प्रदेश

गणित से क्यूँ डरना, रजनी द्विवेदी, अंक 11



यह अंक हमें गणित सीखने-सिखाने की प्रक्रियाओं को सहजता से समझने की ओर ले जाता है। इसमें लिखे आलेख शिक्षकों के अनुभव और कक्षा में किए गए उनके कार्यों को प्रतिबिम्बित करते हैं।

रजनीजी का लेख बच्चों के साथ के उन छोटे-छोटे अनुभवों को दर्शाता है, जो आगे जाकर उनके गणित से डर का कारण बनते हैं। यह दर्शाता है कि किस तरह से घर और शाला, बच्चों में गणित के प्रति डर विकसित करने में भूमिका निभाती है। घर में अभिभावकों एवं स्कूल में शिक्षकों की एक महत्त्वपूर्ण भूमिका को दिखाया गया है, जहाँ वे बच्चों को उनके किए गए प्रश्नों का सही से उत्तर नहीं दे पाते, या फिर अधूरे उत्तर देते हैं।

लेखिका ने काफ़ी अच्छे उदाहरणों से यह दर्शाने की कोशिश की, कि बच्चे अपनी उम्र के अनुसार एवं अपने परिवेश से गणित की अवधारणाओं को सीखते हैं, बच्चे गणित की कुछ अवधारणाओं से जाने-अनजाने में परिचित होते हैं।

लेखिका ने बड़े ही रोचक व सुन्दर तरीक़े से उदाहरणों के द्वारा बच्चों के प्रारम्भिक जीवन में गणित की अवधारणाओं को दर्शाया है।

अंकित गौर, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, खुरई, ज़िला सागर, मध्य प्रदेश

गणित क्यों और कैसे, हृदय कान्त दीवान, अंक 11

इस लेख में लेखक और शिक्षकों के बीच गणित विषय को लेकर हुई बातचीत को प्रस्तुत किया गया है। उपरोक्त चर्चा के दौरान पहला सवाल आता है कि गणित से डर क्यों लगता है? इसका एक कारण तो यह सामने आता है कि समाज पहले से ही मानकर चलता है कि 'गणित मुश्किल विषय है', दूसरा 'गणित अमूर्त विषय' है। लेखक बताते हैं कि यह दोनों ही धारणाएँ

सही नहीं हैं। यह समझने के लिए लेखक हमें 3-4 वर्ष के बच्चे (जिनपर ज्याँ पियाजे ने अनेक प्रयोगों के माध्यम से सिद्ध करके दिखाया) के बारे में सोचने के लिए कहते हैं कि वह गणित के सन्दर्भ में क्या-क्या जानता होगा? ध्यान से सोचने पर हम महसूस करते हैं कि उसे गणित में बहुत कुछ आता है, मसलन, कम-ज्यादा, दूर-पास, नीचा-ऊँचा, वर्गीकरण, इत्यादि। हमारे दैनिक जीवन में भी परिमाण (quantity) की कल्पना के लिए गणित संख्या का ढाँचा देता है जो मानव विकास के लिए बहुत ज़रूरी है, इसलिए हम कह सकते हैं कि गणित का उपयोग काफ़ी मूर्त है जो हमें हर समय अपने परिवेश में देखने को मिलता है। अतः यह कहना ठीक नहीं लगता कि गणित अमूर्त है या मुश्किल।

फिर सवाल आता है कि गणित क्यों सिखाएँ? लेखक कहते हैं कि गणित इसलिए सिखाएँ क्योंकि ये हमारे दिमाग़ को तीव्र करता है, तार्किक ढंग से सोचने के लिए तैयार करता है और हमारी गणितीय क्षमता का विकास करता है जिसमें स्थान, संख्याओं और तार्किक सम्बन्धों की बेहतर समझ शामिल है। गणित को कैसे रुचिकर बनाया जाए जिससे उसमें मज़ा आए, इसपर बात करते हुए लेखक कहते हैं कि हमें ऐसी परिस्थितियाँ निर्मित करनी होंगी जो खुली हों, जिनमें बच्चा नए सवाल बनाए, जो अपने पूर्व ज्ञान को नई परिस्थितियों में इस्तेमाल कर सके और ख़ुद अपना रास्ता तय करे कि आगे क्या किया जाना चाहिए। आलेख का अन्त गाँधीजी द्वारा गणित के सन्दर्भ में कहे गए शब्दों से करना चाहूँगा, "आप भाषा और गणित अच्छे-से पढ़ा दें, बाक़ी ज्ञान तो बच्चा ख़ुद हासिल कर लेगा।"

अजय सैनी, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, खुरई, ज़िला सागर, मध्य प्रदेश

सोचने और सक्रिय होने का तरीक़ा है विज्ञान, सुरभि चावला, अंक 12



यह लेख 3 कक्षाओं के अवलोकन के आधार पर लिखा गया है। आज विज्ञान की कक्षाएँ विज्ञान सीखने-सिखाने के उद्देश्य से बहुत दूर हो चुकी हैं। विज्ञान पाठ्यपुस्तकों तक सीमित होकर रह गया है। वैज्ञानिक तथ्यों, जानकारियों एवं प्रक्रियाओं का आदान-प्रदान करना विज्ञान सीखना नहीं हो सकता। लेखिका मानती हैं कि बच्चे जन्म से जिज्ञासु होते हैं। वे जानने, देखने, सुनने, अवलोकन करने की प्राकृतिक क्षमता के साथ किसी भी चीज़ का परीक्षण करते हैं, चीज़ों को छूना, पटकना, तोड़ना, खोलना, लुढ़काना, घिसना, चखना इस तरह के तमाम गुण हैं जो बाल मन में कई प्रश्न पैदा कर देते हैं, और यही प्रश्न विज्ञान सीखने का आधार बन सकते हैं। लेकिन अवलोकन के लिए चुनी गई कक्षाओं में यह नहीं हो रहा है। सीखना अपने सवालों के जवाब तलाशने की प्रक्रिया के साथ-साथ आनन्दित करने की प्रक्रिया भी है। वर्गीकरण करना, तुलना करना, जो कुछ समझा उसको अभिव्यक्त करना, तर्क करना एवं सामान्यीकरण करना जैसे गुण नैसर्गिक रूप से वैज्ञानिक चेतना का विकास करने सहायक हो सकते हैं। इसके लिए बच्चों को अवलोकन करने, तुलना करने और गुणों की पहचान करने के अवसर मिलने चाहिए ताकि वे विज्ञान सीखने की प्रक्रिया का हिस्सा बन सकें।

करण सिंह, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, रुद्र प्रयाग, उत्तराखंड

कोविड महामारी के बाद गणित शिक्षण की शुरुआती प्रक्रिया, गुलशन यादव, अंक 11

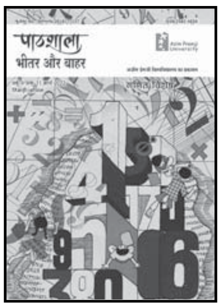
लेखक ने अपने लेख में क्रमबद्ध तरीक़े से इसका बारीक़ी से वर्णन किया है कि शिक्षण प्रक्रिया किस प्रकार चलनी चाहिए। बेसलाइन टेस्ट, शिक्षक द्वारा बनाए गए कुछ प्रश्न और कक्षा-कक्ष में

बातचीत द्वारा सर्वप्रथम बच्चों के स्तर का अन्दाज़ा लगाना, तत्पश्चात किस बच्चे ने किस प्रकार की ग़लतियाँ सवालों को हल करने में की हैं उसके आधार पर उनकी अकादमिक आवश्यकता को समझना, उसके अनुरूप कार्य योजना बनाना और बच्चों के आकलन के लिए पोर्टफ़ोलियो बनाकर उनके कार्य एवं प्रगति की समीक्षा करते हुए आगे का रास्ता तय करना। इन सभी बातों पर लेख में काफ़ी विस्तार से उदाहरण के माध्यम से चर्चा की गई है। वैसे तो पूरा लेख ही अपने-आप में काफ़ी उम्दा है, पर मुझे कुछ बातें इसमें बहुत महत्त्वपूर्ण लगीं। पहली यह कि यदि बच्चा किसी सवाल को हल नहीं कर पाया या उसका उत्तर ग़लत है तो ऐसे में शिक्षक इस बात पर ग़ौर न करते हुए कि उत्तर ग़लत है बल्कि उसने क्या प्रक्रिया अपनाई और उस प्रक्रिया में उससे कहाँ ग़लती हुई, उसपर बच्चे से चर्चा करें और उसे सही प्रक्रिया से अवगत कराएँ। ऐसे में बच्चे को कॉन्सेप्ट समझने में मदद मिलती है।

दूसरा, बच्चों की समझ के स्तर अनुसार समूह बनाकर कार्य करना। शिक्षकों की स्कूलों में कमी को ध्यान में रखते हुए एमजीएमएल (multi–grade multi–level learning) के द्वारा किस प्रकार शिक्षण किया जा सकता है, इसपर भी लेखक ने बात रखी है। इस सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में शिक्षक को इस बात का भी विशेष तौर पर ख़्याल रखने को कहा गया है कि बच्चे का आत्मविश्वास बना रहे, और उसे यह न लगे कि वह कम जानता है और दूसरे ज़्यादा। लेख में सुझाई गई गणित की शिक्षण प्रक्रिया का इस्तेमाल भाषा शिक्षण में भी किया जा सकता है। वर्तमान परिदृश्य में हर शिक्षक को यह लेख एक बार ज़रूर पढ़ना चाहिए।

प्राची अग्रवाल, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, खुरई, ज़िला सागर, मध्य प्रदेश

उत्तर खोजना बनाम प्रश्न बनाना, सत्य नारायण, अंक 11



लेख में दिए गए चित्रों में बच्चे प्रश्न के चिह्न (?) पर पंख लगाकर उड़ रहे हैं, चिन्तन कर रहे हैं, कुछ प्रश्न चिह्न से लटके हैं, कुछ झूल रहे हैं और इन सब चित्रों के बीच शिक्षक बच्चों को देख रहा है एवं उनकी प्रतिक्रियाओं का अवलोकन कर रहा है, यह चित्रों का चुनाव ही है जिसने मुझे इस लेख को पढ़ने की ओर आकर्षित किया। स्कूल की शिक्षण प्रक्रिया में इस प्रकार की अनेक सम्भावनाएँ हैं जहाँ शिक्षक बच्चों को सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में सीधेतौर पर शामिल कर सकते हैं, जिससे बच्चे केवल गृहकार्य ही न करते रहें बल्कि कुछ स्वयं से चुनौतियाँ लें और पूरी लगन के साथ कार्य करें। इस लेख में बच्चों को सहज माहौल और उनके आत्मविश्वास को बढ़ाकर प्रश्न बनाने की चुनौती दी गई और उनको जब बोला गया कि "आप लोग एक ही पाठ से 20 से 100 प्रश्न बना सकते हैं" तो वे अचम्भित हुए, पर धीरे-धीरे उनका आत्मविश्वास मज़बूत होता गया और वह प्रश्न बनाने की कला में निपुण हो गए। लेख के अन्त में लेखक हमारे लिए यह सवाल छोड़ जाते हैं कि किस प्रकार की गतिविधियों से बच्चों में स्वयं सीखने के कौशल का विकास होगा, यह हमें लगातार खोजनी होंगी और समय व परिस्थिति के अनुसार अपडेट करते रहना होगा।

मनीषा अहिरवार, रिसोर्स पर्सन, खुरई, ज़िला सागर, मध्य प्रदेश

प्राथमिक स्तर से गणितीय सोच का विकास, तान्या सक्सेना, अंक 11

उक्त लेख में गणित पढ़ाने के पीछे के उद्देश्य और लक्ष्य दृष्टिगत होते हैं। प्राथमिक स्तर पर बच्चे की चिन्तन प्रक्रिया को गणितीय बनाया जा सके, इस बारे में विस्तार से चर्चा की गई

है। लेख में बताया गया है कि कैसे एक ओर तो बच्चे के वास्तविक जीवन में गणितीय विचारों का जुड़ाव हो सकता है और दूसरी ओर बच्चा कैसे गणित का आनन्द ले सकता है।

इसमें बताया गया है कि गणित को सहज और क्रमवार ढंग से पढ़ाया जाना चाहिए, यह बहुत आवश्यक है क्योंकि विद्यार्थियों का पूर्व ज्ञान ही नए ज्ञान को सीखने में सहायक होता है। नई-नई अवधारणाएँ सीखते समय बच्चा पूर्व अवधारणाओं को ध्यान में रखता है। लेख में बताया गया है कि बच्चे संख्याओं के साथ खेलें, उनके स्वरूप, पैटर्न, आपसी सम्बन्धों को समझें और वास्तविक जीवन में उनका उपयोग करना सीख सकें। इस लेख में तार्किक क्षमता के बारे में विस्तार से समझाया गया है, जो बहुत महत्त्वपूर्ण है। उदाहरणार्थ, क़ुतुब मीनार के उदाहरण से बच्चों को लम्बाई का अन्दाज़ा लगाना और कमरे एवं क़ुतुब मीनार की ऊँचाई की तुलना करना सिखाने की कोशिश की गई है। लेख में बताया गया है कि कक्षा-कक्ष में तार्किक चर्चा और सवालों का एक ऐसा माहौल स्थापित किया जाए जिससे विद्यार्थी रुचि लें और क्रियाकलाप पर प्रतिक्रिया दें, तभी प्राथमिक स्तर पर विद्यार्थियों की गणितीय सोच का विकास सम्भव है।

लक्ष्मीकांत तिवारी, रिसोर्स पर्सन, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, खुरई, ज़िला सागर, मध्य प्रदेश

लेखकों का आग्रह

पाठकों से प्राप्त सुझाव के आधार पर *पाठशाला भीतर और बाहर* में छपने वाले लेखों की प्रकृति, स्वरूप और प्रस्तुति में कुछ परिवर्तन किए गए हैं। प्रयास है कि पत्रिका ज़मीनी स्तर पर काम कर रहे साथियों के लिए अपने अनुभवों को दर्ज करने, उनको विस्तार देने और गहराई देने के लिए एक उपयुक्त मंच बने और साथ ही इन अनुभवों को साझा करने का भी। इसी तरह यह ज़मीनी स्तर पर होने वाले कार्य की दृष्टि से अर्थपूर्ण व कार्य में मददगार भी बन पाएगी। और व्यापक पाठक वर्ग सहित आप व हमारे शिक्षक साथी इसे पढ़ेंगे और इसका अधिकाधिक उपयोग कर पाएँगे।

आपसे आग्रह है कि आप अनुभवों को दर्ज कर पत्रिका में छपने के लिए भेजें। आप स्कूल में, कक्षा में, और अलग–अलग मंचों पर शिक्षकों के साथ किए गए काम के अनुभवों को भेज सकते हैं। आपके साथी शिक्षक भी उनके द्वारा किए गए काम के अनुभवों को भेज सकते हैं। आपके द्वारा भेजे गए लेख बच्चों के सीखने–सिखाने से सम्बन्धित हो सकते हैं, जैसे– विभिन्न विषयों या प्रकरणों को सीखने–सिखाने के अनुभव या फिर शिक्षकों के साथ अन्तर्क्रिया के नए तौर–तरीक़ों पर केन्द्रित या फिर किसी महत्त्वपूर्ण या उल्लेखनीय संवाद के बारे में जो औरों के लिए भी उपयोगी हो। इनके और बहुत–से उदाहरण हो सकते हैं। जैसे– बच्चों के साथ काम के सन्दर्भ में गणित, विज्ञान, भाषा, सामाजिक अध्ययन, आदि किसी भी विषय की किसी भी कक्षा के अनुभव। ये अनुभव किसी अवधारणा को बच्चों को सिखाने, उन्हें गतिविधियाँ कराने या उनके साथ खेल खेलने आदि के हो सकते हैं।

आप, स्कूल और शिक्षकों के साथ (इसमें एंगेज्ड शिक्षक भी शामिल हैं) जो काम कर रहे हैं, उससे सम्बन्धित लेख भी साझा कर सकते हैं। इसमें आपने जो किया उसके साथ–साथ आप अपने काम में किस ख़ास तरह से आगे बढ़े और वह आपने क्या सोचकर किया, इस विचार को शामिल कर सकते हैं। इस दौरान आप अपने काम के सकारात्मक नतीजे व उसमें दिखने वाले गैप भी बताएँ, जैसे– बाल सभा या बाल शोध मेलों में कुछ परिवर्तन किया, तो वह क्या सोचकर किया, उसका क्या नतीजा निकला और बेहतर करने के लिए उसमें और क्या–क्या किया जा सकता है, आदि? इसी तरह कक्षा में बच्चों को चित्रकला करवाने, कहानी सुनाने या किसी नाटक में भाग लिया, तो उसके बारे में क्या अनुभव रहे, यह बता सकते हैं। गणित का एक उदाहरण शिक्षण सामग्री जैसे– गिनमाला का प्रयोग करके गिनती सिखाने का हो सकता है। इसी तरह वालंटरी टीचर फ़ोरम, टीचर लर्निंग सेंटर, समर–विंटर कैम्प के शैक्षिक प्रयासों आदि के बारे में भी मननशील लेख हो सकते हैं। ये लेख पाठक को यह समझने में मदद करें कि उनमें क्या प्रयास था, किस परिस्थिति में उसे सोचा गया, कैसे किया गया, क्या हो पाया, क्या कमी रही, क्या सीखा और आगे के लिए आपके समूह के लिए और पाठकों के लिए उसके क्या निहितार्थ हैं?

इसी तरह, शिक्षकों के साथ प्रशिक्षण के दौरान, वालंटरी टीचर फ़ोरम में कार्य के दौरान, टीचर लर्निंग सेंटर पर हो रहे प्रयासों में, या उनके साथ सहकारी शिक्षण के दौरान हुए अनुभवों को मननशील व समालोचनात्मक दृष्टिकोण से लिखकर भेजें तो अच्छा रहेगा। इसी तरह बच्चों अथवा शिक्षकों के साथ कक्षा के बाहर हुए सार्थक अनुभव भी आप मननशील ढंग से लिख सकते हैं।

लेखों के विषय और विषयवस्तु ऐसी हो जिससे फ़ील्ड में कार्य करने वाले साथियों और शिक्षकों को वैचारिक मदद मिलती हो और उनका दक्षता संवर्धन होता हो। लेख ऐसे हों जो स्कूल व कक्षा में पढ़ने–पढ़ाने के तरीक़ों व अन्य गतिविधियों में शिक्षकों व फ़ाउण्डेशन के साथियों द्वारा इस्तेमाल किए जा सकें। साथ ही ऐसे लेख भी हों जिनसे विविध विषयों एवं उनमें बुनी अवधारणाओं को पढ़ाने

में मदद मिले और उनकी भाषा व विषय सामग्री अधिक–से–अधिक सदस्यों को आसानी से समझ में आने वाली हो।

यदि लेख में दिए गए किसी विवरण, चर्चा अथवा व्याख्या से सम्बन्धित किसी तर्क अथवा प्रमाण के लिए किसी पुस्तक, जरनल या वेब स्रोत से कोई सामग्री ली गई हो तो उसका उल्लेख ज़रूर करें। आप जो भी सन्दर्भ सामग्री लें उससे लेख को अर्थपूर्ण, तार्किक और गुणवत्तापूर्ण बनाने में मदद मिले।

इसके अलावा आप शिक्षा से सम्बन्धित किसी पुस्तक, फ़िल्म अथवा अन्य शिक्षण सामग्री के बारे में भी लिख सकते हैं, मसलन उनका परिचय, समीक्षा अथवा विश्लेषण।

आशा करते हैं कि आपके यह लेखकीय अनुभव ठोस एवं यथार्थपरक होंगे। उनमें कुछ ऐसा ज़रूर हो जो पाठक को रुचिपूर्ण व सार्थक लगे।

लेखकों को अपने लेखन के सन्दर्भ में किसी भी तरह के सहयोग की आवश्यकता महसूस होती है तो वे इसके लिए सम्पर्क कर सकते हैं। उन्हें सम्पादक मण्डल के सदस्यों द्वारा आवश्यक सहयोग और सुझाव दिए जाएँगे। उम्मीद है कि *पाठशाला भीतर और बाहर* का यह तेरहवाँ अंक आपको अच्छा लगेगा और आप इसके अगले अंकों के लिए ज़रूर लिखेंगे। पत्रिका के इस अंक पर आपकी टिप्पणियों व सुझावों का हमें हमेशा की तरह इन्तज़ार रहेगा।

मुद्रक तथा प्रकाशक मनोज पी. द्वारा अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन फॉर डेवलपमेंट के लिए अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, प्लॉट नं. 163-164, त्रिलंगा कोऑपरेटिव सोसाइटी, E–8 एक्सटेंशन, त्रिलंगा भोपाल, मध्यप्रदेश 462039 की ओर से प्रकाशित एवं गणेश ग्राफ़िक्स, 26-बी, देशबंधु परिसर, प्रेस काम्प्लेक्स, एम.पी. नगर, जोन-1 भोपाल द्वारा मुद्रित।

सम्पादक : गुरबचन सिंह

Azim Premji University

Anuvada Sampada

अनुवाद सम्पदा

अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय की अनुवाद रिपॉज़ेटरी

अवधारणाओं तथा विचारों के साथ गहराई से जुड़ने हेतु विद्यार्थियों और शिक्षकों के लिए भारतीय भाषाओं में उच्च गुणवत्ता के 2000 से अधिक शैक्षणिक संसाधनों का भण्डार।





भारतीय भाषाओं में शैक्षणिक संसाधनों के लिए निशुल्क, ओपन-एक्सेस पोर्टल

- पुस्तकें और पुस्तक अंश
- अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय के प्रकाशनों से लेख
- विभिन्न संगोष्ठियों और रीडरों से चुनिन्दा लेख

अनुवाद सम्पदा के लिए लिंक :

https://anuvadasampada.azimpremjiuniversity.edu.in/

अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय की अन्य पत्रिकाएँ

